ख़ानदानी ख़ुशियाँ
कैसे हासिल की जाएँ?

(फ़ैमिली काउंसलिंग गाइड बुक)

डॉ॰ नाज़नीन सआदत

अनुवाद

ज़ाहिद ख़ालिद हामिदी

विषय-सूची

1. दो शब्द 9
2. भूमिका 13
3. वैवाहिक जीवन 17
★ ख़ुशगवार शादीशुदा ज़िन्दगी 17
(1) एक-दूसरे को सुनें 20
(2) मुहब्बत का इज़हार और तारीफ़ करें 21
(3) अहमियत का एहसास दिलाएँ 22
(4) अपनी उम्मीदें और आरज़ूएँ साफ़-साफ़ बताएँ 23
(5) ग़लतियाँ क़बूल करें, माफ़ी चाहें और ख़ुद को बदलें 25
(6) ग़ुस्से को कंट्रोल करें और ज़बान को क़ाबू में रखें 26
(7) कुछ साझा दिलचस्पियाँ और काम अपनाएँ 27
(8) एक-दूसरे के लिए दुआ करें 27
★ शादी से पहले काउंसलिंग 29
★ शादीशुदा ज़िन्दगी के झगड़े और काउंसलिंग 41
केस नम्बर-1 47
केस नम्बर-2 48
4. ख़ानदान 53
★ नई दुल्हन का स्वागत 53
★ बुज़ुर्गों के नफ़सियाती मसले 59
बुज़ुर्गों के मसले 61
नौजवानों का रोल 63
बुज़ुर्गों का अपना रोल 66
★ मनफ़ी (नकारात्मक) किरदार से ख़ुद को बचाएँ 70
औरतें और समाजी रिवायतें 73

रिश्तों की बेहतरी और औरतें 78
5. बच्चे और उनकी तरबियत 81
★ हम्ल के मरहले और उसके नफ़सियाती तक़ाज़े 81
हम्ल के दौरान होनेवाली नफ़सियाती तब्दीली 82
पहले तीन महीने 84
चौथे से छठा महीना 84
सातवें से नवाँ महीना 84
माँ की नफ़सियाती सेहत का बच्चे पर असर 85
हम्ल के ताल्लुक़ से मुसबत (सकारात्मक) रवैया 85
हामिला (गर्भवती) औरत के साथ अच्छा रवैया 87
हामिला (गर्भवती) औरत और पाकीज़ा दीनी माहौल 89
★ बच्चे क्या चाहते हैं? 92
बच्चों का अपने लिए फ़ुरसत का कुछ वक़्त 92
खेल के वक़्त और तख़लीक़ी (रचनात्मक) खेल 93
मेहरबानी करके मेरी सुनिए 95
माँ-बाप के झगड़े 96
मुहब्बत का इज़हार भी करें 96
हमें अपने ख़ाबों को पूरा करने का मौक़ा दीजिए 98
★ बच्चा खाना क्यों नहीं खाता? 101
बच्चे के खाना न खाने की वजहें 101
कुछ करने के काम 103
(1) अपने हाथ से खाने का मौक़ा दें 103
(2) दस्तरख़ान पर साथ बिठाएँ 104
(3) बच्चे की पसन्द का लिहाज़ करें 104
(4) कई-कई वक़्त खिलाएँ 106
बच्चे के खाने की क़िस्में 107
सिर्फ़ खिलाना नहीं खाना सिखाना भी मक़सद हो 107
★ नौउम्र लड़कियों के मसले 109

(1) जिस्मानी बनावट 111
(2) ख़ुद-एतिमादी और इज़्ज़ते-नफ़्स 113
(3) शर्म व हया और इस्लामी रहन-सहन 114
(4) दोस्तियाँ और इंटरनेट 116
(5) सेहतमन्द काम 117
(6) दोस्त और रोल मॉडल बनिए 118
★ नौउम्र लड़कों के मसले 120
नौउम्रों की तरबियत 120
(1) नौउम्री की नफ़सियात को समझिए 123
(2) बच्चों के दोस्त बनिए 124
(3) यह समझ हो कि किन बातों से रोकना है और किन बातों को नज़रन्दाज़ करना है 126
(4) उम्मीदों को वाज़ेह रखिए 127
(5) बच्चे के दोस्तों को जानिए और उनके दोस्त बनिए 128
(6) बच्चे की प्राइवेसी के एहतिराम और उसपर निगाह रखने में मुनासिब बैलेंस रखिए 129
ख़तरे की अलामतें 130
ख़ास तवज्जोह चाहनेवाले काम 131
(1) हया व शर्म 131
(2) लड़के-लड़कियों का आपस में ताल्लुक़ 131
(3) वक़्त का बेहतरीन इस्तेमाल 132
(4) अच्छी सोच 132
(5) ख़ुद-एतिमादी 132
(6) तवज्जोह (Focus) 132
(7) ख़ुद का एहतिराम 133
(8) अच्छी आदतें 133
★ माँ-बाप से बद-सुलूकी 134
इस रुझान की अलामतें 135

इस रुझान की वजहें क्या हैं? 136
इस रुझान की रोकथाम और इलाज 140
बच्चों पर तलाक़ के असरात और उनकी हिफ़ाज़त 144
अलग-अलग उम्र के बच्चों पर तलाक़ के असरात 147
बुरे असर से बचाने की तदबीरें 149
6. काउंसलिंग 154
★ काउंसलिंग क्या, क्यों और कैसे? 154
नफ़सियाती बीमारियाँ क्या हैं? 155
(1) सेहत की ख़राबी या बीमारी 156
(2) नफ़सियाती बीमारी 157
(3) बेहतरीन ताल्लुक़ात के लिए 157
(4) लत (Addiction) 157
(5) किसी अपने को खोने का ग़म (Bereavement) 157
(6) सताने का अमल (Bullying) 158
काउंसलिंग क्या है? 158
(1) साइकोथेरेपी 158
(2) काउंसलिंग 159
(3) कोचिंग 159
काउंसलिंग कैसे की जाती है? 160
आमने-सामने (Face to Face) काउंसलिंग 162
टेलीकाउंसलिंग (Telecounselling) 162
ऑनलाइन (Online) सेशन 163
नफ़सियाती मसलों के हल के मुख़्तलिफ़ अप्रोच और इस्लाम 163
★ फ़ैमली काउंसलिंग और झगड़ों के हल में औरत का रोल 167
काउंसलिंग की ज़रूरत कब पेश आती है? 169
बच्चों की काउंसलिंग 170
मिया-बीवी के झगड़ों में काउंसलिंग 171
परेशानियों और मसलों में काउंसलिंग 172

काउंसलिंग नहीं कोचिंग 173
★ नफ़सियाती बीमारियाँ और उनकी वजहें 175
(1) आसाबी नशो-नुमा से मुताल्लिक़ बीमारियाँ
(Neurodevelopmental Disorders) 177
—ज़ेहन की कमी (Intellectual Disability) 177
—मुवासलाती बीमारियाँ (Communication Disorders) 177
—ऑटिज़्म (Autism) 178
—ए॰डी॰एच॰डी॰
(Attention Deficit Hyperactivity Disorders) 178
(2) दो क़ुतबियत (Bipolar) और उससे मुताल्लिक़ बीमारियाँ 178
(3) बेचैनी (Anxiety) और उसके मुताल्लिक़ बीमारियाँ 179
(4) सदमा (Trauma) या तनाव (Stress) से मुताल्लिक़ बीमारियाँ 180
(5) लाताल्लुक़ी से मुताल्लिक़ बीमारियाँ (Dissociative Disorders) 180
(6) ख़ुराक से मुताल्लिक़ बीमारियाँ (Eating Disorders) 181
(7) नींद से मुताल्लिक़ बीमारियाँ (Sleep Disorders) 182
(8) तल या नशा (Addiction) 183
(9) आसाबी इदराकी बीमारियाँ (Neurocognitive Disorders) 183
(10) शख़्सियत के मुताल्लिक़ बीमारियाँ (Personality Disorders) 184
नफ़सियाती बीमारियों की वजहें 184
★ कैरियर काउंसलिंग 186
कैरियर काउंसलिंग की अहमियत 187
कैरियर गाइडेंस कैसे मददगार साबित होता है? 187
हक़ीक़ी दिलचस्पी (Core Interest) 188
ख़ानदानी असरात (Family Influence) 188
लियाक़त (Aptitude) 189
शख़्सियत (Personality) 189
कैरियर काउंसलिंग का तरीक़ा 189
कैरियर काउंसलिंग और नफ़सियाती मामले और मसले 190
कैरियर गाइडेंस में माँ-बाप का रोल 192
कैरियर काउंसलिंग के दौरान बच्चे का रोल 194

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

(अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान, निहायत रह्मवाला है।)

दो शब्द

समाज में कई ख़ानदान (परिवार) होते हैं। अगर ख़ानदान ख़ुशगवार होगा, उसके लोग मिल-जुलकर हँसी-ख़ुशी ज़िन्दगी गुज़ारेंगे और उनके बीच मुहब्बत और प्यार पाया जाएगा तो उसके असरात (प्रभाव) समाज पर पड़ेंगे और एक ख़ुशगवार, पाकीज़ा और मिसाली समाज क़ायम होगा, लेकिन अगर ख़ानदान बिखरा हुआ होगा, उसके लोगों के दिल एक-दूसरे से कटे-कटे होंगे और उनके बीच मुहब्बत व प्यार नहीं होगा तो उसके असरात भी समाज पर पड़ेंगे और वह फ़ितना व फ़साद, भ्रष्टाचार और अनारकी (अराजकता) का शिकार हो जाएगा।

मौजूदा दौर में समाज के बिगाड़ और बिखराव की वजह यह है कि ख़ानदान के ताने-बाने बिखर रहे हैं और ख़ानदान के लोगों के बीच गर्मजोशी बाक़ी नहीं रही है। मियाँ-बीवी के बीच प्यार-मुहब्बत के बजाए शिकायतें पैदा हो रही हैं और एक-दूसरे के बीच नफ़रत बढ़ रही है। ससुराली रिश्तेदारों में बेहतर सुलूक की कमी है। सास-ससुर घर में आनेवाली नई बहू का प्यार-मुहब्बत से स्वागत नहीं करते और बहू भी सास-ससुर का सम्मान नहीं करती। शौहर अपने ससुराल के क़रीबी रिश्तेदारों के साथ इज़्ज़त व एहतिराम का मामला नहीं करता और बीवी के ताल्लुक़ात भी ससुराल के दूसरे लोगों के साथ अच्छे नहीं रहते। माँ-बाप औलाद की सही परवरिश और दीनी व अख़लाक़ी तरबियत से ग़ाफ़िल रहते हैं और औलाद भी माँ-बाप के बुढ़ापे का सहारा नहीं बनती, बल्कि अपनी ही दुनिया में मस्त रहती है। ख़ानदान के तमाम लोगों पर ख़ुद-ग़रज़ी हावी रहती है। हर आदमी की नज़र अपने हुक़ूक़ (अधिकारों) पर रहती है, दूसरों के जो हुक़ूक़ उनपर लागू होते हैं उनको अदा करने की उसे बिलकुल चिन्ता नहीं होती। इस सूरतेहाल ने

ख़ानदान की मज़बूत बुनियादों को हिलाकर रख दिया है जिससे उसकी मज़बूती और पाकीज़गी बाक़ी नहीं रही। उसके असरात समाज पर पड़े हैं और वह फ़ितना व फ़साद, अख़लाक़ी गिरावट, हुक़ूक़ की अनदेखी और बुराइयों का केन्द्र बन गया है।

आमतौर पर ख़ानदान के लोगों के बीच और मतभेदों की शुरुआत मामूली बातों से होती है। मिज़ाजों के मतभेद को बरदाश्त न किया जाए तो वे बढ़कर झगड़े की सूरत इख़्तियार कर लेते हैं। यहाँ तक कि साथ में गुज़ारा मुमकिन नहीं रह जाता और बात अलग होने तक जा पहुँचती है। इसलिए अक़्लमन्दी यह है कि शुरुआत ही में मतभेद के साथ मिल-जुलकर रहने के आदाब सिखाए जाएँ। ख़ानदानी ज़िन्दगी में क़ुरआन ने इसी की तालीम व नसीहत की है। वह शौहर को हुक्म देता है कि बीवी के साथ भले तरीक़े से पेश आए और उसका कोई रवैया उसे नागवार गुज़रे तो उससे बद-दिल न हो जाए, बल्कि उसकी ख़ूबियों पर नज़र रखे, (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-19)। वह बीवी को ताकीद करता है कि उसका रवैया हमेशा शौहर की इताअत का होना चाहिए। वह माँ-बाप को हुक्म देता है कि औलाद की सही तरीक़े से परवरिश और दीनी व अख़लाक़ी तरबियत पर ध्यान दें और औलाद को पाबन्द करता है कि उनका रवैया माँ-बाप के साथ हमेशा फ़रमाँबरदारी और ख़िदमत का होना चाहिए। उसने रिश्ता जोड़ने पर बहुत ज़ोर दिया है और रिश्तों का लिहाज़ रखने की ताकीद की है। मतभेद अगर सिर उभारने लगें तो क़ुरआन की तालीम (शिक्षा) यह है कि पहले मामले से ताल्लुक़ रखनेवाले लोग ख़ुद ही हल करने की कोशिश करें। लेकिन अगर वे इसमें कामयाब न हो सकें तो दूसरे लोग अपना रोल निभाएँ। क़ुरआन सुलह-सफ़ाई को पसन्द करता है और आपसी मतभेदों को पसन्द नहीं करता। उसके नज़दीक मियाँ-बीवी के बीच रंजिश और नफ़रत को दूर करने में ख़ानदान के बड़ों को अपना बेहतर रोल अदा करना चाहिए।

(क़ुरआन, सूरा-3 निसा, आयत-35)

अज़दवाजी (वैवाहिक) और पारिवारिक मसलों और उलझनों को हल करने, ख़ानदान के लोगों के आपसी मतभेदों को दूर करने और उनके बीच

मेल-जोल और ख़ुशगवारी पैदा करने की कोशिश का नाम 'काउंसलिंग' है। यह आज के दौर का एक अहम फ़न (कला) बन गया है। इसके अलग-अलग दर्जों (स्तरों) के कोर्स तैयार किए गए हैं, जिनसे गुज़रने के बाद सर्टिफ़िकेट और डिगरियाँ दी जाती हैं। उलझनों और लड़ाई-झगड़ों के शिकार (विवादित) लोग माहिर काउंसलर को अपने मसले बताते हैं और उसका हल पाते हैं।

काउंसलिंग के विषय पर बहुत कम किताबें पाई जाती हैं। उर्दू/हिन्दी में तो ऐसी किताबें मौजूद ही नहीं हैं जिनमें मियाँ-बीवी और ख़ानदानी (पारिवारिक) ज़िन्दगी के मसलों के हल के सिलसिले में तकनीकी बुनियादों पर रहनुमाई की गई हो। ज़रूरत है कि इस कमी को दूर किया जाए और काउंसलिंग के विषय पर आसान भाषा में फ़ायदेमन्द किताबें छापी जाएँ। यह किताब इसी ज़रूरत को पूरा करने की एक क़ाबिले-क़द्र कोशिश है।

इस किताब की लेखिका डॉ॰ नाज़नीन सआदत साहिबा ने यूँ तो अपनी पढ़ाई-लिखाई साइंस (विज्ञान) से की है, उन्होंने एस॰आर॰टी॰एम॰ यूनिवर्सिटी नांदेड़, महाराष्ट्र से पर्यावरण विज्ञान (Environmental Science) में M.Sc. और Ph.D की है। इसके बाद इसी विषय को 2008 ई॰ से पढ़ा (अध्यापन कर) रही हैं और मज़मून (लेख) और किताबें लिखने का काम भी किया है। लेकिन उनको ख़ास दिलचस्पी काउंसलिंग से है। इसी दिलचस्पी की वजह से उन्होंने इसके कई कोर्स किए हैं और अब अमली तौर से इस मैदान (क्षेत्र) में लगी हुई हैं और लोगों की काउंसलिंग कर रही हैं। इस विषय पर उर्दू में लिखना उन्होंने कुछ साल पहले से शुरू किया था। उनके लेख 'हिजाबे-इस्लामी' (नई दिल्ली) नामी मैगज़ीन में छपते रहे हैं। उन ही लेखों को अब किताबी रूप में छापा जा रहा है।

इस किताब को चार अध्याय में बाँटा गया है। पहले अध्याय में उन विषयों को रखा गया है जो शादीशुदा ज़िन्दगी के बारे में हैं। उनमें शादी से पहले की उलझनों को दूर किया गया है। शादीशुदा ज़िन्दगी को ख़ुशगवार कैसे बनाया जाए? इसकी तदबीरें बताई गई हैं, शौहर-बीवी के बीच पैदा होनेवाले झगड़े कैसे दूर किए जाएँ? इस बारे में बताया गया है। दूसरे अध

याय में ख़ानदान के लोगों के बीच रिश्तों की बारीकियों पर बात की गई है, उनके नफ़सियाती (मनोवैज्ञानिक) मसले सुलझाए गए हैं और लड़ाई-झगड़े होने पर उनको दूर करने के उपाय बताए गए हैं। तीसरे अध्याय का शीर्षक 'बच्चों की तरबियत' है। इसमें हम्ल (गर्भ) के समय औरतों की नफ़सियात, छोटे बच्चों की उलझनों, बड़े लड़के और लड़कियों के मसले और बच्चों की अपने माँ-बाप से बदसुलूकी की वजहों से बहस की गई है। चौथा अध्याय काउंसलिंग पर है। इसमें काउंसलिंग के विषय के बारे में बताने के साथ-साथ उसकी ज़रूरत व अहमियत और तरीक़ा बताया गया है और कैरियर काउंसलिंग पर भी रौशनी डाली गई है।

यह किताब काउंसलिंग के विषय पर एक क़ीमती पेशकश है। उम्मीद है, काउंसलिंग के क्षेत्र में काम करनेवाले मर्द, औरतें और इस विषय से दिलचस्पी रखनेवाले आम लोग इससे फ़ायदा उठाएँगे! अल्लाह लेखिका को और ज़्यादा ख़िदमत की तौफ़ीक़ दे!! आमीन!!!

–मुहम्मद रज़ीउल-इस्लाम नदवी
सेक्रेट्री शोबा-ए-इस्लामी मुआशरा
जमाअते-इस्लामी हिन्द

भूमिका

.ख़ानदान समाज की इकाई और तहज़ीब व तमद्दुन (संस्कृति और सभ्यता) की बुनियाद होता है। गुज़रे हुए ज़माने की शानदार रिवायतें ख़ानदान ही के ज़रिए महफ़ूज़ रहती और नई नसलों में मुन्तक़िल हो जाती हैं। यहीं से लोगों को कोशिश और जिद्दो-जहद करने का जज़बा भी मिलता है। अमल के क्षेत्र में हौसले भी बढ़ते हैं और वह जज़बाती सुकून भी मिलता है जो बड़े-से-बड़े चैलेंज का मुक़ाबला आसान बना देता है और उसी के अन्दर आइन्दा के लिए नई नस्लें तैयार होती हैं। मज़बूत समाज और शानदार संस्कृति और सभ्यता की पहली ईंट .ख़ानदान ही के इदारे में रखी जाती है। इसलिए .ख़ुशी और सुकून से भरा .ख़ानदान इनसानी समाज के वर्तमान के लिए भी ज़रूरी है और भविष्य के लिए भी, बल्कि माज़ी (अतीत) की सुरक्षा के लिए भी। यह एक-एक आदमी के लिए भी ज़रूरी है और बस्ती, मुहल्ला, समाज, देश, तमद्दुन (संस्कृति) और पूरी इनसानी नस्ल के लोगों और इनसानी इतिहास के लिए भी। यही वजह है कि इस्लाम ने .ख़ानदानी ज़िन्दगी को बड़ी अहमियत दी है। रिश्तेदारों और क़रीबी लोगों से अच्छे सुलूक, रिश्ते को जोड़े रखना और एहसान को क़ुरआन की अख़लाक़ी तालीम में बुनियादी अहमियत हासिल है। यह इस्लाम की बुनियादी क़द्रों में से एक है। क़ुरआन का जो हिस्सा अहकाम के बारे में है, उसमें सबसे ज़्यादा तफ़सील .ख़ानदानी ज़िन्दगी के ही बारे में है। अगर इनपर अमल किया जाए तो .ख़ानदानी ज़िन्दगी सुकून, इत्मीनान और .ख़ुशी की जगह बन सकती है। लेकिन महसूस होता है कि इस वक़्त .ख़ानदानी मज़बूती के सामने कई तरह के चैलेंज हैं और मुस्लिम .ख़ानदानों में भी बड़ा बिखराव देखने को मिलता है।

ख़ानदानों को मज़बूत करने के लिए ज़रूरी है कि क़ुरआन व सुन्नत की स्पष्ट पारिवारिक शिक्षाओं की तरफ़ लोगों को ध्यान दिलाया जाए और मसलों को हल करने के लिए क़ुरआन और सुन्नत (हदीस) की रौशनी में काउंसलिंग और कोचिंग की नई मालूमात और तकनीकों से भी फ़ायदा उठाया जाए।

इसी ज़रूरत को देखते हुए मैंने अपने अस्ल मैदान (माहौलियाती साइंस) के साथ फ़ैमली काउंसलिंग और कोचिंग के ट्रेनिंग कोर्स पूरे करते हुए इस मैदान में क़दम रखा था। कुछ साल पहले रिसाला हिजाबे-इस्लामी के एडीटर जनाब शमशाद हुसैन फ़लाही की पहल और गुज़ारिश पर अपने तजरिबे लिखने शुरू किए थे। मैं उनकी शुक्रगुज़ार हूँ कि उनका बार-बार फ़ॉलोअप और हिम्मत दिलाना इन मज़मूनों के तैयार होने की अहमतरीन वजह बना।

इन मज़मूनों (लेखों) में से कई तो उन सच्ची घटनाओं और तजरिबों की बुनियाद पर हैं जो लोगों और ख़ानदानों की काउंसलिंग करते हुए सामने आए। मसलों को हल करने की कोशिश करते हुए मैं क़ुरआन व सुन्नत की तालीमात को सामने रखने की कोशिश करती हूँ और उसी रौशनी में मनोविज्ञान (इल्मे-नफ़सियात) और एन॰एल॰पी॰ (Neuro-Linguistic Programming) वग़ैरा के तसव्वुरात और तकनीकों से भी फ़ायदा हासिल करती हूँ। मज़मूनों में भी इसी दृष्टिकोण (Approach) की झलक है। कोशिश की गई है कि मज़मूनों में आसान ज़बान (भाषा) इस्तेमाल की जाए।

काउंसलिंग का काम ख़ानदान के हर आदमी का काम है। हमारी तहज़ीबी रिवायात में ख़ानदान की बड़ी बूढ़ियों ने हमेशा सलाहकार, काउंसलर, कोच और मेहरबान ट्रबल शूटर (मसलों का हल बतानेवाले) का रोल अदा किया है। माएँ अपनी बेटियों के लिए हमेशा क़ाबिल कोच बनी रहीं। हर ख़ानदान में बड़ी उम्र की ऐसी तजरिबेकार औरतें हुआ करती थीं जो आनेवाली बहुओं और जानेवाली बेटियों को ख़ुशगवार ज़िन्दगी के राज़ भी सिखाती थीं और पेचीदा ख़ानदानी गुत्थियों और उलझनों को हल भी करती थीं। शहरी ज़िन्दगी की हलचल और न्यूक्लियर ख़ानदानों (सिर्फ़

माँ-बाप और बच्चेवाले ख़ानदान) के रिवाज ने इस रिवायती रोल को कमज़ोर कर दिया है। ख़ानदानी ज़िन्दगी को इस वक़्त पेश आनेवाली परेशानियों की एक वजह यह भी है। अगर हमारी औरतें काउंसलिंग व कोचिंग के आसान तरीक़ों को समझ लें और इस्लाम की बुनियादी तालीमात की समझ हासिल कर लें तो वे इस रिवायती रोल को ज़्यादा बेहतर तरीक़े से फिर से ज़िन्दगी बख़्श सकती हैं। इन मज़मूनों (लेखों) में मेरी मुख़ातब ऐसी ही पढ़ी-लिखी औरतें हैं जो बग़ैर किसी प्रोफ़ेशनल ट्रेनिंग के अपने-अपने ख़ानदानों में और अपने पास-पड़ोस में यह रोल अदा कर सकती हैं। इसलिए इन मज़मूनों में इल्मी इस्तिलाहों और तकनीकी तफ़सीलों से बचते हुए आसान ज़बान में मोटी-मोटी बातें बयान करने की कोशिश की गई है।

मैं उन तमाम औरतों की शुक्रगुज़ार हूँ जिनकी ज़िन्दगियों की कहानियों ने मेरी समझ और तजरिबे भी बढ़ाए और इन मज़मूनों के लिए मेटर भी मुहैया किया। अल्लाह उन सबकी ज़िन्दगियों को और उनके ख़ानदानों को हर तरह के मसलों से नजात दे और ख़ुशियाँ अता फ़रमाए।

मैं अपने शौहर जनाब सैयद सआदतुल्लाह हुसैनी की शुक्रगुज़ार हूँ कि वे हर क़दम पर मेरा हौसला बढ़ाते रहे। उनकी लगातार रहनुमाई और बेशुमार सुधारों के बग़ैर मेरे लिए अपने टूटे-फूटे और बिखरे हुए ख़यालों को इस शक्ल में पेश करना मुमकिन नहीं था।

मैं उन तमाम लोगों और इदारों की एहसानमन्द हूँ जिनसे मैंने नफ़सियात (मनोविज्ञान), फ़ैमिली थेरेपी, चिकित्सा, काउंसलिंग और कोचिंग के अलग-अलग नज़रिये और तरीक़े सीखे। जनाब मौलाना मुहम्मद रज़ीयुल इस्लाम नदवी साहब उन आलिमों में से हैं, जिनकी तहरीरों से ख़ानदानी ज़िन्दगी के बारे में इस्लामी तसव्वुरात को समझने में बहुत मदद मिली। मैं मौलाना की बेहद ममनून हूँ कि उन्होंने मेरी इस छोटी-सी कोशिश पर, जो किताब की शक्ल में पेश है, प्रस्तावना लिखकर मेरी बहुत इज़्ज़त अफ़ज़ाई फ़रमाई।

मैं अपने माँ-बाप और ख़ानदान के तमाम लोगों की शुक्रगुज़ार हूँ

जिनकी मदद हर क़दम पर मिलती रही और अपने दोनों प्यारे बेटों का भी शुक्रिया अदा करती हूँ जिनके सब्र और मदद के बग़ैर इस नए मैदान में हुनर आज़माई मुमकिन न थी और जिनकी प्यारी शख़्सियतों ने बच्चों की नफ़सियात के दिलचस्प पहलुओं को समझने में मदद दी।

अल्लाह इन सब एहसान करनेवालों को अच्छा बदला दे! आमीन!!

पाठकों के फ़ायदेमन्द मश्वरों और तब्सिरों का स्वागत है। अल्लाह इस छोटी-सी कोशिश को क़बूल फ़रमाए और इसे ख़ानदानों में ख़ुशी व मसर्रत और सुकून व इत्मीनान की फ़ज़ा को आम करने का ज़रिआ बनाए! आमीन!!

–डॉ॰ नाज़नीन सआदत
हुमायूँ नगर, हैदराबाद

वैवाहिक जीवन

ख़ुशगवार शादीशुदा ज़िन्दगी

शौहर-बीवी के रिश्ते को अल्लाह ने अपनी एक निशानी बताया है। यह ख़ूबसूरत रिश्ता अल्लाह की बहुत बड़ी नेमत है। इस रिश्ते के ज़रिए अजनबी मर्द और औरत एक-दूसरे से जुड़े होते हैं और फिर एक-दूसरे के लिए ज़िन्दगी की बहुत-सी ख़ुशियों का ज़रिआ बन जाते हैं। क़ुरआन कहता है कि वे एक-दूसरे को सुकून पहुँचानेवाले हो जाते हैं—

> "और उसकी निशानियों में से यह है कि उसने तुम्हारे लिए तुम्हारी ही जिंस से जोड़े बनाए, ताकि तुम उनके पास सुकून हासिल करो, और तुम्हारे बीच मुहब्बत और रहमत पैदा कर दी।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-30 रूम, आयत-21)

वे एक-दूसरे का लिबास बन जाते हैं। बेतकल्लुफ़ और इन्तिहाई भरोसेमन्द दोस्त, बल्कि ज़िन्दगी के शरीक और ज़िन्दगी के सफ़र में एक-दूसरे के साथी बन जाते हैं। एक-दूसरे के हमराज़, दुख-सुख के साथी, हमदर्द और साझेदार हो जाते हैं। उनके लिए एक-दूसरे का वुजूद ज़िन्दगी की बेशुमार ख़ुशियों का सरचश्मा (स्रोत) बन जाता है। उनकी ज़िन्दगियाँ बड़ी गहराई से एक-दूसरे से जुड़ जाती हैं, इस हद तक कि वे एक-दूसरे के वुजूद का हिस्सा बन जाते हैं। वे एक-दूसरे के पूरक (Better Half) बन जाते हैं। एक-दूसरे की ख़ुशी उनके लिए ज़िन्दगी की बहुत बड़ी दिलचस्पी बन जाती है और यही दिलचस्पी उन्हें ज़िन्दगी के कारोबार में सरगर्म और तैयार रखने का सबब भी बनती है। एक-दूसरे के लिए क़ुरबानियाँ देने और तकलीफ़ उठाने में उन्हें मज़ा आने लगता है। फिर अल्लाह इसी रिश्ते से दोनों को औलाद देता है। उनका ख़ानदान वुजूद में आता है, जो उनके लिए ख़ुशियों का घर होता है। नन्हे-मुन्ने मासूम बच्चों की ज़िम्मेदारियाँ दोनों को और

मज़बूती से जोड़ देते हैं। एक-दूसरे पर मुहब्बत लुटाने के साथ-साथ अब दोनों मिलकर बच्चों पर मुहब्बत लुटाने लगते हैं।

यह सिलसिला सदियों से चल रहा है और कायनात के पैदा करनेवाले की क़ुदरत का सबसे बड़ा कारनामा और निहायत ख़ूबसूरत नमूना है, इसी लिए क़ुरआन ने इसे निशानी क़रार दिया है। यह रिश्ता इनसान की फ़ितरी ज़रूरत है। यह फ़ितरी ज़रूरत सिर्फ़ क़ानूनी रिश्ते से पूरी नहीं होती और न ही सिर्फ़ इसके जिंसी पहलू से। इस रिश्ते के तमाम जज़बाती, नफ़सियाती, अख़लाक़ी, समाजी और तहज़ीबी पहलू इनसान की फ़ितरी ज़रूरत हैं, यानी यह इनसान की फ़ितरी ज़रूरत है कि उसका शौहर या उसकी बीवी उससे बेपनाह मुहब्बत करनेवाली हो। यह फ़ितरी ज़रूरत है कि दोनों को एक-दूसरे पर भरपूर भरोसा हो। यह फ़ितरी ज़रूरत है कि दोनों एक-दूसरे के लिए सुकून का सबब हों।

एक इनसान को शादीशुदा ज़िन्दगी की ख़ुशियाँ और सुकून हासिल हो तो यह उसके लिए बहुत बड़ी नेमत होती है। अल्लाह के रसूल मुहम्मद (सल्ल॰) ने इसे दुनिया की सबसे बड़ी नेमत क़रार दिया है—

"दुनिया की बेहतरीन नेमत नेक बीवी है।" (हदीस : मुस्लिम)

यह नेमत इनसान को जज़बाती सुख-शान्ति से मालामाल करती है। जिस मर्द या औरत को यह नेमत हासिल हो, उसकी शख़्सियत में एतिमाद, हौसला, उमंग, जोश, वलवला और हुस्न आ जाता है। वह आगे बढ़ने, तरक़्क़ी करने और लोगों को फ़ायदा पहुँचाने के मुसबत (सकारात्मक) जज़बात से और उनके लिए ज़रूरी ताक़त से मालामाल हो जाता है। ज़िन्दगी के अलग-अलग शोबों (विभागों) में उसकी काम करने की सलाहियत बेहतर हो जाती है। शौहर और बीवी में एक-दूसरे के साथ मुहब्बत और मेल-जोल हो तो घर भी सुकून का गहवारा बनता है। बच्चों को ख़ुशगवार माहौल मिलता है। ऐसे माँ-बाप के बच्चे नफ़सियाती लिहाज़ से मज़बूत और अच्छी जज़बाती ज़िहानत के मालिक होते हैं।

मियाँ-बीवी की मुहब्बत उनके पूरे ख़ानदान पर असर डालती है। पूरे

ख़ानदान में वे मुसबत (सकारात्मक) तवानाई (ऊर्जा) फैलाने का ज़रिआ बनते हैं। पूरा समाज इन जैसे जोड़ों से सेहतमन्द बनता है। देखने में यह आया है कि ख़ुशियों से भरे ख़ानदानों के बग़ैर समाज और तहज़ीब की तरक़्क़ी भी मुमकिन नहीं है। ख़ानदानी ख़ुशी व सुकून इनसानों के मनफ़ी (नकारात्मक) जज़बों जैसे रंज व ग़म, ग़ुस्सा, मायूसी व नाउम्मीदी और बेहौसलगी व कम-हिम्मत वग़ैरा को कम करने में मदद देता है। यही जज़बे समाज में बद-अम्नी व लोगों में दूरियाँ, फ़ितना व फ़साद और ज़ुल्म व जुर्म को बढ़ावा देने का सबब बनते हैं। इन मनफ़ी (नकारात्मक) जज़बों पर कंट्रोल हो तो इनसानों की ताक़त भले और फ़ायदेमन्द कामों में लगती है और इस तरह समाज ख़ुशहाल बनता है।

ख़ुशगवार शादीशुदा ज़िन्दगी के लिए निकाह के शुरुआती कुछ साल बहुत अहम और ख़ास होते हैं। मर्द और औरत दोनों के लिए शादी एक नया तजरिबा होता है। लड़की अपना घर, माँ-बाप, बहन-भाई सबको छोड़कर एक नए घर में आ बस्ती है तो वह बहुत सारी ज़ेहनी तब्दीलियों से गुज़रती है। दूसरी तरफ़ लड़का जो अब तक एक आज़ाद, लाउबाली और बेफ़िक्री की ज़िन्दगी गुज़ार रहा होता है, अचानक एक तब्दीली से गुज़रता है। वह अचानक बहुत सारी नई बन्दिशों और ज़िम्मेदारियों में जकड़ जाता है। माँ-बाप और घर के दूसरे लोगों की उसपर कड़ी नज़रें होती हैं। वे उसकी पहली और बाद की ज़िन्दगी की तुलना करते हैं।

इस मरहले में दुल्हा और दुल्हन दोनों को निहायत समझदारी से काम लेने की ज़रूरत पड़ती है। उनके अन्दर यह समझदारी हो तो उनकी ज़िन्दगी ख़ुशियों का गहवारा बन जाती है और वे सारी ख़ुशियाँ और फ़ायदे उन्हें हासिल होते हैं जिनका ऊपर ज़िक्र किया गया है। अगर ऐसा न हो सका तो फिर झगड़े शुरू हो जाते हैं और ज़िन्दगी जहन्नम बन जाती है।

इस किताब में मैं उन जोड़ों के बारे में बात करूँगी जिनके बीच गम्भीर झगड़े तो नहीं हैं, लेकिन शादीशुदा ज़िन्दगी की भरपूर ख़ुशियाँ भी नहीं हैं। अकसर यह देखने में आया है कि बहुत सारे जोड़े शादी के बाद एक या दो साल ही पुरजोश और ख़ुशियों से भरी ज़िन्दगी गुज़ार पाते हैं। उसके बाद

उनकी शादीशुदा ज़िन्दगी किसी तनाव या झगड़े का शिकार तो नहीं होती, लेकिन उसमें गर्मजोशी और वलवला भी बाक़ी नहीं रहता। ज़िन्दगी के झमेलों में वे ऐसा उलझ जाते हैं कि उन्हें एक-दूसरे में कोई दिलचस्पी नज़र ही नहीं आती। बस वे एक-साथ रहते हैं और ज़िन्दगी का बोझ उतारते और ज़िम्मेदारियाँ अदा करते रहते हैं। ऐसे पढ़े-लिखे, ख़ुशहाल और मुहज़्ज़ब (सभ्य) जोड़े भी मुझे मिलते हैं जो शादी के कुछ सालों बाद ही भरी जवानी में यह कहते नज़र आते हैं कि "अब ज़िन्दगी में कोई मज़ा ही नहीं रहा, बस बच्चों के लिए जीना है।" इन नौजवान लड़कों और लड़कियों से ऐसी बातें सुनकर बहुत अफ़सोस होता है। शादीशुदा रिश्ते की गर्मजोशी की ज़रूरत इनसान को हर उम्र में होती है। अगर ये लोग समझदारी से ज़िन्दगी गुज़ारें, इस्लामी शरीअत की पाबन्दी करें, पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) की शादीशुदा ज़िन्दगी के तरीक़े को सामने रखें और एक-दूसरे की नफ़सियात का लिहाज़ रखें तो 'इन शाअल्लाह' उम्र के साथ-साथ उनका रिश्ता और मज़बूत और मुहब्बत व ज़िन्दगी से भरपूर बन सकता है और बुढ़ापे की आख़िरी उम्र तक वे शादीशुदा ज़िन्दगी की जज़बाती ख़ुशियों से फ़ायदा उठा सकते हैं। चुनाँचे ऐसे जोड़े भी मौजूद हैं जिनकी शादी को पचास-साठ साल हो चुके हैं और जिनके पोते-पोतियाँ भी 'माशाअल्लाह' शादीशुदा और बाल-बच्चोंवाले हैं, लेकिन वे उम्र के इस आख़िरी मरहले में भी भरपूर रोमांटिक ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं। ये वे लोग होते हैं जो उस राज़ को पा लेते हैं जो ख़ुशगवार ज़िन्दगी के लिए ज़रूरी है। इस किताब में हम शादीशुदा ज़िन्दगी की हमेशा रहनेवाली ख़ुशियों के कुछ अहम उसूल बताएँगे।

(1) एक-दूसरे को सुनें

एक-दूसरे में भरपूर दिलचस्पी लें, ख़ूब बात करें और ख़ूब एक-दूसरे को सुनें। शादी के शुरुआती सालों में चूँकि वक़्त हाथ में रहता है, ज़िम्मेदारियाँ भी कम होती हैं और नई-नवेली शादीशुदा ज़िन्दगी का रोमांस और उसके बारे में जानने की ख़ाहिश उठान पर होती है, इसलिए दूल्हा और दुल्हन पूरे तौर पर एक-दूसरे का ध्यान रखते हैं। धीरे-धीरे यह तवज्जोह और रुझान कम होने लगता है और वह वक़्त भी आता है कि दोनों के पास अपने दिल

की बातें करने के लिए वक़्त ही नहीं होता। कल छोटे बच्चे को टिफ़िन में क्या दिया जाए? बड़े के इम्तिहान की तैयारी कैसे कराई जाए? बुरे पड़ोसी से कैसे निबटा जाए? इन ही बातों में उनका वक़्त, बल्कि उनकी रातें भी गुज़र जाती हैं। इस तरह वे सिर्फ़ रूम-मेट बनकर रह जाते हैं। शादीशुदा ज़िन्दगी एक-दूसरे की शख़्सियतों में भरपूर दिलचस्पी और 'दिल-से-दिल' की बातों के ज़रिए मज़बूत होती है। एक-दूसरे की सेहत के बारे में, ख़ूबसूरती के बारे में, सलाहियतों के बारे में और एक-दूसरे के ख़ाबों के बारे में ख़ूब बातें कीजिए। इसके लिए वक़्त निकालिए। मसरूफ़ वक़्तों में भी एक ज़रा-से फ़ोनकॉल के ज़रिए या मैसेज के ज़रिए रोमांस के शोले को गर्म रखिए, उसे ठण्डा न होने दीजिए। पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) ने जाबिर (रज़ि॰) की शादी पर उनसे जो बातें कीं उससे यह पता चलता है कि शादीशुदा ज़िन्दगी कैसी होनी चाहिए। नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"तुम उससे खेलो, वह तुमसे खेले। तुम उसको हँसाओ, वह तुमको हँसाए।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) की घरेलू ज़िन्दगी की जो तफ़सील हमें हदीस की किताबों में मिलती हैं उसमें बेहद गर्मजोशी और एक-दूसरे से भरपूर ताल्लुक़ (Communication) नज़र आता है। मिसाल के तौर पर नबी (सल्ल॰) हज़रत आइशा (रज़ि॰) के साथ दौड़ का मुक़ाबला करते थे। जीत-हार पर दिलचस्प तबसिरा करते थे। अपने साथ उन्हें हबशियों का खेल दिखाते थे।

(2) मुहब्बत का इज़हार और तारीफ़ करें

एक हदीस के मुताबिक़ अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया कि अगर आपको अपने भाई से मुहब्बत हो तो उसे कह दो कि आपको उससे मुहब्बत है। इस हदीस की रौशनी में देखा जाए तो यह कितना ज़रूरी हो जाता है कि शौहर-बीवी भी एक-दूसरे से मुहब्बत का इज़हार करें। मुहब्बत के इज़हार की यह ज़रूरत हमेशा होती है और हर तरीक़े से होती है। बार-बार यह कहना कि मुझे तुमसे बेहद मुहब्बत है, इशारों से उसका इज़हार

करना, ख़ूबियों की दिल खोलकर तारीफ़ करना, एहसानों पर दिल की गहराइयों से शुक्रिया अदा करना, कामयाबियों पर जश्न मनाना, ये सब जज़बात के इज़हार के ज़रिए हैं और ख़ुशगवार ज़िन्दगी के लिए ज़रूरी है कि ये सब भरपूर तौर पर इख़्तियार किए जाएँ।

एक बार तारीफ़ काफ़ी नहीं, बार-बार और हमेशा इसकी ज़रूरत पेश आती है। अच्छे जोड़े छोटी-छोटी ख़ूबियों और कामयाबियों पर भी ख़ुशियाँ मनाने और धूम मचाने का फ़न जानते हैं। रिसर्च से मालूम होता है कि ऐसे जश्न शादीशुदा रिश्ते को मज़बूत करने में बहुत अहम रोल अदा करते हैं। इसी तरह रिसर्च से यह भी मालूम होता है कि एक-दूसरे की ख़ुशियों पर भरपूर तरीक़े से ख़ुश होना भी शादीशुदा ज़िन्दगी की ख़ुशियों का अहम राज़ है। शौहर को ऑफ़िस में कोई कामयाबी मिली और उसपर बीवी ने मीठा और दूसरे ख़ास पकवान तैयार करके घर पर पार्टी कर दी। बीवी ने अरबी का कोर्स पूरा किया, इसपर शौहर मिठाई ले आया। ये सब छोटी-छोटी ख़ुशियाँ रिश्तों को बहुत मज़बूत बना देती हैं।

औरत की यह सख़्त ख़ाहिश होती है कि शौहर उसकी ख़ूबसूरती को सराहे, उसकी तरफ़ ध्यान से देखे और उसकी तारीफ़ करे। इसी तरह यह शौहर की भी ज़रूरत होती है कि उसकी शख़्सियत के अच्छे पहलुओं की उसकी बीवी तारीफ़ करे।

(3) अहमियत का एहसास दिलाएँ

रिश्ते की मज़बूती के लिए यह भी ज़रूरी है कि बीवी को यह एहसास हो कि उसका वुजूद शौहर के लिए सबसे अहम है, इसी तरह यही एहसास शौहर को भी हो। एक-दूसरे से किसी सफ़र या ज़रूरत की वजह से जुदा हों तो जुदाई की तकलीफ़ का और जल्द-से-जल्द मिलने की बेचैनी का इज़हार हो। एक-दूसरे के काम व मामलों में मश्वरा किया जाए और उस मश्वरे को अहमियत दी जाए। ख़ानदान की महफ़िलों में एक-दूसरे को भरपूर अहमियत दी जाए। साथ गुज़रनेवाले वक़्त की अहमियत और उनकी ख़ुशी एक-दूसरे को महसूस हो।

अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) जंग में अपनी बीवियों को साथ ले जाते थे। ऊँट हाँकनेवालों को हुक्म देते कि धीरे चलो, अन्दर आबगीने (शीशे के सामान यानी नाज़ुक हस्तियाँ) हैं। अपनी बीवियों से मश्वरा करते। हुदैबिया की सुलूह के बाद उन्होंने एक बड़ा पेचीदा मसला उम्मे-सलमा (रज़ि॰) के मश्वरे को क़बूल करके हल किया। मुहम्मद (सल्ल॰) घर के काम-काज में अपनी बीवियों का हाथ बटाते आटा तक गूँद देते।

अहमियत का एहसास एक-दूसरे पर तवज्जोह देने से भी होता है। शौहर ऑफ़िस से घर आता है और बीवी सारे काम छोड़कर उसकी तरफ़ ध्यान देती है। उसका बैग, मोज़े वग़ैरा उसके हाथ से ले लेती है, उसे पानी या चाय पेश करती है, वह किसी मुश्किल काम में लगा हो तो बढ़कर मदद करती है। इसी तरह बीवी पर घर के काम का दबाव है और शौहर आगे बढ़कर उसकी मदद करता है, वह मैके से वापस आ रही होती है तो ऑफ़िस से वक़्त निकालकर उसके स्वागत के लिए मौजूद रहता है। ये छोटी-छोटी बातें उनकी मुहब्बत को बढ़ाती हैं।

अहमियत का एहसास इससे भी होता है कि जिस चीज़ या जिस शख़्सियत को आपकी बीवी अहमियत देती है उसको आप भी अहमियत दें। उसके रिश्तेदारों को अहमियत दें, दोस्तों को अहमियत दें, उसके पसन्दीदा पकवान को अहमियत दें, उसके पसन्दीदा रंग को अहमियत दें, उसके शौक़ से आपको भी प्यार हो। हज़रत आइशा (रज़ि॰) से रिवायत है कि मुहम्मद (सल्ल॰) की पहली बीवी हज़रत ख़दीजा (रज़ि॰) की मौत के बाद भी उनकी सहेलियों से वे अच्छा सुलूक करते और उनको तोहफ़े और क़ुरबानी का गोश्त भिजवाते। (हदीस : तिरमिज़ी)

(4) अपनी उम्मीदें और आरज़ूएँ साफ़-साफ़ बताएँ

अल्लाह ने इनसानों के मिजाज़ एक जैसे नहीं बनाए। शौहर-बीवी में इख़्तिलाफ़ का एक पहलू तो जिंस (नस्ल) का अलग-अलग होना है। मर्द और औरत सिर्फ़ जिस्मानी लिहाज़ से अलग-अलग नहीं हैं, जज़बाती और नफ़सियाती लिहाज़ से भी उनमें बड़ा फ़र्क़ है। इसी लिए कहते हैं मर्द मंगल

ग्रह से हैं तो औरतें शुक्र ग्रह से (Men are from Mars, Women are from Venus)। मतलब यह कि दोनों के मिज़ाजों में बुनियादी फ़र्क़ होता है। फिर इनसानों में और भी बहुत-से फ़र्क़ होते हैं जो उनकी ख़ानदानी ख़ासियतों और माहौल वग़ैरा से पैदा होते हैं। मियाँ-बीवी को इस फ़र्क़ का लिहाज़ करना चाहिए और उसकी क़द्र करनी चाहिए। बहुत-से मामलों में शौहर की पसन्द अलग हो सकती है, बीवी की अलग। दोनों की सोच, तरजीह और काम करने के तरीक़े वग़ैरा में भी फ़र्क़ हो सकता है। उनकी शख़्सियतों में कुछ फ़ितरी कमज़ोरियाँ भी हो सकती हैं। शौहर को भूख बरदाश्त नहीं होती तो बीवी नीन्द पर क़ाबू नहीं रख पाती। बीवी मिलनसार है तो शौहर तन्हाईपसन्द। ख़ुश व ख़ुर्रम जोड़े ऐसे फ़र्क़ को सिर्फ़ बरदाश्त ही नहीं करते, बल्कि इनपर जश्न मनाते हैं। एक-दूसरे को छूट देते हैं। ग़लतियों को नज़रन्दाज़ करते हैं। इस्लाम भी हमको यही हुक्म देता है। क़ुरआन कहता है कि बीवी की कोई बात तुमको पसन्द न हो तो हो सकता है अल्लाह ने उसमें तुम्हारे लिए भलाई रखी हो। अल्लाह फ़रमाता है—

> "अगर वे (बीवियाँ) तुम्हें नापसन्द हों तो हो सकता है कि एक चीज़ तुम्हें पसन्द न हो मगर अल्लाह ने उसी में बहुत कुछ भलाई रख दी हो।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-19)

एक-दूसरे की कोई बात या कोई रवैया बहुत ज़्यादा नापसन्द हो तो उसका खुलकर इज़हार करना चाहिए। माहिर लोग कहते हैं कि ख़ुशगवार शादीशुदा ज़िन्दगी में छोटी-मोटी लड़ाइयों की भी बड़ी अहमियत है। इससे भी मुहब्बत बढ़ती है। इससे हमको मालूम होता है कि ज़िन्दगी के हमारे साथी को हमारी क्या चीज़ पसन्द नहीं आती और हमारा कौन-सा रवैया उसको तकलीफ़ पहुँचाता है। ख़ुश व ख़ुर्रम जोड़े इन लड़ाइयों में एक-दूसरे को अपनी उम्मीदें जता देते हैं। एक-दूसरे की जो बात सख़्त नापसन्द है या जिस रवैये से तकलीफ़ पहुँची हो उसे साफ़-साफ़ बता देते हैं। यह पसन्दीदा रवैया है। नापसन्दीदा रवैया यह है कि लड़ाई हो तो अस्ल शिकायत मालूम ही न हो और फ़ुज़ूल की बातों पर झगड़ा होता रहे। ताने, तंज़, पुराने फ़ुज़ूल के क़िस्सों, एक-दूसरे के रिश्तेदारों पर चोट वग़ैरा पर झगड़ा होता रहे और

अस्ल शिकायत का पता ही न चले। ऐसे जोड़ों के दिलों में शिकायतों के नासूर पलते रहते हैं और जब ये फटते हैं तो मालूम होता है कि तलाक़ की वजह सिर्फ़ यह है कि शौहर टूथपेस्ट के ट्यूब को कहीं से भी दबा देता था, जबकि बीवी चाहती थी कि वह तरतीब से पीछे से दबाते आए। (यह सच्चा वाक़िआ है।)

(5) ग़लतियाँ क़बूल करें, माफ़ी चाहें और ख़ुद को बदलें

आदमी से कोई ग़लती न हो यह मुमकिन नहीं है। ग़लती का एहसास हो जाए या दूसरी तरफ़ से एहसास दिलाया जाए तो अपनी ग़लती क़बूल करके माफ़ी भी माँग लें। माफ़ी सिर्फ़ माफ़ी के बोल का नाम नहीं है, बल्कि यह एक तरीक़ा है जिसके ज़रिए आप सामनेवाले के ज़ेहन और जज़बात को उस ग़लती के असर से पाक करते हैं जो आपसे हुई है। संजीदा माफ़ी के तरीक़े नीचे दिए गए हैं—

- जो ग़लती आपने की है उसका पूरी तरह ज़िक्र करते हुए साफ़ लफ़्ज़ों में माफ़ी माँगिए। कहिए कि फ़ुलाँ-फ़ुलाँ ग़लती के लिए मैं शरमिन्दा हूँ और माफ़ी चाहता हूँ।
- बताइए कि उस ग़लती का दूसरे पर क्या असर हुआ है या हो सकता है। उसको भी मानिए।
- उस ग़लती को दोबारा न करने या रवैये में सुधार की यक़ीनदिहानी कराइए।

इस तरह की माफ़ी हमारे रिश्ते को और मज़बूत करती है और मुहब्बत बढ़ाती है। इसी तरह मुहब्बत इससे भी बढ़ती है कि आप अपने ज़िन्दगी के साथी की मरज़ी के मुताबिक़ ख़ुद को बदलें। जो रवैया उसको पसन्द नहीं उसको छोड़ दें।

रवैये के अलावा बदलाव का एक मैदान शौहर-बीवी की दूसरी छोटी-मोटी पसन्द या नापसन्द भी हो सकती है। मिसाल के तौर पर कोई ख़ास रंग आप पहनती हों वह आपके शौहर को पसन्द न हो, तो आप उसे फ़ौरन पहनना छोड़ दें। या कोई पकवान का तरीक़ा जो उसे नापसन्द हो,

वह आप बदल दें। या बीवी को शौहर के पान खाने की आदत पसन्द न हो, उसके किसी .ख़ास परफ़्यूम से चिढ़ हो, या चप्पल पहनकर उसका बाज़ार जाना पसन्द न हो और वह उस आदत को छोड़ दे तो इस अमल से आपका मक़ाम उसकी नज़रों में और आपकी मुहब्बत उसके दिल में बहुत बढ़ जाएगी और आपके रिश्ते को मज़बूती मिलेगी।

(6) ग़ुस्से को कंट्रोल करें और ज़बान को क़ाबू में रखें

लहजा और ज़बान का तीखापन रिश्तों में ज़हर घोल देता है। मेरे पास जो केस आते हैं उनमें कई बार मसला कुछ नहीं होता। बस कम्यूनिकेशन की ख़राबी रिश्तों को बिगाड़ देती है। इसी लिए इस्लाम में ज़बान पर कंट्रोल की .ख़ास तालीम मिलती है। यह कंट्रोल हर रिश्ते में ज़रूरी है, लेकिन शादीशुदा ज़िन्दगी में इसकी अहमियत बहुत ज़्यादा है। हमारे ज़ेहन की .ख़ासियत है कि वह सामनेवाले के अलफ़ाज़, लब व लहजा, आवाज़ के उतार-चढ़ाव और चेहरे के तास्सुरात इन सबको क़बूल करता है। और यह ज़ेहन पर असर डालता रहता है और रवैयों को मुतास्सिर करता है। हम बेख़याली में कुछ कह देते हैं और वह तीर बनकर हमारे (शौहर/बीवी के) दिल पर गहरा ज़ख़्म लगा देता है। हमें पता ही नहीं चलता कि हमने उसके दिल का .ख़ून कर दिया है। बाद में बोलनेवाला और सुननेवाला दोनों इसे भूल जाते हैं लेकिन उस वाक़िए ने जो दराड़ पैदा की है वह बाक़ी रहती है और ऐसी दराड़ें धीरे-धीरे रिश्तों और जज़बात के अन्दर रुखापन ले आती हैं। ग़ुस्से में हम अकसर बच्चों के सामने आपस में ग़लत बातें कह जाते हैं, जिसका असर बच्चों पर भी होता है। अकसर जोड़े बाद में यह कहते फिरते हैं कि हमने तो ग़ुस्से में ऐसा कह दिया और हमारा मक़सद यह नहीं था। शादीशुदा ज़िन्दगी को मज़बूत करने के लिए ज़रूरी है कि हम ग़ुस्से पर क़ाबू पाना सीखें। ग़ुस्सा आए तो उठ खड़े हों। ठण्डा पानी पिएँ। शैतान से अल्लाह की पनाह और माफ़ी माँगें। ग़ुस्सा न करने और ज़बान पर कंट्रोल का शादीशुदा ज़िन्दगी की .ख़ुशियों और उसे बेमुरव्वती से बचाने में बड़ा अहम रोल होता है।

(7) कुछ साझा दिलचस्पियाँ और काम अपनाएँ

रिसर्च से मालूम होता है कि शादीशुदा ज़िन्दगी में साझा दिलचस्पियों और काम की भी बड़ी अहमियत होती है। इनसे ताल्लुक़ गहरा होता है। शौहर और बीवी को अपनी अलग-अलग दिलचस्पियों और काम की भी क़द्र करनी चाहिए और उसके लिए एक-दूसरे को मौक़ा देना चाहिए और साथ ही कुछ दिलचस्पियाँ और काम ऐसे अपनाने चाहिएँ जो दोनों के लिए एक हों। दोनों मिलकर बाग़बानी (Gardening) कर सकते हैं। कभी मिलकर साथ में कोई चीज़ पका सकते हैं। कोई खेल खेल सकते हैं। आसानी हो तो तैराकी कर सकते हैं। कुछ न हो तो कम-से-कम मिलकर पार्क में टहलने की आदत बना सकते हैं। शेर व शायरी का शौक़ हो तो उसमें मुक़ाबला कर सकते हैं। मिलकर किसी किताब को पढ़ सकते हैं। साथ में कोई वीडियो प्रोग्राम देख सकते हैं। कभी साथ में कोई लम्बी ड्राइव, पिकनिक या मुहिम पर जा सकते हैं। मिलकर कोई नई ज़बान या कोई नया फ़न सीख सकते हैं। जो लोग दीनी सरगर्मियों में लगे हुए हैं उनके लिए दावत और तहरीक का साझा काम भी एक तरह की दिलचस्पी का बहुत अहम मैदान हो सकता है। अगर ज़िन्दगी में ऐसी कोई साझा सरगर्मी या दिलचस्पी न हो तो कोशिश करनी चाहिए कि ऐसी कोई चीज़ तलाश की जाए और उसे अपनाया जाए।

(8) एक-दूसरे के लिए दुआ करें

ख़ुशगवार शादीशुदा ज़िन्दगी के लिए यह भी ज़रूरी है कि हम एक-दूसरे के लिए दुआ करें। एक-दूसरे के लिए दुआ मुहब्बत बढ़ाती है और तलख़ियों को मिटा देती है। यह मशहूर दुआ तो ख़ुद अल्लाह ने हमें सिखाई है—

रब्बना हब लना मिन अज़वाजिना व ज़ुर्रिय्यातिना क़ुर-र-त अअयुनिवं वज-अलना लिल-मुत्तक़ी-न इमामा।

"ऐ हमारे रब! हमें अपनी बीवियों और अपनी औलाद से आँखों की ठण्डक दे और हमको परहेज़गारों का इमाम बना।"

(क़ुरआन, सूरा-25 फ़ुरक़ान, आयत-74)

सोने से पहले आयतुल-कुर्सी, सूरा-112 इख़लास, सूरा-113, 114 फ़लक़ और नास और सूरा-2 बक़रा की आख़िरी 2 आयतों को मिलकर पढ़ें और एक-दूसरे पर दम करें। कभी-कभी मिलकर दुआ करें। जब भी कोई मुश्किल हो, कोई झगड़ा हो या रिश्ता किसी मुश्किल से दोचार हो तो सबसे पहले ख़ुदा से मदद माँगी जाए। एक मुसलमान की सबसे बड़ी ताक़त दुआ, ख़ुदा पर ईमान और उससे ताल्लुक़ की ताक़त ही है। यह ताक़त शादीशुदा ज़िन्दगी में भी पूरी तरह इस्तेमाल होनी चाहिए। शौहर अपने कैरियर या कारोबार के किसी अहम मरहले की शुरुआत कर रहा हो तो बीवी रात को उठकर उसके लिए दुआ करे। बच्चे की पैदाइश के मरहले में शौहर ख़ासतौर पर बीवी के लिए दुआ करता रहे। एक-दूसरे के लिए ख़ैरात करें और मन्नतें मानें। इनसे भी मुहब्बत बढ़ती है और हमारी शादीशुदा ज़िन्दगी पर अल्लाह की रहमत नाज़िल होती है और उसकी ख़ास मदद मिलती है।

यूनिवर्सिटी ऑफ़ वाशिंगटन की एक रिसर्च से मालूम होता है कि ख़ुशगवार शादीशुदा ज़िन्दगी के लिए ख़ुशगवार और नाख़ुशगवार (सकारात्मक और नकारात्मक) बातों का अनुपात कम-से-कम पाँच और एक का होना चाहिए। मतलब अगर महीने में दस बार नाराज़गियाँ, छोटी-मोटी लड़ाइयाँ, शिकायतें, दोनों में से किसी एक से नापसन्दीदा हरकत वग़ैरा हो जाएँ तो कम-से-कम पचास बार ख़ुशगवार बातें यानी मुहब्बत का इज़हार, एक-दूसरे की ख़ुशी पर जश्न मनाना, तारीफ़ करना, प्यार-मुहब्बत का गर्मजोश इज़हार वग़ैरा होना चाहिए। यह अनुपात अगर घटता है तो रिश्ते ख़राब होने लगते हैं या उनमें बेमुरव्वती और रुखापन आने लगता है। इस मज़मून (लेख) में प्वाइंट एक, दो, तीन, सात और आठ मुसबत (सकारात्मक) बातों की मिसालें हैं। इनके अलावा मुसबत (सकारात्मक) बातों की और भी मिसालें हो सकती हैं। जिस्म को छूना यानी एक-दूसरे को गले लगाना, चूमना, हाथ-में-हाथ देना वग़ैरा भी मुसबत (सकारात्मक) बातों की मिसालें हैं। इन सब चीज़ों की तादाद और संख्या (Frequency) हम ज़्यादा-से-ज़्यादा कर दें तो छोटी-मोटी मनफ़ी (नकारात्मक) बातों के नुक़सान से इस ख़ूबसूरत लेकिन निहायत हस्सास और नाज़ुक रिश्ते को कमज़ोर होने से बचा सकते हैं।

शादी से पहले काउंसलिंग

सलमा (नाम बदल दिया गया है) नामी एक ख़ूबसूरत और पढ़ी-लिखी लड़की को उसके माँ-बाप मेरे पास लेकर आए। वह शादी के लिए हरगिज़ तैयार नहीं थी। आमतौर पर इसकी वजह लोग यह समझते हैं कि लड़की रिश्ते से ख़ुश नहीं है या किसी और से शादी करना चाहती है या और तालीम हासिल करना या कैरियर को आगे बढ़ाना चाहती है। लेकिन दरख़्शाँ का इनमें से कोई भी मसला नहीं था। उसकी इंजीनियरिंग की पढ़ाई पूरी हो चुकी थी। अब न उसे और ज़्यादा पढ़ाई से दिलचस्पी थी और न वह नौकरी करना चाहती थी। वह किसी से भी शादी नहीं करना चाहती थी। माँ-बाप के लिए यह फ़ितरी तौर पर परेशानी की बात थी।

सलमा के इस इनकार की वजह वही अन्देशे थे जो इस उम्र की अकसर लड़कियों में पाए जाते हैं। सलमा ने मुझसे कहा कि "मेरी शादीशुदा सहेलियों ने बताया कि अकेले रहना ही बेहतर है। इस तरह ही ज़िन्दगी का ज़्यादा बेहतर तरीक़े से मज़ा लिया जा सकता है। मेरी सहेलियाँ हमेशा अपने शौहरों की शिकायतें करती हैं, उनके ग़लत रवैयों का ज़िक्र करती हैं और मुझसे मश्वरे भी माँगती हैं। ये सारी बातें मुझे परेशान करती हैं और शादी से ख़ौफ़ दिलाती हैं। मैं शादी के ख़िलाफ़ नहीं हूँ, मगर मुझे नाख़ुश रहने और ज़िन्दगी का मज़ा खो देने से डर लगता है।" उसने मुझसे यह भी पूछा कि यह जो फ़िल्मों में दिखाते हैं कि कैसे कुछ जोड़े एक-दूसरे से शादी करने के लिए तड़पते हैं और बाद में एक-दूसरे पर जान छिड़कते हैं। क्या यह सब हक़ीक़त में भी होता है?

यह सवाल हर ग़ैर-शादीशुदा औरत के ज़हन में आता है। कुछ लड़कियों में शादी के बाद हो जानेवाले बुरे हालात का ख़ौफ़ ही शादी करने के क़ुदरती जज़्बे पर भारी पड़ जाता है। वे शादी के लिए तैयार भी होती

हैं तो सख़्त अन्देशों के साथ। ज़िन्दगी का सबसे अहम और ख़ूबसूरत दिन यानी शादी का दिन, वे सख़्त दबाव और तनाव में गुज़ारती हैं। ख़ौफ़ और अन्देशों का बोझ लिए वे अपने जीवन साथी के घर में दाख़िल होती हैं।

इसकी वजह क्या है? इसको हम समझ जाएँ तो शायद शादीशुदा ज़िन्दगी के ज़्यादातर मसलों पर क़ाबू पालें और अपने समाज को शादीशुदा ज़िन्दगी के झगड़ों की लानत से पाक करने में भी कामयाब हो जाएँ। इसकी अस्ल वजह यह है कि एक लड़की को अपने हर तरफ़ बहुत कम ख़ुश व ख़ुर्रम और पुरजोश जोड़े नज़र आते हैं। हमारे समाज में बहुत-सी अजीब बातें मज़बूत रिवायतें बन चुकी हैं। 'सास-बहू के झगड़े' फ़िल्म और लिट्रेचर से लेकर घरेलू गपबाज़ियों तक हर जगह का रिवायती मौज़ू (विषय) बन चुका है। ये सब मिलाकर यह यक़ीन लड़की के अन्दर पैदा कर देते हैं कि सास एक निहायत ज़ालिम औरत का नाम है।

अल्लाह ने हमारे दिमाग़ के दो हिस्से बनाए हैं। एक शुऊर (Conscious Mind) और दूसरा लाशुऊर (Unconscious Mind)। शुऊर दिमाग़ का वह हिस्सा है जिसपर हमारा कंट्रोल होता है, जिससे काम लेकर हम फ़ैसले करते हैं, सोचते हैं और मसले हल करते हैं। यहीं हमारी शॉर्ट मेमोरी होती है जिसकी मदद से हम चीज़ों को याद करते हैं। इससे अलग लाशऊर दिमाग़ का वह हिस्सा है जिसपर हमारा कंट्रोल नहीं होता। यहीं हमारी आदतें होती हैं, चाल-ढाल होती है, जज़बात होते हैं। हमारे रवैये और मिज़ाज की कैफ़ियतें भी इसी से निकलती हैं।

पैदा होने से पहले से यानी माँ के पेट के अन्दर से अब तक, जो कुछ बातें हम सुनते, देखते, महसूस और तजरिबा करते आए हैं, वे सब हमारे लाशुऊर में महफ़ूज़ होती जाती हैं और हमारे रवैयों और आदतों को जन्म देती हैं। बचपन का एक नाख़ुशगवार तजरिबा, हमें याद भी नहीं रहता, लेकिन हमारे लाशुऊर में महफ़ूज़ रहता है और उस नामालूम तजरिबे की वजह से ज़िन्दगी-भर हमारा मिज़ाज ग़ुसैला और चिड़चिड़ा बन जाता है। हमारी हर आदत, हर रवैया और शख़्सियत का हर पहलू इसी तरह पैदा होता है। अच्छे रवैये के लिए ज़रूरी है कि लाशुऊर की अच्छी प्रोग्रामिंग हो।

अब अगर कोई लड़की अपने लाशुऊर में यह तसव्वुर लेकर ससुराल में क़दम रखे कि सास, नन्द और जिठानी ये सब निहायत ज़ालिम लोगों के नाम हैं, ख़ुशी मैके ही में मिलती है, ससुराल तो तकलीफ़ और आज़माइश की जगह है, तो इसका लाज़िमी नतीजा यह निकलेगा कि वह ससुराल और ससुराली रिश्तेदारों से ताल्लुक़ रखनेवाले हर मामले को ख़ौफ़ और शक की नज़र से ही देखेगी। नन्द की छोटी ग़लती भी बड़ी नज़र आएगी। जिन बातों पर माँ हमेशा टोकती थी, उन ही में से किसी बात पर सास कुछ कह दे तो यह बड़ा ज़ुल्म महसूस होगा। (इस तरह के ग़लत तसव्वुर सास के दिमाग़ में भी होते हैं और उसका बहू के साथ रवैया भी हक़ीक़त में ख़राब हो सकता है। लेकिन इस वक़्त चूँकि हमारा विषय लड़कियों की काउंसलिंग है, इसलिए इसका ज़िक्र मैं नहीं कर रही हूँ।) उन लाशुऊरी तसव्वुरों का असर उसके रवैये पर पड़ेगा। वह ससुराल में किसी को अपना समझेगी ही नहीं, और लाशुऊर में मौजूद ग़ैरियत का यह एहसास उसकी आवाज़, लह्जे, रहन-सहन और उसके अमल, हर चीज़ से ज़ाहिर होगा। एक तरफ़ की बेहिसी और तलख़ी, दूसरी तरफ़ भी बेहिसी और तलख़ी को बढ़ावा देती है। अगर आनेवाली बहू के रवैयों से लगातार नापसन्दीदगी और ग़ैरियत ज़ाहिर हो रही हो और ससुरालवाले मुहब्बत और अपनाइयत का जज़बा भी रखते हों, तो यह जज़बे भी धीरे-धीरे ख़त्म हो जाते हैं और बहुत जल्द दो तरफ़ा तल्ख़ियों के दौर की शुरुआत हो जाती है। इसके नतीजे में न सिर्फ़ ससुराली रिश्तेदारों से, बल्कि शौहर से भी झगड़े शुरू हो जाते हैं। मेरे पास जो केस आते हैं उनकी रौशनी में, मैं यह बात पूरे यक़ीन के साथ कह सकती हूँ कि अकसर नाकाम शादियों की नाकामी की वजहें, लड़का या लड़की के माँ-बाप उनकी शादी से बहुत पहले पैदा कर चुके होते हैं। लड़की के माँ-बाप उसका ऐसा ज़ेहन बना चुके होते हैं कि वह एक अच्छी बीवी या अच्छी बहू का रोल अदा करने के लायक़ नहीं रहती। या लड़के के माँ-बाप, और दोस्त-रिश्तेदार उसका ऐसा लाशुऊर बना चुके होते हैं कि वह अपनी बीवी को ख़ुश रखने की नफ़सियाती और जज़बाती सलाहियत ही से महरूम हो चुका होता है।

इसलिए ख़ानदानी ज़िन्दगी की मज़बूती के लिए ज़रूरी है कि दूल्हा

और दुल्हन को एक तरबियती कोर्स से गुज़ारा जाए। आजकल मामूली-मामूली काम भी ट्रेनिंग के बग़ैर हवाले नहीं किए जाते। शादी करना तो एक बहुत बड़ा काम है। इसके ज़रिए समाज का एक निहायत अहम इदारा (संस्था) यानी .ख़ानदान वुजूद में आता है। एक कम उम्र और नातजरिबेकार लड़की और एक नई उम्र का लड़का मिलकर एक ऐसी संस्था का निज़ाम सम्भाल रहे होते हैं जिसकी समाज में बड़ी अहमियत है। इसलिए ज़रूरी है कि उनकी तरबियत की जानी चाहिए। आजकल दूसरे ग़ैर-मुस्लिम समाजों में इस तरह के कोर्स और शादी से पहले काउंसलिंग बहुत रिवाज पा चुके हैं। काउंसलिंग वग़ैरा के जो कोर्स मैंने किए हैं उनमें मेरे क्लास का एक साथी एक ईसाई पादरी था जो चर्च में शादीशुदा ज़िन्दगी की काउंसलिंग के काम पर लगा हुआ था। उसे चर्च ने दुनिया के कई मुल्कों में भेजकर महँगे कोर्स कराए थे। उनके ज़रिए मालूम हुआ कि चर्च में काउंसलिंग और .ख़ानदानी ज़िन्दगी की ट्रेनिंग का बहुत पाएदार निज़ाम भी है और ईसाई समाज में इसकी मज़बूत रिवायतें भी हैं। चर्च की बाक़ायदा ट्रेनिंग के बग़ैर कोई ईसाई जोड़ा अपनी शादीशुदा ज़िन्दगी को शुरू नहीं करता। इस्लाम तो .ख़ानदानी ज़िन्दगी के सिलसिले में बहुत तफ़सीली हिदायतें देता है। हमारे आलिमों ने लिखा है कि अगर आप कोई काम कर रहे हैं तो उस काम के बारे में शरीअत का इल्म हासिल करना फ़र्ज़ हो जाता है। इस लिहाज़ से शादीशुदा ज़िन्दगी की शुरुआत से पहले शरीअत की इसके बारे में तालीमात को जानना फ़र्ज़ है और यह समाज की ज़िम्मेदारी है कि वह उसका मुनासिब इन्तिज़ाम करे। इसके लिए ज़रूरी है कि शादी से पहले काउंसलिंग के इस प्रोग्राम में नीचे दी गई कुछ बातों को ज़रूर अमल में लाना चाहिए—

(1) सबसे पहली ज़रूरत तो यह है कि लड़की-लड़कों को शादीशुदा ज़िन्दगी के इस्लामी अहकाम बताए जाएँ। उन्हें बताया जाए कि ये अल्लाह और उसके रसूल मुहम्मद (सल्ल॰) के अहकाम हैं। हमारे समाज और .ख़ानदान की रिवायतों का यह मक़ाम नहीं है कि उन्हें शरीअत के अहकाम से बड़ा माना जाए। .ख़ानदानी रिवायतों का लिहाज़ होना चाहिए लेकिन शरीअत के दायरे के अन्दर। जहाँ रिवायत और शरीअत में टकराव हो, वहाँ

शरीअत की बात ही माननी चाहिए। यही हमारे ईमान का तक़ाज़ा है। इसके बाद उनको तफ़सील से शौहर और बीवी के हुक़ूक़ और उनकी ज़िम्मेदारियाँ, ख़ानदान के दूसरे लोगों के हुक़ूक़ और ज़िम्मेदारियाँ, बच्चों के हुक़ूक़, झगड़े और उनके हल के तरीक़े वग़ैरा के सिलसिले में इस्लामी अहकाम बताए और याद कराए जाएँ। हो सके तो उसका इम्तिहान भी लिया जाए। जो लोग यह कोर्स पढ़ाना चाहें वे उर्दू रिसाले 'हिजाब' के ख़ास शुमारे (इस्लामी आइली ज़िन्दगी और तलाक़ व पर्सनल लॉ के मसाइल, दिसम्बर 2017) में भी इस विषय पर बहुत फ़ायदेमन्द बातें पाएँगे। इनके अलावा नीचे दी गई किताबों से भी मदद ली जा सकती है—'हुक़ूक़ुज़्ज़ौजैन' लेखक मौलाना सैयद अबुल-आला मौदूदी, 'इस्लाम के आइली क़वानीन' लेखक मौलाना सैयद उरूज क़ादिरी, 'इस्लाम का ख़ानदानी निज़ाम' लेखक मौलाना सैयद जलालुद्दीन उमरी।

(2) दूसरी ज़रूरत यह है कि उनके लाशुऊर की सही तरबियत की जाए। उनके ग़लत तसव्वुरात को चैलेंज किया जाए। शादीशुदा ज़िन्दगी का बहुत ख़ूबसूरत, रोमांस से भरा, दिलकश व दिलरुबा नक़्शा उनके ज़ेहन में बिठाया जाए। और हक़ीक़त यह है कि यह रिश्ता है भी बहुत ख़ूबसूरत और बहुत मज़ेदार। ज़िन्दगी की बहारें और उसकी बेशुमार ख़ुशियाँ इस रिश्ते से जुड़ी हुई हैं। इसी लिए तो क़ुरआन ने इसे सुकून, रहमत और मुहब्बत का घर क़रार दिया है—

> "और उसकी निशानियों में से यह है कि उसने तुम्हारे लिए तुम्हारी ही जिंस (सहजाति) से ज़ोड़े बनाए ताकि तुम उनके पास सुकून हासिल करो, और तुम्हारे बीच मुहब्बत व रहमत पैदा कर दी।" (क़ुरआन, सूरा-30 रूम, आयत-21)

तरबियत देनेवाला काउंसलर कोशिश करे कि ससुराल की नई ज़िन्दगी को लड़की एक ख़ूबसूरत और मज़े से भरपूर एडवेंचर के तौर पर ले। लड़कियाँ इस मुसबत (सकारात्मक) तसव्वुर के साथ ससुराल में क़दम रखेंगी तो बदमिज़ाज ससुराली रिश्तेदारों के भी दिलों को जीत लेंगी। होनेवाले ससुराली रिश्तेदारों की पहचान कराई जाए। आज अल-हमदु लिल्लाह हमारे

मुस्लिम समाज में ऐसी सासों की कमी नहीं जो बहुओं पर माओं की तरह ही प्यार लुटाती हैं। ऐसी मिसालें सामने लाई जाएँ। लड़के के ज़ेहन के तसव्वुरात को सही किया जाए। उसके ज़ेहन में अगर बीवी के बारे में यह चल रहा है कि वह एक नौकरानी है तो उसकी इस सोच को बदला जाए। उसे बताया जाए कि बीवी का मतलब क्या है? शरीअत ने उसे क्या मक़ाम और क्या हुक़ूक़ दिए हैं? मुख़्तसर यह कि ट्रेनिंग प्रोग्राम में लाशुऊर की इस तरह से तरबियत की जाए कि शौहर और बीवी निहायत ख़ुशी और जोश व वलवले के साथ लेकिन सही और हक़ीक़त पर मब्नी सोच के साथ अपनी नई ज़िन्दगी की शुरुआत कर सकें और निहायत ख़ुशगवार माहौल में एक नए ख़ानदान की बुनियाद पड़ सके। इसके लिए काउंसलर (सलाहकार) को बहुत-से क़िस्से सुनाने होंगे। स्क्रीन पर कुछ वीडियोज़ भी दिखाए जा सकते हैं। उनसे बात करनी होगी और उनके ज़ेहन को बनाना होगा।

(3) एक ज़रूरत यह भी है कि लड़के-लड़कियों को शादी के बारे में सही फ़ैसले के लिए तैयार किया जाए। आज भी हमारे समाज में लड़कियाँ और लड़के शादी के लिए फ़ैसला करने की सलाहियत कम ही रखते हैं। वे अगर ख़ुद अपनी होनेवाली दुल्हन या दूल्हे को चुनते हैं तो इसकी वजह कोई सोचा-समझा फ़ैसला नहीं होता, बल्कि सब वक़्ती जज़बाती वजहें होती हैं, जो अकसर पछतावे ही का सबब बनती हैं। अकसर सूरतों में लड़कियाँ ही नहीं लड़के भी फ़ैसला पूरे तौर से माँ-बाप पर छोड़ देते हैं और बाद में ख़ुद भी पछताते हैं और माँ-बाप से भी शिकायत पैदा हो जाती है। इस्लाम ने शादी में लड़के और लड़की की राय को बहुत अहमियत दी है। शादी के लिए दोनों में रज़ामन्दी का इज़हार उन ही के बीच होता है। इसलिए यह फ़ैसला अस्ल में उन ही को करना है। काउंसलिंग का एक मक़सद यह हो कि इस फ़ैसले के लिए उनको तैयार किया जाए। इसके लिए नीचे दिए गए कुछ मश्वरे फ़ायदेमन्द हो सकते हैं।

लड़कियों से (और लड़कों से भी) यह पूछा जाए कि वे अपने शौहर (या बीवी) को कैसा देखना चाहते हैं? इस सिलसिले में उनकी तरजीह (प्राथमिकता) क्या है? उन्हें उसपर सोचने का अभ्यास कराया जाए और कहा जाए कि वे

जो कुछ सोच रहे हैं उसे लिख लें। इस्लाम ने दीन को तरजीह देने का हुक्म दिया है, लेकिन ख़ुद की पसन्द-नापसन्द के लिहाज़ से दूसरे मामलों का भी लिहाज़ रखा है। आप अपने-आपको और अपने मिज़ाज, पसन्द और मसरूफ़ियत को सामने रखकर सोचिए कि ज़िन्दगी का साथी कैसा होना चाहिए? उम्र? लम्बाई? ख़ूबसूरती? पढ़ाई? मिज़ाज व शख़्सियत? कल्चर, वतन? पेशा वग़ैरा? इन सब हवालों से सवाल करके उनकी मदद कीजिए।

उन्हें कहिए कि अब इस सूची में तरजीह (प्राथमिकता) को तय कीजिए। कौन-सी बातें ऐसी हैं जिनपर कोई समझौता आप करना नहीं चाहेंगी और कौन-सी बातें हैं जिनपर समझौता हो सकता है। अगर उनकी बातें ग़ैर-अमली (अव्यावहारिक) और ख़याली हैं तो उनकी काउंसलिंग कीजिए। ख़ाबों की दुनिया से उन्हें हक़ीक़त की दुनिया में ले आइए। यहाँ तक कि उनकी सही हक़ीक़त पर मब्नी लिस्ट तैयार हो जाए। इसी तरह एक लिस्ट ऐसी भी तैयार होनी चाहिए कि क्या बातें है जो आप अपने शौहर में देखना नहीं चाहतीं? इस लिस्ट की बड़ी अहमियत होती है। अकसर ऐसी बातें ही मियाँ-बीवी के बीच बेमुरव्वती का सबब बनती हैं। इसलिए शादी से पहले ही उनके बारे में ज़ेहन साफ़ हो और इसकी बुनियाद ही पर शौहर का चुनाव हो तो ज़्यादा बेहतर है। हमारी हर पसन्द का हमेशा लिहाज़ हो यह मुमकिन नहीं। लड़कियों का रिश्ता यूँ भी हमारे समाज में आमतौर पर मुश्किल ही से तय हो पाता है। इसलिए उनको ज़रूरी समझौते (Compromise) के लिए भी तैयार रहना चाहिए। लेकिन ऐसा भी न हो कि लड़की की कोई पसन्द ही न हो। उसकी तरजीह (प्राथमिकता) और पसन्द, उसको भी और उसके माँ-बाप को भी मालूम तो होनी चाहिए और जिस हद तक मुमकिन हो उसका लिहाज़ भी रखा जाना चाहिए।

(4) उनको दिमाग़ से सोच-समझकर फ़ैसला करने के लायक़ बनाइए। शादी का फ़ैसला एक दूर तक असरन्दाज़ होनेवाला फ़ैसला है। यह लड़के और लड़की की बाक़ी ज़िन्दगी का रुख तय करनेवाला और ज़िन्दगी के ज़्यादातर हिस्से पर असर डालनेवाला फ़ैसला है। ऐसा फ़ैसला वक़्ती जज़बात के दबाव में नहीं किया जा सकता। सोच-समझकर ही किया जाना चाहिए।

माँ-बाप की राय को अहमियत देनी चाहिए कि वे इस चीज़ का काफ़ी तजरिबा रखते हैं और तजरिबेकार लोगों में हमारे सबसे ज़्यादा ख़ैरख़ाह हैं। लड़की जिन लोगों की रायों पर एतिमाद करती है, जिनसे क़ुरबत महसूस करती है और जिनके सामने बेझिझक अपनी बात कह सकती है, उनसे भी उसे मश्वरा करना चाहिए। आमतौर पर यह माँ ही होती है, लेकिन कभी-कभी बहन, भाई, भाभी, लड़की की कोई सहेली वग़ैरा को भी यह मक़ाम मिल जाता है। उनसे मश्वरे करने के लिए हिम्मत बढ़ानी चाहिए। लेकिन बहरहाल फ़ैसला लड़की या लड़के का होना चाहिए। इस सिलसिले में माँ-बाप से बात करने में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए। अगर ऐसी हिचकिचाहट हो तो काउंसलर की ज़िम्मेदारी है कि वह उसे दूर करे और शादी के मसले पर लड़के या लड़की की अपने माँ-बाप और भाई-बहनों से साफ़ और बेझिझक बात करने की राह आसान करे।

(5) इसी तरह यह भी ज़रूरी है कि शादी के बाद शौहर के साथ मिलकर इस्लाम के बताए हुए मश्वरे के तरीक़े से फ़ैसले करने की भी उन्हें ट्रेनिंग दी जाए। निकाह के बाद अब शौहर या बीवी अकेले नहीं रहे, वे एक टीम बन गए हैं। दोनों की ज़िन्दगी ही नहीं, बल्कि ज़िन्दगी के सारे मरहले और मसले एक-दूसरे के साथ जुड़ गए हैं। दोनों को मिलकर तय करना है कि उन्हें ज़िन्दगी कैसे गुज़ारनी है? उनका घर कैसा होगा? किसकी क्या ज़िम्मेदारी होगी? आइन्दा पाँच सालों और दस सालों में वे कहाँ पहुँचना चाहेंगे? वग़ैरा। बाद में बच्चे होंगे तो बच्चों के बारे में फ़ैसले भी दोनों को मिल-जुलकर इस्लामी शूराइयत के तक़ाज़े निभाते हुए करने चाहिएँ। दोनों मिल-जुलकर तय करेंगे और मिल-जुलकर अपने फ़ैसलों को लागू करने की कोशिश करेंगे तो 'इन शाअल्लाह' झगड़ों का इमकान कम-से-कम होगा। इसलिए यह ट्रेनिंग देना बहुत ज़रूरी है। हमारे समाज में इस ट्रेनिंग की ज़्यादा ज़रूरत लड़कों को है, लेकिन लड़कियों को भी है।

(6) कामयाब ज़िन्दगी के लिए उस चीज़ की बड़ी ज़रूरत है जिसे आजकल जज़बाती ज़िहानत कहा जाता है। अमेरिका में रहनेवाले नफ़सियात के माहिर डैनियल गोलमैन ने 20 साल पहले साबित किया था कि ज़िन्दगी

में कामयाबी के लिए ज़िहानत (IQ) से ज़्यादा जज़बाती बैलेंस (IEQ) की अहमियत, या इस बात की अहमियत है कि वे अपने और दूसरों के जज़बात को शुऊर के साथ कितना समझते हैं? कैसा रवैया अपनाते हैं? समाजी पेचीदगियों का कैसे सामना करते हैं? जज़बात को कैसे क़ाबू में रखते हैं? और कैसे अपने और लोगों के जज़बात का इस तरह लिहाज़ रखते हैं कि उसके नतीजे में हमारे फ़ैसले और क़दम सही और पसन्दीदा नतीजों को हासिल करने का ज़रिआ बनें? अपने और दूसरों के जज़बात को समझने और उन्हें मैनेज करने की सलाहियत का नाम जज़बाती ज़िहानत है। इसके सिलसिले में भी ट्रेनिंग के कोर्स आमतौर पर हर अच्छे कोच और काउंसलर के पास मौजूद होते हैं। शादी के निहायत अहम मरहले में, जिसका गहरा ताल्लुक़ जज़बात से है, अगर दूल्हा और दुल्हन को जज़बाती ज़िहानत के ज़रूरी कोर्स से गुज़ारा जाए तो 'इन शाअल्लाह' इसके भी फ़ायदेमन्द नतीजे निकलेंगे।

(7) एक अहम ज़रूरत कम्यूनिकेशन यानी ख़यालात और जज़बात को समझने की है। मेरा तजरिबा यह है कि शादीशुदा ज़िन्दगी के मसलों की एक बड़ी वजह ख़राब कम्यूनिकेशन होता है। दोनों में से किसी के दिल में नफ़रत नहीं होती, मुहब्बत ही होती है, लेकिन इस कैफ़ियत की तरजुमानी ज़बान नहीं कर पाती। लहजा और ज़बान का तीखापन रिश्तों में ज़हर घोल देता है। ग़ैर-वाज़ेह और अस्पष्ट कम्यूनिकेशन ग़लतफ़हमियाँ पैदा करता है और रिश्तों में दराड़ें डालता है। बात करने में हिचकिचाहट, टाल-मटोल और देरी ग़लतफ़हमियाँ भी पैदा करती हैं और दोनों को अलग-अलग और एक-दूसरे से जुदा दायरों में पहुँचा देती हैं। अच्छे, पाकीज़ा और सेहतमन्द जज़बात का जोश से भरपूर इज़हार न हो तो उनकी वह ग़ैर-मामूली ताक़त बेकार हो जाती है जिसके ज़रिए वे रिश्तों को मज़बूती दे सकते हैं। दूल्हा और दुल्हन को इन सबकी तरबियत मिलनी चाहिए। एक अच्छे ट्रेनिंग प्रोग्राम में अभ्यासों, मिसालों और केस स्टडीज़ वग़ैरा के ज़रिए से दूल्हा और दुल्हन को इस लायक़ बना देना चाहिए कि वे जब भी बोलें तो उनके दरमियान रिश्ता मज़बूत-से-मज़बूत होता जाए। न सिर्फ़ आपस में, बल्कि ससुराली रिश्तेदारों

से भी बात करें तो कम्यूनिकेशन ताल्लुक़ को और ज़्यादा मज़बूत ही करे।

(8) आख़िरी बात यह है कि शौहर और बीवी को यह भी मालूम हो कि उनके रिश्ते पर असरन्दाज़ होनेवाली वजहें सिर्फ़ वे ख़ुद और उनके क़रीबी रिश्तेदार ही नहीं हैं। सबसे ताक़तवर वजह कायनात के रब की ज़ात है। उन्हें ख़ुदा की तरफ़ पलटने की तरबियत भी मिलनी चाहिए। रिश्ते का चुनाव करने के लिए वे ख़ुदा से दुआ करें। इसके लिए पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) ने जो ख़ास दुआ सिखाई है, उसका एहतिमाम करें। इस दुआ को इस्तिख़ारा कहा जाता है। शादी के बाद भी हर अहम काम या फ़ैसले से पहले इस्तिख़ारा करें।

शौहर बीवी के लिए और बीवी शौहर के लिए दुआ करे। एक-दूसरे के लिए दुआ मुहब्बत बढ़ाती है और तलख़ियों को मिटा देती है। सोने से पहले शौहर बीवी पर और बीवी शौहर पर वे दुआएँ और आयतें पढ़कर फूँके जो अल्लाह के रसूल मुहम्मद (सल्ल॰) से साबित हैं। कभी-कभी मिलकर दुआ करें। जब भी कोई मुश्किल हो, कोई झगड़ा हो या रिश्ता किसी मुश्किल से दोचार हो तो सबसे पहले ख़ुदा से मदद माँगी जाए। एक मुसलमान की सबसे बड़ी ताक़त दुआ, ख़ुदा पर ईमान और उससे ताल्लुक़ की ताक़त ही है। यह ताक़त शादीशुदा रिश्ते में भी पूरी तरह इस्तेमाल होनी चाहिए।

नीचे दी गई बातों की ज़रूरी तरबियत भी इस ट्रेनिंग कोर्स का हिस्सा होना चाहिए—

(1) माफ़ करने की तरबियत देना। माफ़ करना और माफ़ी चाहना ये दोनों मिज़ाज की बड़ी अहम ख़ासियतें होती हैं। रिश्तों की मज़बूती में इनका बहुत अहम किरदार होता है।

बहुत-से लोगों के अन्दर यह सलाहियत नहीं होती। इस मरहले पर इसकी अहमियत भी लड़कों और लड़कियों को मालूम होनी चाहिए और उसकी सलाहियत भी उनके अन्दर पैदा होनी चाहिए। माफ़ी चाहना सिर्फ़ बेजान जुमले का नाम नहीं है, एक रवैये का नाम है। (इसकी तफ़सील मेरे अगले लेख में आ रही है।)

(2) शुक्रगुज़ारी सिखाएँ। दूल्हा और दुल्हन को सिखाएँ कि कैसे एक-दूसरे के लिए, घरवालों के लिए और ख़ुदा के लिए शुक्रगुज़ारी के जज़बात परवान चढ़ाए जा सकते हैं। जिस चीज़ को आजकल नेक और अच्छी सोच (Positive Mental Attitude) कहा जाता है उसका सबसे ख़ूबसूरत मज़हर इस्लाम में शुक्र का तसव्वुर है।

(3) ख़ुश रहना सिखाएँ। दूल्हा और दुल्हन अपनी ज़िन्दगी के सबसे ज़्यादा ख़ुशियों से भरे दौर की शुरुआत कर रहे हैं। उन्हें सिखाइए कि कैसे वे इन लम्हों को यादगार बना सकते हैं। छोटी-मोटी कमज़ोरियों को नज़रन्दाज़ करना और एक-दूसरे की शख़्सियतों के हसीन पहलुओं पर नज़रें जमा देना, यही पाएदार शादीशुदा रिश्ते का अस्ल राज़ है। इसी से यह रिश्ता प्यार-मुहब्बत और आराम व सुकून का घर बन जाता है।

(4) इसके साथ-साथ लड़के और लड़की को इसकी भी तरबियत मिलनी चाहिए कि वे एक-दूसरे के लिए कैसे कशिश (आकर्षण) बन सकते हैं। लड़की के लिए बनाव-शृंगार सिर्फ़ शादी के दिन के लिए नहीं है और न पार्टियों के लिए है। उसे सबसे ज़्यादा शौहर के लिए सँवरना चाहिए। शौहर को भी कशिश से भरपूर बने रहने की कोशिश करनी चाहिए। कशिश का ताल्लुक़ जिस्मानी हुस्न से भी है, लेकिन उससे ज़्यादा अन्दरूनी हुस्न से है। बातचीत, लब व लहजा और रवैये का हुस्न ज़्यादा देर तक कशिश पैदा करता है।

(5) लड़कियों को बताएँ कि हर रिश्ता अलग होता है। माँ और सास के बीच मुवाज़ना (तुलना) करने की आदत सही नहीं है। माँ की मुहब्बत और सास की मुहब्बत में वैसा ही फ़र्क़ होता है, जैसे बाप की मुहब्बत और भाई की मुहब्बत में फ़र्क़ होता है। मुहब्बत अलग तरह हो तो यह नहीं समझना चाहिए कि सास को उससे लगाव नहीं है। इसी तरह का मामला हर ससुराली रिश्ते का है। हर घर का अपना कल्चर होता है। उसके अच्छे पहलू भी होते हैं और ख़राब भी। घरों के कल्चर और रिवायतों के बेसबब मुवाज़ने से भी बचना चाहिए।

(6) लड़की को शौहर के माल की क़द्र करने की आदत होनी चाहिए। उसके काम और मसरूफ़ियतों की भी क़द्र होनी चाहिए। इसी तरह लड़के को अपनी बीवी की क़ुरबानियों, मेहनतों और काम की क़द्र करनी चाहिए।

एक अच्छा ट्रेनर जो इस्लाम की तालीमात से भी वाक़िफ़ हो और कोचिंग की नई तकनीकों से भी, वह इस सब बातों का लिहाज़ करते हुए ऐसा ट्रेनिंग कोर्स डिज़ाइन कर सकता है जो फ़ायदेमन्द हो और निहायत दिलचस्प भी। कहानियों, क़िस्सों, अभ्यासों, केस स्टडीज़ और एन॰एल॰पी॰ वग़ैरा की दिलचस्प व असरदार तकनीकों के ज़रिए से लड़के और लड़की के अन्दर ज़रूरी बदलाव लाया जा सकता है।

शादीशुदा ज़िन्दगी के झगड़े और काउंसलिंग

अल्लाह ने शौहर और बीवी को एक-दूसरे के लिए सुकून का ज़रिआ बनाया है। क़ुरआन में है, "और उसकी निशानियों में से यह है कि उसने तुम्हारे लिए तुम्हारी ही जिंस से जोड़े बनाए ताकि तुम उनके पास सुकून हासिल करो, और तुम्हारे दरमियान मुहब्बत और रहमत पैदा कर दी", (क़ुरआन, सूरा-30 रूम, आयत-21)। यह इनसानी ज़िन्दगी की बड़ी ज़रूरत है कि शौहर और बीवी एक-दूसरे के लिए सुकून की वजह हों। यह सूरतेहाल हो तो उससे जो नफ़सियाती सुकून और ज़ेहनी व जज़बाती इत्मीनान हासिल होता है वह ख़ुशहाल ज़िन्दगी के लिए और ज़िन्दगी के अलग-अलग मैदानों पर कामयाबी के लिए बुनियाद का काम करती है। इसी लिए अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने एक अच्छी बीवी को मर्द के लिए अल्लाह की सबसे बड़ी नेमतों में से एक क़रार दिया है। ऐसा ही मामला औरत के साथ भी है। शौहर और बीवी में एक-दूसरे के साथ मुहब्बत और आपसी ताल-मेल हो तो घर भी सुकून की जगह बनती है। बच्चों को ख़ुशगवार माहौल मिलता है। ऐसे माँ-बाप के बच्चे नफ़सियाती लिहाज़ से मज़बूत और अच्छी जज़बाती ज़िहानत के मालिक होते हैं। एक मिसाली जोड़ा सिर्फ़ अपने और बच्चों के लिए ही नहीं, बल्कि पूरे ख़ानदान के दूसरे हिस्सों पर भी अच्छे असर डालता है और आख़िर में एक अच्छे समाज के बनाने में किरदार अदा करता है। इसके बजाए अगर शौहर और बीवी की आपस में अनबन हो तो घर उन दोनों के लिए जहन्नम बनता ही है, सबसे ज़्यादा नुक़सान बच्चों का होता है। उनके हवास (इन्द्रियाँ) लगातार नाख़ुशगवार मंज़रों की ज़द में रहते हैं। नकारात्मक जज़बात और नकारात्मक रवैयों के हंगामों के दरमियान जब

उनके मासूम जज़बात परवान चढ़ रहे होते हैं, तो उनकी शख़्सियतों में कमी रह जाती है। जज़बाती ज़िहानत कम हो जाती है। बचपन के नाख़ुशगवार तजरिबे ज़िन्दगी-भर उनका पीछा करते हैं। उनके अन्दर ऐसे रवैयों को परवान चढ़ाते हैं जो सारी ज़िन्दगी उनको नुक़सान पहुँचाते रहते हैं। एक जोड़े के दरमियान तनाव, शौहर-बीवी के माँ-बाप, भाइयों, बहनों और उनके ख़ानदानों पर भी असर डाल सकता है। इस तरह एक जोड़े का झगड़ा पूरे समाज का ज़ख़्म बन सकता है।

हमारे मुल्क में शादीशुदा लोगों के झगड़ों की दर बढ़ती जा रही है। दस साल पहले हमारे मुल्क में एक हज़ार में से एक शादी टूटती थी अब यह दर बढ़कर पन्द्रह हो गई है। बड़े शहरों में पिछले कुछ सालों में तलाक़ की दर कई गुणा बढ़ गई है। केरला जैसे तरक़्क़ीयाफ़ता राज्य में हर पाँच घंटों में एक शादी टूट रही है। मुसलमानों में भी सूरतेहाल बहुत अच्छी नहीं है। फ़ैमली अदालतों में मुसलमान जोड़ों के झगड़ों का फ़ीसद बढ़ता जा रहा है। यह एक बहुत बड़ी परेशानी है और हम सबकी ज़िम्मेदारी है कि इसपर क़ाबू पाने की कोशिश करें।

अल्लाह ने शादीशुदा ज़िन्दगी के झगड़ों का हल यह बताया है कि पहले मियाँ-बीवी आपस में अपने झगड़े को ख़ुशदिली के साथ और एक-दूसरे से माफ़ी-तलाफ़ी करते हुए हल कर लें और ऐसा न हो सके तो किसी तीसरे आदमी की मदद लें, जिसे क़ुरआन का तहकीम का उसूल कहा जाता है। अल्लाह फ़रमाता है—

> "अगर तुमको मियाँ-बीवी के दरमियान ताल्लुक़ात बिगड़ जाने का डर हो तो एक फ़ैसला करनेवाला मर्द के रिश्तेदारों में से और एक औरत के रिश्तेदारों में से तय करो, वे दोनों सुलह करना चाहेंगे तो अल्लाह मिलाप की सूरत निकाल देगा।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-35)

यही तहकीम नए ज़माने में काउंसलिंग कहलाती है। अब काउंसलिंग एक पूरी साइंस है और इसमें नए असरदार तरीक़ों की मदद से झगड़ों को

हल करने की कोशिश की जाती है। इस बात की ज़रूरत है कि काउंसलिंग के ऐसे इदारे मुस्लिम समाज में भी क़ायम हों। ईसाइयों में चर्च के अन्दर काउंसलिंग के इदारे होते हैं। यहाँ काउंसलिंग करनेवालों को ऊँचे दरजे की ट्रेनिंग दी जाती है। ज़रूरत इस बात की है कि हमारी मस्जिदों और दीनी मरकज़ों में भी ऐसे इदारे क़ायम हों और इन मसलों को हम इस्लामी शरीअत की रहनुमाई में और नए तरीक़ों की मदद से हल करें। इसलिए जो लोग मुसलमानों के दरमियान काउंसलिंग का काम करना चाहें, उनके लिए ज़रूरी है कि वे इस्लाम और इस्लामी शरीअत से भी अच्छी तरह वाक़िफ़ हों और काउंसलिंग के नए तरीक़ों की भी महारत रखें। इस मसले के शरई और दीनी पहलू पर पहले से तफ़सीलात मौजूद हैं। इस मज़मून में काउंसलिंग के फ़न की शुरुआती चीज़ों पर रौशनी डालने की कोशिश की गई है।

पिछले मज़मून (शादी से पहले काउंसलिंग) में मैंने शुऊर और लाशुऊर पर बातचीत की थी। अकसर झगड़ों की वजह लाशुऊर और उसके नतीजे में बननेवाला ख़ाका होता है। शादीशुदा ज़िन्दगी के झगड़ों की एक बड़ी वजह यह होती है कि शौहर और बीवी के ख़ाके एक-दूसरे से टकराते हैं। इसकी वज़ाहत नीचे दी गई मिसालों से होगी—

(i) एक बीवी जो ज़िन्दगी-भर रिवायती घरानों में सास-बहू के झगड़े देखकर बड़ी हुई और ज़ालिम सासों के बेशुमार क़िस्से ज़िन्दगी-भर सुनती रही, उसका सास के बारे में तसव्वुर ही यह है कि वह एक ज़ालिम मख़लूक़ का नाम है। 'हर सास ज़ालिम होती है' इस यक़ीन की वजह से सास की कोई अच्छी बात वह देख ही नहीं पाती। इसके मुक़ाबले में शौहर का यह यक़ीन है कि बहू हमेशा सास के सिलसिले में नफ़रत ही के जज़बात रखती है। वह अपनी बीवी के जाइज़ मसलों को भी समझ नहीं पाता। अब जब भी सास का कोई मसला सामने आता है बीवी और शौहर में झगड़ा हो जाता है। इस झगड़े की वजह दोनों के अपने-अपने दावे हैं। इन बेदलील दावों की वजह से दोनों दो अलग इन्तिहाओं पर हैं। न बीवी शौहर की माँ से सही मुहब्बत और ताल्लुक़ को समझ पा रही है और न शौहर बीवी के मसलों को।

(ii) बीवी अपने घर में बाप, भाई वग़ैरा को देखकर बड़ी हुई। उनकी शख़्सियत, किरदार और उनके मिज़ाज की वजह से मर्द का एक ख़ास तसव्वुर उसके लाशुऊर का हिस्सा बन गया। उस तसव्वुर से वह अपने शौहर को देखती है। जो ख़ूबियाँ उसने अपने बाप में देखी थीं वह शौहर में तलाश करती है। शौहर में हो सकता है दूसरी बहुत-सी ऐसी ख़ूबियाँ हों जो उसके बाप में नहीं हैं। लेकिन उसका लाशुऊर तो अपने बाप की शख़्सियत के फ़्रेम से हर मर्द को देखने और परखने का आदी हो गया है। इसी तरह शौहर के ज़ेहन में बचपन की यादें अच्छी तरह महफ़ूज़ हैं कि उसकी माँ सुबह-सवेरे उठकर घर का काम शुरू कर देती थी। सारे घरवालों की ख़िदमत करती थी, वग़ैरा। अब वह बीवी को भी इसी ख़ाके की मदद से परखना चाहता है।

यहाँ कुछ बातें मिसाल के तौर पर बयान की गई हैं। ऐसी सैकड़ों मिसालें दी जा सकती हैं। एक अच्छे काउंसलर का काम यह है कि वह झगड़ों का सबब लाशुऊर में ढूँढ़ने की कोशिश करे। ख़ुशी की बात यह है कि अल्लाह ने लाशुऊर को बदलने और उसकी रीप्रोग्रामिंग करने का भी इमकान रखा है। काउंसलर का काम यह है कि शौहर और बीवी के लाशुऊर को इस तरह प्रोग्राम करे कि वे एक-दूसरे से मुहब्बत कर सकें।

मिसाल के तौर पर ऊपर की मिसालों में बीवी को अच्छी सासों की बेशुमार मिसालें बताई जाएँ और उसके लाशुऊर में ज़ालिम सास की जो तस्वीर बसी हुई है, उसे बदला जाए। या शौहर को बताया जाए कि ज़माने और हालात के फ़र्क़ की वजह से अब औरतों के काम करने की आदतों में भी फ़र्क़ आ गया है।

हमारे दिमाग़ की एक ख़ास बात यह है कि वह कभी-कभी हक़ीक़तों को बदलकर, उनके कुछ हिस्सों को मिटाकर या उन्हें आम (Generalise) बनाकर क़बूल करता है। क़िस्से और हक़ीक़त को हम देखते और सुनते हैं लेकिन वे हमारे ज़ेहन में हमारे मिज़ाज और तजरिबों के मुताबिक़ बैठ जाते हैं। वह कहानी हम सबने सुनी है कि एक हाथी जब अंधों के गाँव में गया तो किसी ने उसकी दुम पकड़ी तो उसके ज़ेहन में हाथी का तसव्वुर एक

रस्सी की तरह बैठ गया और किसी ने पैर पकड़ा तो एक ड्रम की तरह। हम भी आमतौर पर चीज़ों और क़िस्सों को इसी तरह देखते हैं। कुछ बातें क़बूल करते हैं और कुछ बातें छोड़ देते हैं। कुछ को आम बात बना देते हैं। यह ख़ास बात अल्लाह ने हमारे ही फ़ायदे के लिए बनाई है लेकिन हम इसका कभी ग़लत इस्तेमाल कर लेते हैं।

हक़ीक़त के कुछ हिस्सों को दिमाग़ मिटा देता है क्योंकि अगर दिमाग़ ऐसा न करे तो हमारे लिए ज़िन्दगी मुश्किल हो जाए। हम रास्ता चलते हुए हर मंज़र, हर गाड़ी का नम्बर, हर दुकान का नाम याद रखें तो हमारी याद्दाश्त बोझल हो जाएगी और ज़रूरी बातों को याद रखना मुश्किल हो जाएगा। हादिसे, ग़म और परेशानियाँ हम न भूलें तो ज़िन्दगी अजीरन हो जाएगी। लेकिन भूल जाने, नज़रन्दाज़ करने और मिटा देने की यह दिमाग़ी सलाहियत नीचे दी गई मिसालों में झगड़े और ग़लत रवैये का सबब बनती है।

- दिमाग़ पसन्दीदा लोगों की ख़ामियों को और नापसन्दीदा लोगों की ख़ूबियों को मिटा देता है। औरत को अपनी माँ की ख़ूबियाँ नज़र आती हैं, कमियाँ नज़र नहीं आतीं। इसके मुक़ाबले में सास की ख़ूबियाँ नज़र नहीं आतीं। बीवी देखती है कि ऑफ़िस से आने के बाद शौहर उसकी बातों में दिलचस्पी नहीं ले रहा है, लेकिन यह हक़ीक़त उसका दिमाग़ मिटा देता है कि वह एक घंटा बस में सफ़र करके और दिन-भर काम करके लौटा है और उसको कुछ देर आराम की ज़रूरत है।
- इसी तरह कभी-कभी दिमाग़ चीज़ों को बदलकर देखता है। बीवी के चेहरे पर किसी टेंशन की वजह से तनाव है, शौहर समझता है कि उसके आने से बीवी ख़ुश नहीं हुई। बीवी को कोई लतीफ़ा याद आया और उसने हँस दिया, शौहर समझता है कि उसके लिबास पर हँस रही है।
- कभी-कभी दिमाग़ चीज़ों को आम बनाकर क़बूल करता है और वे ज़ेहन में बैठ जाती हैं और हमारे रवैयों पर असर डालती हैं। एक ख़ातून मेरे पास आईं जो बचपन में अपने बाप के ज़ुल्म का शिकार हुई थीं और

अब उनके दिमाग़ में तमाम मर्दों के बारे में एक आम तसव्वुर था। उन्हें शौहर से इसलिए लगाव नहीं था कि उनका ज़ेहन दुनिया के किसी मर्द को भी एक अच्छे इनसान की हैसियत से क़बूल करने के लिए तैयार नहीं था। जब तक उनके ज़ेहन की यह तस्वीर नहीं बदली जाएगी वे ख़ुशगवार शादीशुदा ज़िन्दगी नहीं गुज़ार सकतीं। कभी-कभी तो बड़ी दिलचस्प और बज़ाहिर मज़ेदार मिसालें सामने आती हैं। एक नौजवान को बचपन में अपने टीचर से, उसके ज़ुल्म की वजह से, नफ़रत हो गई। वह लम्बी और गोरी थी, अब उसका ज़ेहन हर लम्बी और गोरी औरत से नफ़रत करता है।

ये बातें आदमी अकसर जानता भी नहीं। यह सब लाशुऊर में होता है। मिसाल के तौर पर ऊपर की मिसाल में उस नौजवान को न यह मालूम था कि उसे लम्बी और गोरी औरतों से नफ़रत है और न यह मालूम था कि इसका कोई सबब है। बस इस तरह की कोई औरत सामने आ जाए तो उसके अन्दर नफ़रत की लहर दौड़ जाती थी। इस मामले की तह तक पहुँचना काउंसलर का काम है।

इसलिए काउंसलर का काम यह भी है कि वह शादी-शुदा झगड़ों का सबब शौहर और बीवी के ज़ेहन में बनी हुई तस्वीरों में तलाश करने की कोशिश करे। इन तस्वीरों को हम आसानी से काउंसलिंग की मदद से बदल सकते हैं।

झगड़ों की एक वजह कम्यूनिकेशन भी होता है। मसला कुछ नहीं होता लेकिन कम्यूनिकेशन की कमी की वजह से वह उलझ जाता है। हमारा ज़ेहन लफ़्ज़ों, लब व लहजे, आवाज़ के उतार-चढ़ाव, चेहरे के तास्सुरात, इन सबका असर क़बूल करता है। यह असर ज़ेहन में बैठ जाता है और रवैयों को मुतास्सिर करने लगता है। एक बेख़याली में कहा हुआ लफ़्ज़ नश्तर बनकर दिल को छेद देता है। हमें पता नहीं चलता कि हमने अपने शौहर या बीवी के दिल का ख़ून कर दिया है। लेकिन क़त्ल की यह वारदात हो चुकी होती है। बाद में मुतास्सिर आदमी उस क़िस्से को या लफ़्ज़ को भूल जाता है, उसे याद भी नहीं रहता लेकिन उस क़िस्से ने जो दराड़ पैदा की

है, वह बाक़ी रहती है और ऐसी दराड़े धीरे-धीरे ताल्लुक़ात और जज़बात को बेरुख़ी का शिकार बनाती रहती हैं। कई बार कम्यूनिकेशन न होने से भी मसले पैदा होते हैं। हम दिल की बात कह नहीं पाते। अपना नज़रिया समझा नहीं पाते। अपनी मजबूरियों और मुश्किलों का इज़हार नहीं कर पाते। कम्यूनिकेशन की यह कमी ग़लतफ़हमी पैदा करती है। ग़लतफ़हमियों का यह सिलसिला भी ताल्लुक़ात में दराड़ें पैदा करना शुरू करता है। एक अच्छा काउंसलर झगड़ों के हल के लिए कम्यूनिकेशन के मॉडल को भी समझता है। जो दराड़ें पैदा हुई हैं उन्हें पाटता है। उसकी तकनीकों की तफ़सील को इस मज़मून में लिखा नहीं जा सकता है। लेकिन ऐसे तरीक़े मौजूद हैं जिनसे माज़ी (अतीत) की कम्यूनिकेशन की कमी और उसके नतीजे में पैदा होनेवाले मसलों को दूर किया जा सकता है। फिर वह आइंदा के लिए असरदार कम्यूनिकेशन की तरबियत भी देता है।

आप नीचे दिए गए केसों पर ग़ौर कीजिए–

केस नम्बर-1

दिन-भर की मेहनत के बाद इरफ़ान शाम को घर लौटा। बाइक पर धूप में लम्बा सफ़र और हाथों में शॉपिंग के भारी बैगों की वजह से वह पसीने से लतपत था। उसकी बीवी शहाना ने दरवाज़ा खोला।

"आज भी आप लेट हो गए? आप समझते क्यों नहीं कि मैं घर में अकेली रहती हूँ!"

"मैं ऑफ़िस से बाज़ार गया था। तुमने कहा था कि यह ज़रूरी है। वहाँ से फिर लेबोरेट्री गया तुम्हारी रिपोर्टें लेने के लिए। तुम्हें पता है वह कितनी दूर है?"

"अच्छा इस पैक में क्या है?"

"तुम्हारे लिए एक छोटा-सा तोहफ़ा। यह परफ़्यूम मुझे बहुत पसन्द आया। शेल्फ़ में नज़र आया तो ले लिया।"

"अच्छा! अच्छा! लेकिन मैं तो एक दूसरा फ़्लोरल परफ़्यूम लेना चाहती

थी। अच्छा! तुम्हें मालूम है तुमने क्या किया? मेरा बॉडी लोशन फिर भूल आए।''

''ओह! सॉरी, कल लेता आऊँगा।''

''आप यह हमेशा करते हो, पता नहीं क्यों मेरी चीज़ें ही भूल आते हो।''

केस नम्बर-2

अनीस और फ़रीहा एक मिसाली जोड़ा थे। उनकी एक-दूसरे के लिए मुहब्बत व जाँनिसारी पूरे ख़ानदान में मशहूर थी और लोग इस बात पर उनसे रश्क करते थे। लेकिन इधर कुछ सालों से इस मिसाली ताल्लुक़ में दराड़ें आनी शुरू हो गईं। वजह थी उनका सात साल का नटखट और शरारती बच्चा आतिफ़।

फ़रीहा का ख़याल है कि आतिफ़ बहुत शरारती है। उसके अन्दर नज़्म व ज़ब्त (Decipline) नहीं है। वह लापरवाही के साथ-साथ बदतमीज़ी भी करने लगा है। वह सोचती है कि अगर अभी कंट्रोल न किया गया तो उसकी आदतें पुख़्ता हो जाएँगी। वह उसके लिए उसूल-ज़ाब्ते बनाती है, सज़ाओं और इनामों का एलान करती है और हमेशा उसके पीछे रहती है। वह यह भी समझती है कि अनीस को इस मसले पर जो ध्यान देना चाहिए वह नहीं दे पा रहा है। वह कभी बच्चे की हिमायत करता है और कभी ख़ामोश तमाशाई बना रहता है। कभी मुस्कुराते हुए माँ-बेटे की कश्मकश देखता रहता है। फ़रीहा महसूस करती है कि इससे आतिफ़ बेबाक बनता जा रहा है।

अनीस समझता है कि उसकी बीवी ग़ैर-ज़रूरी तौर पर एक छोटे मसले को बड़ा बना रही है। आतिफ़ का रवैया उसकी उम्र के लिहाज़ से है। उम्र के साथ वह ख़ुद सलीक़ा और अदब सीख जाएगा। लगातार पीछे पड़े रहने और रात-दिन झक-झक और किचकिच करने से सुधार नहीं होगा, सूरतेहाल और ख़राब होगी। बार-बार दख़ल देने की वह ज़रूरत महसूस नहीं करता, बल्कि उसे नुक़सानदेह समझता है। ये सब बातें वह समझता है लेकिन बीवी की हस्सास तबीयत के ख़ौफ़ से उसे बोल नहीं पाता।

इन दोनों केसों पर ग़ौर कीजिए और सोचिए कि इनका हल क्या हो सकता है?

आप ग़ौर करें तो महसूस करेंगे कि पहले केस में बुनियादी मसला यह है कि बीवी शौहर की दुनिया को देख ही नहीं पा रही है, न उसके मसलों को देख पा रही है, न उसके जज़बात को समझ पा रही है। यहाँ काउंसलर का अप्रोच यही होना चाहिए कि उसकी सोच बड़ी करे। जो बातें वह नज़रन्दाज़ कर रही है, उसके दिमाग़ को उन बातों को समझने और उन्हें महसूस करने के लायक़ बनाए। शौहर की जगह ख़ुद को रखकर देखने, सुनने और ग़ौर करने की सलाहियत उसके अन्दर जगाए।

दूसरे केस में दो मसले हैं। एक तो यह कि एक ही मसले को दोनों दो अलग-अलग नज़रिए से देख रहे हैं और दूसरे यह कि उसका बुनियादी सबब कम्यूनिकेशन की कमी है। एक-दूसरे से शदीद मुहब्बत करनेवाले मियाँ-बीवी के दरमियान उनकी मुहब्बत ही कम्यूनिकेशन की कमी पैदा कर रही है। शौहर अपनी बात बीवी को कह नहीं पा रहा है। उनके मसले का हल यह है कि काउंसलर दोनों के दरमियान सेहतमन्द बातचीत की राह हमवार करे और दोनों खुले दिल से बात करके अपने बच्चे की तरबियत के किसी प्रोग्राम पर, एक राय हो जाएँ। यह होगा तो उनका मसला हल हो जाएगा।

इस बहस की रौशनी में असरदार काउंसलिंग के नीचे दिए गए तरीक़े हो सकते हैं—

(1) पहले झगड़े की वजहों को सुनिए। शौहर और बीवी से अलग-अलग भी सुनिए और दोनों को साथ-साथ बिठाकर भी सुनिए। समझने की कोशिश कीजिए कि अस्ल मसला क्या है।

(2) उन ख़यालात को समझने की कोशिश कीजिए जो दोनों के दिमाग़ों में बैठे हुए हैं। अगर कोई ग़लत तसव्वुर किसी ग़लत रवैये का सबब बन रहा है तो क़िस्सों और मिसालों के ज़रिए उन्हें बदलिए और नए हक़ीक़त पर मब्नी तसव्वुरात ज़ेहन में बैठाइए। मिसाल के तौर पर अगर बीवी के ज़ेहन में यह बात बैठी हुई है कि हर सास ज़ालिम

होती है तो उसे अच्छी सासों की दसियों मिसालें सुनाइए और कोशिश कीजिए कि उसका तसव्वुर ठीक हो जाए। यह काम एक माहिर काउंसलर ही के ज़रिए होता है। यानी काउंसलर की रहनुमाई में बीवी ख़ुद ऐसी मिसालों को याद करती है। अपने ग़लत तसव्वुर को बदलती है और उसके ज़ेहन में मुसबत (सकारात्मक) तब्दीली पैदा हो जाती है।

(3) ख़ुशगवार दिनों की याद और तजरिबे को ताज़ा कराइए। यह झगड़े के हल और शौहर-बीवी के दरमियान नफ़सियाती दूरी ख़त्म करने का आसान तरीक़ा है। अगर शौहर और बीवी के बीच कभी बहुत अच्छे ताल्लुक़ात रहे हों, तो उन यादों को ताज़ा करने का मौक़ा दीजिए। उन्हें उन लम्हों में लेकर जाइए। एन॰एल॰पी॰ वग़ैरा में ऐसी यादों को ताज़ा कराके एंकरिंग करते हैं। ये ख़ुशगवार यादें बहुत फ़ायदेमन्द मरहम होती हैं जिससे रिश्तों की दराड़ और ताल्लुक़ात के ज़ख़्मों को आसानी से भरा जा सकता है। एक अच्छा काउंसलर शौहर और बीवी को उन लम्हों में पहुँचा देता है जब वे एक-दूसरे पर जान छिड़कते थे।

(4) एक-दूसरे की ख़ूबियों और एहसानों को याद करना और उन्हें ज़ेहन में ताज़ा कराना भी एक असरदार नफ़सियाती तरीक़ा है। काउंसलर सवालों की मदद से शौहर के ज़ेहन में बीवी की तमाम ख़ूबियों को याद कराए। हर वह ख़ूबी जिसे उसने कभी पसन्द किया हो, चाहे उसका ताल्लुक़ उसके मिज़ाज और रवैये से हो या हुस्न व ख़ूबसूरती से, शौहर के लिए उसकी मुहब्बत और ख़ुलूस से हो या किसी सलाहियत व क़ाबिलियत से। हर अच्छी चीज़ को वह याद करे।

(5) जो रवैये और कमियाँ ताल्लुक़ात में ख़राबी का सबब बन रही हैं, उनकी आमतौर पर दो क़िस्में होती हैं—

✪ कुछ तो वे बातें होती हैं जो ग़लत गुमान या ग़लत तसव्वुर की वजह से होती हैं। उनका ज़िक्र ऊपर आ गया है। लाशुऊर की

तरबियत के ज़रिए उन्हें बदला जा सकता है।

✪ कुछ मिज़ाज की मुस्तक़िल कमज़ोरियाँ होती हैं। कोई शौहर सुस्त मिज़ाज है, कोई बीवी बहुत बातूनी है, ऐसी कमज़ोरियाँ अगर ताल्लुक़ात को ख़राब करने का सबब बन रही हैं तो उन कमज़ोरियों को दूर करना फ़ौरी तौर पर मुमकिन नहीं होता। इस सिलसिले में क़ुरआनी हिदायत यह है—

"अगर वे तुम्हें नापसन्द हों तो हो सकता है कि एक चीज़ तुम्हें पसन्द न हो, मगर अल्लाह ने इसी में बहुत कुछ भलाई रख दी हो।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-19)

यही रवैया काउंसलर को भी अपनाना चाहिए। उसे शौहर या बीवी के ज़ेहन को इस मक़सद के लिए तैयार करना चाहिए कि वह इस कमज़ोरी को नज़रन्दाज़ करे, उसे भुला दे। ज़ेहन से उसको मिटा देने के नफ़सियाती तरीक़े मौजूद हैं। उन तरीक़ों का इस्तेमाल करके उसे मिटा देना चाहिए और कोशिश करनी चाहिए कि ज़ेहन बीवी या शौहर की शख़्सियत के दूसरे नेक और अच्छे पहलुओं पर मुतवज्जह हो जाए।

(6) कुछ रवैये किसी ख़ास घटना या ग़लती की पैदावार होते हैं। माज़ी (अतीत) की सफ़ाई भविष्य के बेहतर ताल्लुक़ात के लिए ज़रूरी होती है। माज़ी की सफ़ाई के लिए ज़रूरी है कि काउंसलर शौहर और बीवी को इस पोज़ीशन पर लेकर आए कि वे अपनी ग़लतियों को अच्छी तरह समझ जाएँ और संजीदगी के साथ एक-दूसरे से माफ़ी माँगकर उसकी भरपाई के लिए तैयार हो जाएँ। माफ़ी सिर्फ़ माफ़ी के बोल का नाम नहीं है, बल्कि यह एक तरीक़ा है जिसके ज़रिए आप सामनेवाले के ज़ेहन और जज़बात को उस ग़लती के असरात से पाक करते हैं जो आपसे हुई है। संजीदा माफ़ी के नीचे दिए गए तरीक़ों पर काउंसलर का ध्यान होना चाहिए—

(क) जो ग़लती आपने की है उसका पूरा तज़किरा करते हुए साफ़ लफ़्ज़ों में माफ़ी माँगिए। कहिए कि फ़ुलाँ-फ़ुलाँ ग़लती के लिए मैं शरमिन्दा हूँ और माफ़ी चाहता हूँ।

(ख) बताइए कि इस ग़लती का दूसरे पर क्या असर हुआ या हो सकता है। इसको भी तसलीम कीजिए।

(ग) इस ग़लती को दोबारा न करने या रवैये में सुधार की यक़ीनदिहानी कराइए।

(7) इन सारे मरहलों के बाद काउंसलर को इस बात की कोशिश करनी चाहिए कि दोनों अच्छे भविष्य के किसी ख़ाके पर एक मत हो जाएँ। दोनों एक-दूसरे से अपनी उम्मीदें लिखें। काउंसलर कोशिश करे कि ये उम्मीदें कम-से-कम हों और अमल करने के क़ाबिल और हक़ीक़त पर मब्नी हों। उन उम्मीदों को पूरा करने के मंसूबे पर भी दोनों एक मत हो जाएँ। काउंसलर उम्मीदों और भविष्य के पसन्दीदा ख़ाके के सिलसिले में दोनों के ज़ेहनों को तैयार करे।

ये कुछ उसूली बातें यहाँ बताई गई हैं। इल्मे-नफ़सियात (मनोविज्ञान) और एल॰एन॰पी॰ वग़ैरा में इनमें से हर एक के लिए मुस्तक़िल तकनीकें मौजूद हैं। एक अच्छा कोच पहले दोनों से ताल्लुक़ बनाता है, उसके मसले को समझता है और फिर उनके बेहतर भविष्य के लिए उनके ज़ेहनों को फिर से तैयार करता है। जो लोग काउंसलिंग के काम में मसरूफ़ हैं उन्हें ज़रूर ये तरीक़े सीखने चाहिएँ।

ख़ानदान

नई दुल्हन का स्वागत

एक ख़ुशगवार ख़ानदान के लिए जहाँ यह ज़रूरी है कि दूल्हा-दुल्हन के बीच बड़े मज़बूत और ख़ुशगवार ताल्लुक़ात बनें, वहीं यह भी ज़रूरी है कि दोनों अपने नए रिश्तेदारों यानी ससुराली रिश्तेदारों से भी मुहब्बत और एतिमाद की बुनियादों पर ताल्लुक़ात बनाएँ। ख़ास तौर से हिन्दुस्तानी समाज में सास और बहू के दरमियान ताल्लुक़ की बड़ी अहमियत है। घर के माहौल को ख़ुशगवार बनाने में इस ताल्लुक़ का बड़ा अहम रोल होता है। अगर सास अपनी बहू को बेटी की तरह और बहू अपनी सास को माँ का मक़ाम देने में कामयाब हो जाए तो घर सुकून की जगह बन जाता है। बीवी के शौहर से ताल्लुक़ात भी बेहद मज़बूत हो जाते हैं। बच्चों को एक पुरसुकून घर और पिछली दो नस्लों की मुहब्बत और मेहरबानी का फ़ायदा मिल जाता है। इसके बरख़िलाफ़ यह रिश्ता तनाव का शिकार हो जाए तो घर में तरह-तरह के मसले जन्म लेने लगते हैं। बेएतिमादी और शक का माहौल फैल जाता है। शिकवे-शिकायतें और उससे आगे बढ़कर फ़ितने और साज़िशें डेरा डालने लगती हैं। इसका ख़राब असर ख़ुद शौहर और बीवी के ताल्लुक़ात में भी पड़ता है। अकसर ख़ानदानी झगड़ों की जड़ यही नाज़ुक ताल्लुक़ होता है। इस ताल्लुक़ को निभाने में शौहर और बीवी का भी अहम रोल होता है और शौहर की माँ का भी। इससे पहले 'शादी से पहले काउंसलिंग' के तहत इस मसले के बारे में उन बातों को बताया गया है जिनका ताल्लुक़ शौहर या बीवी से होता है। यहाँ उन बातों पर रौशनी डाली जा रही है जो दूसरे ससुराली रिश्तेदारों, ख़ास तौर से सास के बारे में हैं।

दुनिया की हर माँ अपने बेटे की दुल्हन का खुली बाँहों के साथ पुरजोश स्वागत करना चाहती है। जिस माँ ने अपने बेटे के सुख के लिए दुनिया की

हर मुसीबत बरदाश्त की और हर तरह की क़ुरबानी दी, वह कैसे यह चाह सकती है कि उसकी शादीशुदा ज़िन्दगी तलख़ियों की शिकार हो जाए। हर माँ अपनी होनेवाली बहू के बारे में सपने देखती है। बड़े अरमानों के साथ बेटे की शादी की तैयारी करती है। शहर-शहर घूमकर दुल्हन का चुनाव करती है। शादी की तैयारियाँ करती है और बड़ी उम्मीदों और ख़ुशियों के साथ इस नए मेहमान का घर में स्वागत करती है।

सवाल यह है कि आख़िर इसके बाद क्या हो जाता है कि अपने अरमानों की मरकज़, अपनी पसन्द से चुनी हुई, उस ख़ूबसूरत लड़की से अचानक उसके झगड़े शुरू हो जाते हैं? और कभी-कभी ये झगड़े इस हद को पहुँच जाते हैं कि घर टूटने की नौबत आ जाती है। इस मसले की नफ़सियाती वजहों को हम समझ जाएँ और थोड़ा समझदारी से काम लें तो बहुत आसानी से इसपर क़ाबू पाया जा सकता है। यक़ीनन इस सिलसिले में सास को अपना रोल अदा करना है और बहू को भी अपना रोल अदा करना है। लेकिन मौज़ू के लिहाज़ से अभी हम सास और ससुराली रिश्तेदारों के मुनासिब रोल को बताएँगे–

(1) दुल्हन की पूरी शख़्सियत का स्वागत कीजिए।

आप दुल्हन की सूरत में एक नई शख़्सियत का अपने घर में स्वागत करने जा रही हैं। इनसानी शख़्सियत सिर्फ़ जिस्मानी वुजूद का नाम नहीं है। हर शख़्सियत की अपनी ख़ासियत होती है। अच्छी भी और बुरी भी। शख़्सियत के अन्दर जिस्म के साथ-साथ सलाहियतें, सिफ़तें, जज़बात, मिज़ाज, आदतें वग़ैरा भी होती हैं। यह लड़की जो आपके घर आई है, एक ख़ास माहौल में इसकी परवरिश हुई है। ऐसा बिलकुल मुमकिन है कि उसके बहुत-से रिवाज आपके घर के रिवाजों से अलग, बल्कि टकरा रहे हों। उसकी आदतें अलग हों। खाने-पकाने के तौर-तरीक़े अलग हों। पसन्द अलग हो। शख़्सियत के स्वागत का मतलब इन सब चीज़ों का स्वागत है। यही चीज़ें आपकी बहू की शख़्सियत का हिस्सा हैं। इन ही चीज़ों के साथ उसकी परवरिश हुई है। आपकी यह ज़िम्मेदारी है कि उसकी शख़्सियत का एहतिराम करें। उसे अपनी पसन्द की ज़िन्दगी गुज़ारने का हक़ दें। उसे

उसकी पसन्द का खाना मिले। अपनी आदत के मुताबिक़ सोने-जागने और रहने-सहने की आसानी मिले। अकसर झगड़े इस बात को न समझने की वजह से पैदा होते हैं। "हमारे यहाँ ऐसा नहीं होता" और "हम इस तरह नहीं इस तरह रहते हैं।" ऐसे जुमले का बार-बार सुनना आपके ख़ानदान में आई उस मासूम नई-नवेली दुल्हन के अन्दर अजनबियत का एहसास पैदा करती है। इन जुमलों की गूँज उसके लाशुऊर में यह एहसास पैदा करती है कि वह इस घर में अजनबी है और यहाँ के माहौल से नामानूस है।

"यह तो तुमने बिलकुल नए तरीक़े से बहुत अच्छी चीज़ पकाई है," "बहुत ख़ूब! यह तो अच्छा तरीक़ा है," "वाह! तुम्हारे घर का यह तरीक़ा तो बहुत ही ख़ूब है।" अगर बहू के अलग तौर-तरीक़ों के सिलसिले में यह अप्रोच आप अपनाएँ तो वह ख़ुद को घर की अहम सदस्य तसव्वुर करेगी। अपनी अच्छी चीज़ों से आपके घर को मालामाल करेगी और आपके घर के रिवाज भी सीखेगी और अपनाएगी। अगर आप दुल्हन की पूरी शख़्सियत का, उसके मिज़ाज की सारी ख़ासियतों के साथ उसका स्वागत करने के लिए ख़ुद को तैयार कर लें और उसकी उन सारी बातों को ख़ुशदिली से क़बूल कर लें जो शरीअत या अख़लाक़ के उसूलों के लिहाज़ से ग़लत न हों, तो 'इन शाअल्लाह' झगड़ों के ज़्यादातर इमकान ख़त्म हो जाएँगे।

(2) अब आपका बेटा सिर्फ़ बेटा नहीं रहा, अपनी बीवी का शौहर भी है और उन दोनों की अपनी फ़ैमली भी है।

अकसर माएँ अपनी बहू का स्वागत करते हुए यह भूल जाती हैं कि वे अपने बेटे की दुल्हन का स्वागत कर रही हैं। यह लड़की अब आपके बेटे की ज़िन्दगी का अहम हिस्सा, बल्कि उसकी पूरक बननेवाली है। आपके बेटे का लिबास और उसके लिए सुकून की वजह बननेवाली है। वैसे ही जैसे कभी आप अपने शौहर की ज़िन्दगी में दाख़िल हुई थीं। अभी तक आपके बेटे की शख़्सियत पूरी तरह आपके साथ जुड़ी हुई थी, अब उसकी ज़िन्दगी में उसकी दुल्हन आई है जो उसके वक़्त का भी हिस्सा लेगी और उसकी दिलचस्पियों का भी। ये दोनों मिलकर अपना एक ख़ानदान बनाएँगे। इस जोड़े को तंहाई का वक़्त भी चाहिए होगा। उनके बहुत-से राज़ भी होंगे।

बहुत-से फ़ैसले ये दोनों मिलकर करेंगे। समझदार सास अपने बेटे और बहू की इन ज़रूरतों को समझती है। वह इस बात के लिए ज़ेहनी और जज़बाती तौर पर तैयार रहती है कि अब उसके बेटे के साथ ताल्लुक़ात का एक नया दौर शरू हो रहा है। इसका यह मतलब नहीं है कि बेटे के साथ ताल्लुक़ कमज़ोर हो रहा है, मतलब सिर्फ़ यह है कि उसकी हैसियत बदल गई है। आपका बेटा जब आपके पेट में था तो ताल्लुक़ की हैसियत कुछ और थी, जब दूध पीने लगा तो हैसियत कुछ और हो गई, इसी तरह बचपन, लड़कपन, जवानी, हर मरहले की हैसियत कुछ और थी। हर मरहले के तक़ाज़े अलग थे। बिलकुल इसी तरह अब वह शौहर बन गया है तो ताल्लुक़ की हैसियत में कुछ बदलाव आएगा। इस बदले हुए ताल्लुक़ को समझे बग़ैर आप उसका हक़ अदा नहीं कर सकतीं। अच्छी और समझदार माँ अपने बेटे और बहू को आज़ादी देती है। ग़ैर-ज़रूरी मश्वरे नहीं देती। उनकी हर बात में टाँग अड़ाने की कोशिश नहीं करती, न उनके निजी वक़्तों में दख़लन्दाज़ी करती है।

जब पोते-पोतियाँ पैदा हों तो यह समझने की ज़रूरत है कि आपके बेटे और बहू को उनकी तरबियत व तालीम के बारे में ज़रूरी फ़ैसले करने का हक़ हासिल है। उन्हें अच्छे मश्वरे ज़रूर दीजिए। उनकी रहनुमाई भी कीजिए। लेकिन उनका यह हक़ भी तस्लीम कीजिए कि अपने बच्चों के बारे में वे फ़ैसला कर सकें।

(3) मेल-जोल पैदा करना (Rapport Building)

अपनी बहू को अपना दोस्त बनाइए। नातजरिबेकार कम उम्र लड़की के मुक़ाबले में आप इसकी ज़्यादा सलाहियत रखती हैं कि उसका दिल जीतकर उसे अपना बेहतरीन दोस्त बनाएँ। दोस्ती या मेल-जोल एक-दूसरे के साथ काम में साझीदार बनने से तरक़्क़ी करता है। अपने और बहू के दरमियान कुछ ऐसी चीज़ें तलाश करें जो आपमें और उसमें एक हों। हो सकता है कुछ शौक़ एक हों। उसे पौधे लगाने का शौक़ हो और आपको भी। रंगों की पसन्द एक जैसी हो। किसी ख़ास शख़्स की तक़रीरें पसन्द हों। तलाश करेंगी तो ऐसी कई चीज़ें मिल जाएँगी जो आपके और आपकी बहू के दरमियान

एक हों। ताल्लुक़ात इन ही चीज़ों से मज़बूत होते हैं। जिन कामों में इख़्तिलाफ़ है उनको अलग-अलग करना और एक-दूसरे की पसन्द का एहतिराम करना और जिन कामों में पसन्द एक हैं उनको मिल-जुलकर पूरा करना और उनके ज़रिए रिश्तों को मज़बूत बनाना, यही अच्छे ताल्लुक़ात का बेहतरीन फ़ॉरमूला है। जब दिलचस्पियों के बारे में मालूम हो जाए तो उसे एक-दूसरे से जुड़ने की बुनियाद बना लीजिए। मिल-जुलकर पौधे लगाइए। पसन्दीदा लेखक की ताज़ा किताब पर एक-दूसरे की राय लीजिए। तक़रीर मिलकर सुनिए और उसपर बातचीत कीजिए।

(4) तारीफ़ और दिलजोई

शादी एक लड़की के लिए बहुत जज़बाती मरहला होता है। जहाँ वह ज़िन्दगी की सबसे बड़ी ख़ुशी से हमकिनार होती है, वहीं माँ-बाप, भाई-बहन, घर-बार, दोस्त और अपनी ज़िन्दगी की तमाम चीज़ों को छोड़कर आपके घर चली आती है। एक अजनबी घर में, एक अजनबी साथी के साथ ज़िन्दगी का नया सफ़र शुरू करते हुए उसके दिल में बहुत-से डर और अन्देशे भी होते हैं। आपको समझना चाहिए कि माँ-बाप और भाई-बहनों के लाड-प्यार में पली-बढ़ी यह मासूम लड़की अपनी ज़िन्दगी के निहायत अहम जज़बाती मरहले से गुज़र रही है। इस मरहले में उससे ग़लतियाँ होना मुमकिन हैं और उसको भरपूर जज़बाती सहारे और दिलजोई की ज़रूरत है। यह काम आप ही कर सकती हैं।

उसको भरपूर मुहब्बत दीजिए। दिल खोलकर तारीफ़ कीजिए। उसकी तमाम अच्छी आदतों की भरपूर तारीफ़ कीजिए। खाना पकाए तो खाने की तारीफ़ कीजिए। घर की सजावट करे तो उसकी तस्वीरें शेयर कीजिए। इसके अलावा उसके शौहर के सामने, माँ-बाप के सामने, अपनी बेटियों और दूसरी बहुओं के सामने भी उसकी अच्छी आदतों के गुन गाइए (लेकिन दूसरी बहुओं की भी तारीफ़ करना मत भूलिए)। आदमी अपने अलावा अपने चाहनेवालों की भी क़द्र चाहता है। उसके माँ-बाप और भाई-बहनों का अच्छे अलफ़ाज़ में तज़किरा कीजिए। उनको भरपूर एहतिराम, इज़्ज़त और मुहब्बत दीजिए। उनकी अच्छी बातों की तारीफ़ कीजिए। इस जज़बाती मरहले में

आपका यह अच्छा सुलूक उसके मासूम दिल पर हमेशा के लिए असर छोड़ेगा। फिर वह भी आपको टूटकर चाहने लगेगी।

(5) सुधार व तरबियत के ग़लत तरीक़ों से होशियार रहिए।

बेशक आप ख़ानदान की बड़ी-बुज़ुर्ग हैं। बहू में कुछ कमज़ोरियाँ हैं तो उनका सुधार आपकी ज़िम्मेदारी है। बहू को अपने ख़ानदान के तौर-तरीक़ों से भी आप वाक़िफ़ कराना चाहती हैं, इसमें भी कोई बुरी बात नहीं है। लेकिन इस मक़सद को हासिल करते हुए एहतियात से काम लेना और नफ़सियात के उसूलों का लिहाज़ रखना ज़रूरी है, ख़ास तौर से इस वजह से कि यह रिश्ता बहुत नाज़ुक भी है और बहुत बदनाम भी। अच्छी नीयत के साथ की गई आपकी कोशिश भी कभी बहुत ख़तरनाक नतीजे पैदा कर सकती है। सुधार का काम धीरे-धीरे ही हो सकता है, इसमें कोई जल्दबाज़ी नहीं करनी चाहिए। आपकी बहू एक बालिग़ इनसान है। हो सकता है कि आपसे ज़्यादा पढ़ी-लिखी हो। हमारे समाज ने उसके मासूम ज़ेहन में सास की एक ज़ालिम इमेज भी बना रखी है। वह अपने ख़ानदान और ख़ानदान की रिवायतों वग़ैरा को लेकर हस्सास भी है। समझदार सास सुधार का काम करते हुए इन सब बातों का लिहाज़ भी रखती है। सुधार का काम धीरे-धीरे और मुनासिब मौक़े का लिहाज़ रखते हुए नरमी और प्यार से बातचीत करके होता है। जली-कटी बातें, ग़ैर-ज़रूरी तौर पर बहू के माँ-बाप या ख़ानदान की बातें करना वग़ैरा सुधार के काम नहीं आते, इनसे सिर्फ़ रिश्ते ख़राब होते हैं। मेरे पास जो केस आते हैं उनकी बुनियाद पर मैं कह सकती हूँ कि सास-बहू के रिश्ते की ख़राबी में 80 प्रतिशत रोल ग़ैर-ज़रूरी जली-कटी बातों से होता है। इसी तरह कोशिश कीजिए कि अपनी बहू की शिकायत कभी बेटे से न करें। इससे इस ख़ानदान के तीन लोगों के एक-दूसरे से रिश्ते ख़राब होने का डर पैदा होता है। यह आपकी बहू और आपकी बेटी है। उससे मुनासिब मौक़ा देखकर और मुनासिब ज़बान और लहजे का इस्तेमाल करते हुए सीधे बात कीजिए।

बातें तो और भी बहुत हो सकती हैं। लेकिन इन पाँच बातों पर भी हम ध्यान दे सकें तो 'इन शाअल्लाह' हमारे घर जन्नत का नमूना बन जाएँगे।

बुज़ुर्गों के नफ़सियाती मसले

अल्लाह ने इनसानी समाज और तमद्दुन (संस्कृति) की ख़ूबसूरती जिन चीज़ों में रखी है, उनमें एक अहम चीज़ हर चीज़ का अलग-अलग क़िस्म होना है। जिस तरह समाज में मर्दों और औरतों, दोनों का वुजूद ज़रूरी है, उसी तरह हर उम्र के लोगों का वुजूद भी ज़रूरी है। तमाम उम्र के लोग समाज की ज़रूरत हैं और हर उम्र से मुताल्लिक़ गरोह के साथ समाज और तमद्दुन का कोई-न-कोई अहम रोल जुड़ा है। दूध पीते बच्चों की दिल ख़ुश करनेवाली मुस्कुराहटें, छोटे बच्चों की तोतली बातें और मासूम शरारतें, स्कूल जानेवाले बच्चों का शोर-शराबा और हंगामा, इन सबके बिना हमारा समाज कितना बेमानी, बेरंग और बदसूरत बन जाएगा! जवानी ज़िन्दगी की ख़ूबसूरती है। नौजवानों का जोश-ख़रोश और नौजवान लड़कियों की जवानी व ख़ूबसूरती अदब (साहित्य) और कला का हमेशा बहुत ज़्यादा पसन्दीदा विषय रही है। बिलकुल इसी तरह सफ़ेद बाल, झुर्रियों से भरी पेशानियाँ और बावक़ार और रोबदार नूरानी चेहरे इनसानी तमद्दुन के लिए ज़रूरी हैं। अल्लाह ने इस उम्र के लोगों के ज़िम्मे भी समाज के बहुत-से काम लगा रखे हैं और ये लोग ख़ामोशी और ग़ैर-महसूस तरीक़े से अपनी ये ज़िम्मेदारियाँ पूरी करते रहते हैं। हमारे बुज़ुर्ग हमारी रिवायतों की हिफ़ाज़त करनेवाले होते हैं। वे हमें सदियों के इनसानी तजरिबों की विरासत से जोड़ते हैं। वे बरगद की वह घनी छाँव होते हैं जिसकी ज़रूरत का एहसास भागते-दौड़ते वक़्त नहीं होता। लेकिन जब यह भाग-दौड़ थका देती है, गिरा देती है, ज़ख़्मी कर देती है तो इस छाँव के सिवा कोई और आसरा नहीं होता। हमारे बुज़ुर्ग हमें जोड़ते हैं। हमारे मसले अपनी तदबीरों से हल करते हैं, हमारा हौसला बढ़ाते हैं और ग़लतियों पर टोकते हैं। वे हमारी गाड़ी के ब्रेक, गियर और क्लच होते

हैं, जो न हों तो तेज़ रफ़्तार एक्सीलेटर हमारी गाड़ी को हादसे से दोचार कर दे।

नए ज़माने की बदक़िस्मतियों में से एक बड़ी बदक़िस्मती यह है कि बुज़ुर्गों का यह रिवायती रोल बहुत कमज़ोर हो गया है। पुराने ज़माने में बुज़ुर्गों को घर और समाज में बहुत ज़्यादा अहमियत हासिल थी। घरों में होनेवाली ख़ुशी के मौक़े या शादी-ब्याह, मआशी सरगर्मी वग़ैरा के ताल्लुक़ से कोई भी फ़ैसला सामने होता तो बुज़ुर्गों का मश्वरा और उनकी रज़ामन्दी ज़रूरी समझी जाती थी। बुज़ुर्गों के पास जो जानकारी और तजरिबा होता है उसको बहुत ज़्यादा अहमियत दी जाती थी। कारोबार और घर के बाहर के मसलों में बुज़ुर्ग मर्दों की राय अहमियत रखती थी तो बुज़ुर्ग औरतों की राय के बग़ैर किचन, ख़ानादारी, बच्चों की सेहत वग़ैरा के मसले हल नहीं हो पाते थे। लेकिन आजकल के दौर में मालूमात की बहुतात और इंटरनेट की वजह से बुज़ुर्गों से मश्वरा लेना लोग या तो कम कर चुके हैं या बिलकुल ही बन्द कर चुके हैं। ज़िन्दगी की तेज़ रफ़्तारी ने नस्लों के बीच की दूरी (Generation Gap) को बहुत ज़्यादा बढ़ा दिया है। तरक़्क़ी के नाम पर जो समाजी और मआशी (आर्थिक) तब्दीली पैदा हो रही है उसका सबसे ज़्यादा बुरा असर घर के बुज़ुर्ग लोगों पर पड़ा है। मआशी तरक़्क़ी के लिए बच्चे बड़े शहरों का रुख करते हैं या मुल्क से बाहर का। बहुत-से दूसरे कामों की वजह से माँ-बाप उनके साथ जा नहीं पाते। इधर से उधर जगह बदलनेवाले बच्चे भी इस नई सूरतेहाल यानी एकल परिवार (Nuclear Family) के आदी हो जाते हैं। माँ-बाप वहाँ जाएँ भी तो ज़िन्दगी के इस नए तरीक़े को क़बूल नहीं कर पाते। तरक़्क़ीयाफ़्ता मुल्कों की ओल्ड एज होम्ज़ (Old Age Homes) की बुराई हमारे मुल्क में भी घुस आई है। इस तरह समाज का यह बहुत-ही क़ीमती हिस्सा अब सख़्त ज़ुल्म का शिकार हो गया है।

एक सर्वे के मुताबिक़ जो कि 1992 ई॰ में किया गया था ऐसे बुज़ुर्ग जो अपने बच्चों से दूर रहकर ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं उनकी तादाद 9 प्रतिशत थी। 2006 में यह तादाद बढ़कर 19 प्रतिशत तक पहुँच गई थी।

एक ज़माना वह था जहाँ बच्चे इज़्ज़त और अदब की वजह से अपने

बड़ों से बात करने से भी डरते थे कि कहीं ऐसी कोई बात ज़बान से न निकल जाए कि माँ-बाप का दिल दुखे और आज हालात ऐसे हैं कि बच्चों के पास अपने माँ-बाप के लिए वक़्त नहीं है। बुज़ुर्गों की इस बुरी हालत की एक अहम वजह लाइफ़ स्टाइल भी है। हिन्दुस्तान में तेज़ी से बढ़ते हुए मग़रिबी ज़िन्दगी के तौर-तरीक़ों और कल्चर ने बुज़ुर्गों के लिए बहुत सारी मुश्किलें पैदा कर दी हैं। नौजवान नस्ल जहाँ बुज़ुर्गों की ख़िदमत को अपनी ज़िम्मेदारी नहीं समझती वहीं बुज़ुर्ग माँ-बाप भी बच्चों के बदले हुए ज़िन्दगी के तौर-तरीक़े और नए ज़माने की मजबूरियों को नहीं समझ पाते, इस तरह दोनों नस्लों में दूरियाँ बढ़ती जा रही हैं। बुज़ुर्गों की हालत को सामने रखते हुए हिन्दुस्तानी हुकूमत ने 2007 ई॰ में एक क़ानून लागू किया जिसमें यह तय पाया कि तमाम बच्चे अपने माँ-बाप का ख़याल रखें। फिर 2008 ई॰ में माँ-बाप से लापरवाही बरतनेवाले बच्चों के लिए सज़ा भी तय पाई। लेकिन सिर्फ़ क़ानूनी तदबीरों के ज़रिए बुज़ुर्गों के मसले हल नहीं हो सकते, समाज के अन्दर भी लोगों में बेदारी लाने की ज़रूरत है।

बुज़ुर्गों के मसले

उम्र के साथ-साथ बुज़ुर्ग लोग अलग-अलग क़िस्म की जिस्मानी बीमारियों का शिकार हो जाते हैं। उनका दिमाग़ सिकुड़ने लगता है जिसकी वजह से याद्दाश्त कमज़ोर हो जाती है। कुछ बुज़ुर्गों को बात सुनने और समझने में भी दुश्वारी पेश आने लगती है। इसकी इंतिहाई शक्ल अल-ज़ाइमर (Alzheimer) और डेमेनशिया (पागलपन) वग़ैरा की सूरत में ज़ाहिर होती है जो आदमी को एक तरह से अपाहिज करके रख देती है। बहुत-से बुज़ुर्गों के सुनने और देखने में परेशानी होने लगती है। हाज़िमे का निज़ाम (Digestive System) कमज़ोर हो जाता है। शुगर (Diabetes) और ब्लड प्रेशर जैसी बीमारियों में तेज़ी आने लगती है। ताक़त कम हो जाती है। बहुत जल्द बदन थकने लगता है। तरह-तरह के दर्द शुरू हो जाते हैं। ये तमाम चीज़ें उनके आत्मविश्वास को कम करने की वजह बन सकती हैं।

इनसान एक समाजी वुजूद है। उसे हर उम्र में समाजी ज़िन्दगी और

समाजी रोल की ज़रूरत पेश आती है। बहुत-से लोग सारी ज़िन्दगी एक लगे-बंधे काम में गुज़ार देते हैं। उम्र के एक मरहले में वे अपने ख़ास किए हुए काम को पूरा करने के लायक़ नहीं रहते और रिटायर हो जाते हैं। दूसरी समाजी दिलचस्पियाँ न हों तो रिटार्यमेंट के बाद आदमी अपनी उम्र के लोगों और समाज से कट जाता है और उसके वक़्त का बड़ा हिस्सा अकेले में या घर के लोगों के महदूद हल्क़े में गुज़रने लगता है। यह सूरतेहाल बहुत-से बुज़ुर्गों के अन्दर बेकारी का एहसास पैदा करती है। वे ख़ुद को बेकार और बेज़रूरत समझने लगते हैं। उनका आत्मविश्वास डगमगाने लगता है। ज़िन्दगी-भर काम करनेवाला आदमी अगर पूरी तरह से फ़्री होता है तो बहुत-सारे ग़लत ख़यालात उसके ज़ेहन में आना शुरू हो जाते हैं। इस मोड़ पर आदमी के अन्दर एहसासे-कमतरी (डिप्रेशन) पैदा हो जाती है। वह यह समझने लगता है कि अब घर और समाज में उसकी अहमियत कम होने लगी है। इन हालात में कोई कुछ कह दे या कोई बात हो जाए तो वह पूरी तरह से टूट और बिखर जाता है। कुछ लोग ग़म, तंहाई और ख़ौफ़ के शिकार हो जाते हैं।

चूँकि वक़्त का बड़ा हिस्सा घर में गुज़र रहा होता है इसलिए वे घर के ग़ैर-ज़रूरी कामों में दिलचस्पी लेना शुरू कर देते हैं या अपने बच्चों की ज़िन्दगी में दख़लन्दाज़ी करने लगते हैं। बीवी-बच्चे इसके आदी नहीं होते। नतीजे में तरह-तरह के झगड़े पैदा होने लगते हैं। सरगर्म अमली ज़िन्दगी के दौरान आदमी कामयाबियाँ (Achievements) हासिल करता रहता है, नतीजे में उसकी बड़ाई और तारीफ़ होती है, जो उसके एतिमाद, इज़्ज़ते-नफ़्स और हौसले को बढ़ाती हैं। इसी तरह नाकामियों और चैलेंजों से भी उसे गुज़रना पड़ता है, जिससे उसके मुक़ाबला करने का जज़बा (Fighting Spirit) जवान रहता है। सरगर्म ज़िन्दगी से अलग होने के बाद इन सब मौक़ों से वह महरूम हो जाता है।

उम्र के इस हिस्से में मौत का ख़ौफ़ भी सताता है। बहुत-से साथी, हम-उम्र और रिश्तेदार एक के बाद एक करके अल्लाह को प्यारे होने लगते हैं। उनसे महरूमी भी ग़म और मायूसी को बढ़ाती है। ख़ास तौर पर अगर

शौहर-बीवी में से किसी की मौत हो जाए तो बुज़ुर्ग मर्द या औरत के लिए यह बहुत आज़माइशी मरहला होता है। कुछ बुज़ुर्ग इन सब मसलों की वजह से तनाव और डिप्रेशन वग़ैरा के शिकार हो जाते हैं। नींद वैसे ही कम हो जाती है। ज़ेहनी दबाव नींद की कमी को और बढ़ाता है जिसके नतीजे में तबीअत ज़्यादा हस्सास हो जाती है। मिज़ाज में चिड़चिड़ापन, ग़ुस्सा और झुँझलाहट बढ़ जाती है।

जिस्मानी सेहत और नफ़सियाती सेहत एक-दूसरे पर निर्भर हैं। एक की ख़राबी दूसरी तरफ़ भी ख़राबी पैदा करती है। इस तरह नफ़सियाती चैलेंज जिस्मानी कमज़ोरी की रफ़्तार तेज़ कर देते हैं। आदमी तेज़ी से बूढ़ा होने लगता है और उससे नफ़सियाती उलझनें और बढ़ने लगती हैं।

इस मरहले में अगर बुज़ुर्ग इनसान ख़ुद और उसके क़रीबी जवान रिश्तेदार समझदारी से काम न लें तो ज़िन्दगी का यह आख़िरी पड़ाव तकलीफ़ देनेवाला हो जाता है। थोड़ी-सी समझदारी और छोटी-छोटी क़ुरबानियाँ बुज़ुर्गों के बुढ़ापे को पुरसुकून बना देती हैं और वे ज़िन्दगी की आख़िरी साँस तक सरगर्म और ख़ुश व ख़ुर्रम ज़िन्दगी गुज़ार सकते हैं।

नौजवानों का रोल

इस्लाम ने बुज़ुर्गों की इज़्ज़त व एहतिराम को इतनी अहमियत दी है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "बुज़ुर्ग मुसलमान की ताज़ीम (इज़्ज़त और एहतिराम) करना अल्लाह की ताज़ीम का हिस्सा है", (हदीस : अबू-दाऊद)। नबी (सल्ल॰) ने बुज़ुर्गों के वुजूद को ख़ैर व बरकत का ज़रिआ बताया है। फ़रमाया, "हमारे बुज़ुर्गों की वजह से ही हममें ख़ैर व बरकत है। इसलिए वह हममें से नहीं जो हमारे छोटों पर रहम नहीं करता और हमारे बड़ों की शान में ग़ुस्ताख़ी करता है," (हदीस : तबरानी)। नबी (सल्ल॰) ने यह भी फ़रमाया कि "तुम्हें बूढ़ों की वजह से ही रोज़ी मिलती है और तुम्हारी मदद की जाती है।" (हदीस : बुख़ारी)

माँ-बाप और ख़ास तौर से बूढ़े माँ-बाप के साथ अच्छे सुलूक की ताकीदें तो क़ुरआन व हदीस में बहुत ज़्यादा आई हैं। अल्लाह फ़रमाता है—

"तेरे रब ने फ़ैसला कर दिया है कि तुम लोग किसी की इबादत न करो, मगर सिर्फ़ उसकी। माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करो। अगर तुम्हारे पास इनमें से कोई एक या दोनों, बूढ़े होकर रहें तो उन्हें 'उफ़' तक न कहो, न उन्हें झिड़ककर जवाब दो, बल्कि उनसे एहतिराम के साथ बात करो। और नरमी व रहम के साथ उनके सामने झुककर रहो, और दुआ किया करो कि पालनहार! इनपर रहम कर जिस तरह इन्होंने रहमत और मुहब्बत के साथ मुझे बचपन में पाला था।"

(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत : 23-24)

इस आयत में अच्छे सुलूक के साथ ख़ास तौर पर बातचीत में नरमी, एहतिराम और मुहब्बत और बेज़ारी के इज़हार से बचने (उफ़ भी न कहने) का हुक्म दिया है। बूढ़े माँ-बाप को इस लब व लहजे की सबसे ज़रूरत होती है। इस उम्र के नफ़सियाती तक़ाज़े माँ-बाप से कोई ज़्यादती करवाए, या वे बिना वजह की दख़लन्दाज़ी करें, या चिड़चिड़ेपन का मुज़ाहरा करें, या ग़ैर-ज़रूरी सवाल करें, या बच्चों की बात समझ न पाएँ और उसके जवाब में बच्चे भी ग़ुस्से व बेज़ारी का इज़हार करें तो बूढ़े इनसान पर इसका बहुत ग़लत असर पड़ता है। क़ुरआन के हुक्म को पूरा करने में बच्चे बरदाश्त करें और नरमी का मुज़ाहरा करें और एहतिराम व मुहब्बत के साथ उनसे बातचीत करें और उनके लिए दुआ करते रहें तो माँ-बाप को भरपूर दिली इत्मीनान मिलता है। यह इत्मीनान उनकी नफ़सियाती (ज़ेहनी) सेहत के लिए भी ज़रूरी है और जिस्मानी सेहत के लिए भी। दिली इत्मीनान के साथ बुढ़ापा पुरसुकून हो जाता है और आदमी न सिर्फ़ ज़िन्दगी का आख़िरी हिस्सा हँसी-ख़ुशी के साथ गुज़ारता है, बल्कि अपने ख़ानदान और समाज को बहुत कुछ आख़िरी उम्र तक देता रहता है। ऐसे पुरसुकून और फ़ायदा पहुँचानेवाले बुढ़ापे को यक़ीनी बनाना, माँ-बाप का बच्चों पर सबसे बड़ा हक़ है।

बच्चों को चाहिए कि कभी ख़यालों की दुनिया में कुछ साल पीछे जाएँ और उस वक़्त का तसव्वुर करें जब उनके माँ-बाप जवान थे और तसव्वुर

की आँख से अपने बचपन और माँ-बाप की क़ुरबानियाँ देखें, तो एक हस्सास ज़ेहन रखनेवाला बेटा या बेटी ज़रूर माँ-बाप के साथ अच्छे सुलूक को अपना फ़र्ज़ (कर्तव्य) समझेगा। ढलती उम्र में इनसान को न धन-दौलत की चाहत होती है, न अच्छे पहनने-ओढ़ने की और न ही उम्दा मज़ेदार खानों की। इस उम्र में इनसान को सिर्फ़ मुहब्बत-भरी बातचीत की ज़रूरत होती है। चूँकि अब उनके पास वक़्त-ही-वक़्त होता है और वे चाहते हैं कि कोई उनसे दो घड़ी मुहब्बत से बात करे, उनके पास कुछ देर बैठे, अपना वक़्त दे और उनकी बातें सुने। बच्चों का यह सबसे पहला फ़र्ज़ है कि अपनी मसरूफ़ ज़िन्दगी से कुछ वक़्त निकालकर वे माँ-बाप के साथ गुज़ारें। उस वक़्त को याद कीजिए जब आप तीन-चार साल की उम्र के बच्चे थे और दुनिया को पहली बार समझ रहे थे। उन्होंने कभी आपको नज़रन्दाज़ नहीं किया था तो फिर क्यों आप उनकी ज़रूरत के वक़्त उन्हें नज़रन्दाज़ कर दें।

घर के अहम फ़ैसलों में माँ-बाप से मश्वरा ज़रूर लें। उस ख़ुशी का आप अन्दाज़ा नहीं लगा सकते जो उस वक़्त उन्हें होती है। उनको उस वक़्त यह एहसास होने लगता है कि वे कितने अहम हैं। उस वक़्त का तसव्वुर कीजिए जब माँ आपको यह यक़ीन दिलाती थी कि पकवान में आपने बहुत मदद की, जबकि आपने सिर्फ़ मूली या गाजर ही काटी थी। कोई वज़नी चीज़ जब बाप उठाते और आप दौड़कर उस काम में शरीक हो जाते थे, उस वक़्त शफ़ीक़ बाप आपको यह एहसास दिलाना नहीं भूलते थे कि आपने उनकी कितनी मदद की है, हालाँकि उस वक़्त आप एक या दो किलो वज़न उठाने के भी लायक़ नहीं होते थे। बुढ़ापे में माँ-बाप का हक़ यह है कि यही ख़ुशियाँ उनको लौटाई जाएँ।

सैर-सपाटे के लिए बाहर जाएँ तो कभी अपने माँ-बाप को भी साथ ले जाएँ। उनकी छोटी-मोटी ज़रूरतों का ख़याल रखें। बूढ़े लोगों को छोटे बच्चों के साथ वक़्त गुज़ारकर बहुत ख़ुशी मिलती है। अपने छोटे बच्चों को यह शौक़ ज़रूर दिलाएँ कि वे दादा-दादी, नाना-नानी के साथ वक़्त ज़रूर गुज़ारें। घर में आपके कोई दोस्त या मेहमान आएँ तो उन्हें अपने माँ-बाप से जान-पहचान ज़रूर करवाएँ। मुल्क के बाहर या माँ-बाप से दूर रहनेवाले बच्चे

उनसे बात करते रहा करें।

एहतिराम और मुहब्बत के साथ उन्हें तामीरी (Constructive) कामों में मसरूफ़ करें। अगर वे कुछ करना चाहें तो उनकी भरपूर मदद करें। भरपूर समाजी ज़िन्दगी गुज़ारने में उनकी मदद करें। उनके दोस्तों को कभी चाय पर बुलाएँ। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया, "सबसे बड़ी नेकी यह है कि बेटा अपने बाप के दोस्तों से अच्छा सुलूक करे," (हदीस : मुस्लिम)। अगर बच्चे माँ-बाप के मिलनेवालों और उनके दोस्तों से अच्छा सुलूक करें और घर पर उनका ख़ुशदिली से स्वागत करें, तो इससे बूढ़े माँ-बाप को दोस्तों और चाहनेवालों से ताल्लुक़ात रखने में मदद मिलती है और कोई झिझक नहीं रहती।

यह देखने में बहुत छोटी-छोटी बातें हैं लेकिन इन ही बातों से बूढ़े लोगों को अपनी अहमियत का एहसास होता है, तंहाई का दर्द दूर होता है, कुछ न कर पाने और ख़ुद को बेकार समझने की तकलीफ़ से वे छूटकारा पाते हैं और ज़िन्दगी की उमंग और तवानाई (ऊर्जा) की हिफ़ाज़त होती है।

बुज़ुर्गों का अपना रोल

ख़ुशगवार बुढ़ापे के लिए जहाँ यह ज़रूरी है कि नौजवान लोग ख़ानदान के बुज़ुर्गों के सिलसिले में अपनी ज़िम्मेदारियाँ अदा करें वहीं बूढ़े लोगों के लिए भी ज़रूरी है कि वे मुनासिब रवैया अपनाएँ, और इस बात की भरपूर कोशिश करें कि उनका बुढ़ापा न ख़ुद उनके लिए बोझ और तकलीफ़ की वजह बने और न ख़ानदान के दूसरे लोगों के लिए। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने बहुत ज़्यादा बुढ़ापे से पनाह माँगी है, यानी ऐसा बुढ़ापा जो आदमी को मुहताज बना दे, उसकी ज़ेहनी ताक़तें बेकार हो जाएँ, अपने आपपर उसे कंट्रोल न रहे और उसका वुजूद लोगों के लिए परेशानियों की वजह बन जाए। हमें हर मुमकिन कोशिश करनी चाहिए कि ऐसी कैफ़ियत से ख़ुद को बचाएँ और अगर अल्लाह इस आज़माइश में हमको डाल दे तो फिर साबित-क़दमी के साथ उसका मुक़ाबला करना चाहिए।

बुढ़ापे के अकसर नफ़सियाती मसलों पर थोड़ी-सी कोशिश के ज़रिए

क़ाबू पाया जा सकता है।

सबसे पहली ज़रूरत यह है कि हम अपने लाशुऊर में बुढ़ापे की नेक सोच और मक़सदवाली छवि बनाएँ। इस उम्र के साथ कमज़ोरी, लाचारी, दूसरों पर निर्भरता और बेकारी वग़ैरा की जो तस्वीर (छवि) हमारा समाज जोड़ देता है, उससे अपने लाशुऊर को छुटकारा दिलाएँ। ढलती उम्र एक सच्चाई है जिसका हर उस इनसान को सामना करना है जो उससे पहले मौत का शिकार न हो जाए। अपनी ढलती उम्र से ख़ुशगवार समझौता करना और बुढ़ापे को अपने ऊपर हावी करने के बजाए इस उम्र से भी मज़ा लेने की राहें निकालना ही ख़ुशगवार बुढ़ापे का राज़ है।

बुढ़ापे में बदन के हिस्सों का बूढ़ा हो जाना ज़्यादा बड़ा मसला नहीं होता। ऐसी तकलीफ़ें और परेशानियाँ तो जवान लोगों को भी हो जाती हैं। अस्ल मसला ज़ेहन का बूढ़ा होना है। इससे बचने की कोशिश करनी चाहिए। कोलेस्ट्रोल, चिकने खाने, सुस्ती, काहिली व ऐशपसन्दी, भोंडी व ग़ैर-मुनज़्ज़म ज़िन्दगी, ज़ेहनी तनाव, सिगरेट और तम्बाकू पीना वग़ैरा ऐसे काम हैं जो ज़ेहन को बूढ़ा करते हैं। अगर हम सही खाना खाएँ, सोने-जागने के वक़्त में डिसप्लिन पैदा करें, वक़्त पर नमाज़ और इबादतों की सख़्ती से पाबन्दी करें, सुबह-शाम हल्की-सी कसरत या चहलक़दमी करें तो इससे हमारी सेहत भी अच्छी रहेगी और ज़ेहन से बुढ़ापे का हमला टल जाएगा और उसकी तेज़ी भी कम होगी। इन शाअल्लाह!

दिमाग़ का इस्तेमाल कम हो जाए तो भी ज़ेहन तेज़ी से बूढ़ा होने लगता है। हमारे दिमाग़ में अल्लाह ने एक अजीब व ग़रीब सलाहियत रखी है जिसे न्यूरोप्लास्टीसिटी (Neuroplasticity) कहते हैं। आप नई चीज़ें सीखते रहें और दिमाग़ को मसरूफ़ रखें तो दिमाग़ की कोशिकाओं की लचक बाक़ी रहती है वरना वे सख़्त और नाकारा होने लगते हैं। इसलिए यह ज़रूरी है कि हम कोई-न-कोई ख़ुशगवार मसरूफ़ियत अपनाएँ। कोई हल्की-फुल्की मआशी सरगर्मी अपनाएँ। इसकी ज़रूरत न हो तो किसी समाजी काम में ख़ुद को मसरूफ़ रखें। बच्चों या नौजवानों को पढ़ाएँ। दीनी सरगर्मियों में बहुत ज़्यादा हिस्सा लें। मुहल्ले, बिल्डिंग या सोसाइटी और मस्जिद के कामों

में दिलचस्पी लें। लोगों की मदद का कोई काम शुरू करें।

नई चीज़ों को सीखना भी हमारे दिमाग़ को बेदार (सक्रिय) रखता है। अपने बच्चों से कंप्यूटर सीखिए। कोई नई ज़बान, कोई नया हुनर या कोई नया इल्म सीखिए। क़ुरआन व हदीस का इल्म बाक़ायदा तौर पर हासिल करना शुरू कीजिए। सीखने की कोई उम्र नहीं होती और न नई चीज़ों से फ़ायदा हासिल करने और फ़ायदा पहुँचाने की कोई उम्र होती है।

आदमी मसरूफ़ (व्यस्त) हो जाए तो उसका दूसरा फ़ायदा यह होता है कि तंहाई और बेकारी के अज़ाब से छुटकारा पा लेता है। उससे तनाव कम होता है। अच्छी नींद आती है और इसकी भी ज़ेहन को तन्दुरुस्त रखने के लिए बड़ी ज़रूरत है।

अगर बाहर कोई सरगर्म मसरूफ़ियत न हो तो वक़्त का बड़ा हिस्सा घर में गुज़रने लगता है। इससे ऐसे काम जो आपसे ताल्लुक़ नहीं रखते हैं और बच्चों की ज़िन्दगियों में दख़लन्दाज़ी होती है और बात-बेबात पर नसीहत और दख़ल देकर उनके मामलों को अपने हाथ में लेने के रुझान पैदा होने लगते हैं। नतीजे के तौर पर कुछ घरों में झगड़े और कुछ घरों में ख़ामोश खिंचाव की-सी कैफ़ियत पैदा होने लगती है। यह सूरतेहाल भी ग़ैर-ज़रूरी तनाव और ज़ेहनी दबाव पैदा करती है। बूढ़े लोगों को यह बात समझनी चाहिए कि उनके बच्चों को आज़ादी के साथ ज़िन्दगी गुज़ारने और फ़ैसले लेने का हक़ हासिल है। उनकी रहनुमाई ज़रूर कीजिए। ग़लतियों पर तंबीह भी कीजिए, लेकिन हर छोटे-बड़े मसले में दख़लन्दाज़ी यक़ीनन उनकी हक़तलफ़ी है और ख़ाह-मख़ाह अपने ऊपर ऐसे बोझ लाद लेना है जिसके इस उम्र में हम पाबन्द नहीं हैं। बच्चों के मामले और मसलों को उनपर छोड़ दीजिए। उनको आज़ादी दीजिए। इससे उनके साथ आपके रिश्ते भी हमेशा ख़ुशगवार होंगे और आप भी तनाव और दबाव से महफ़ूज़ रहेंगे।

अपने-आपको ज़िन्दादिल और ख़ुशमिज़ाज रखने की कोशिश कीजिए। चिड़चिड़ापन और बदमिज़ाज बनना कोई भी पसन्द नहीं करता, लेकिन अगर मिज़ाज में ग़लत रुझान और ग़लत सोच परवान चढ़े, शक, हसद और

ग़ुस्सा जैसे ग़लत रुझान से अपने-आपको पाक करने की हम फ़िक्र न करें तो बुढ़ापे में ये चीज़ें हमारे साथ रहनेवालों के लिए और उनसे ज़्यादा ख़ुद हमारे लिए तकलीफ़ देनेवाली बन जाती हैं। नेक और तामीरी सोच पैदा कीजिए। बहुत-से लोगों को इस उम्र में अपनी नाकामियों का एहसास बहुत सताता है और पछतावे की आग उनके मिज़ाज को मनफ़ी (नकारात्मक) बना देती है। इस्लाम ने हमें हर हाल में अल्लाह का शुक्र अदा करने का हुक्म दिया है। दुनिया के मामलों में जो कुछ आपको हासिल है उसपर शुक्र के जज़बे से अपने दिल को भर लीजिए। गुनाहों और ग़लतियों के मामले में इस्लाम ने तौबा का रास्ता दिखाया है। सच्चे दिल से तौबा कीजिए और अपने दिल को ग़लत ख़यालों से पाक कर दीजिए। जहाँ तक दूसरों की ज़्यादतियों का ताल्लुक़ है, उनको माफ़ करना और दरगुज़र करना ही ज़िन्दगी को बेहतर तरीक़े से गुज़ारने का राज़ है।

अच्छी किताबों और अच्छे साहित्य (लिट्रेचर) का मुताला (अध्ययन) कीजिए। अल्लाह के चुनिन्दा पैग़म्बरों और नेक बन्दों के बुढ़ापे की तस्वीरों को अपने लाशुऊर में बैठा लीजिए। ख़ुद अपने इर्द-गिर्द में मौजूद उन बूढ़े और बुज़ुर्ग लोगों की ज़िन्दगियों को देखिए जो इस उम्र में भी हँसते-मुस्कुराते ख़ुशी-ख़ुशी ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं।

बुढ़ापे में ख़ुशियों का बहुत बड़ा स्रोत बच्चे होते हैं। अपने मासूम पोते-पोतियों, नवासे-नवासियों और दूसरे बच्चों पर भरपूर मुहब्बत लुटाइए। उनके साथ वक़्त गुज़ारिए। उन्हें कहानियाँ सुनाइए। होमवर्क कराइए। मुमकिन हो तो उनके साथ खेलिए। पार्क में ले जाइए। उनसे ख़ूब बातें कीजिए। अपने ज़ेहन को जवान रखने का इससे बेहतर फ़ॉर्मूला कोई और नहीं है।

मनफ़ी (नकारात्मक) किरदार से ख़ुद को बचाएँ

कहते हैं कि समाज की ख़ुशहाली में औरत का रोल बहुत अहम होता है। चूँकि जज़बात और नाज़ुक एहसासों की नुमाइन्दगी औरत करती है इसलिए वे ख़ानदान और समाज ख़ुश रहते हैं जहाँ औरत ख़ुश व ख़ुर्रम और बाएतिमाद होती है। अल्लाह ने हमें बहुत सारे साधन दिए हैं जिनका इस्तेमाल करके औरतें अपनी सलाहियतों को निखार सकती हैं, ख़ुद भी ख़ुशी-ख़ुशी ज़िन्दगी गुज़ार सकती हैं और दूसरों को भी ख़ुशी दे सकती हैं। औरतों का हुस्न सिर्फ़ उनके चेहरे का हुस्न नहीं होता, बल्कि उनकी अपनी शख़्सियत पूरे तौर पर फ़ितरत के ख़ूबसूरत पहलू की मज़हर होती है। उनकी मुहब्बत, क़ुरबानी और उनके नाज़ुक जज़बात सारे समाज को पुरसुकून और ख़ुशियों से भरा बनाने की वजह बनते हैं। इसके बरख़िलाफ़ अगर औरतें तनाव की शिकार हो जाएँ, मिज़ाज में चिड़चिड़ापन हो, ग़ुस्सा, हसद और एहसासे-कमतरी जैसी आदतों में वे पड़ जाएँ तो ख़ानदान और समाज का सुकून दरहम-बरहम हो जाता है। औरत की अपनी बेहतरीन आदतों, तौर-तरीक़ों और अख़लाक़ की वजह से उसका घर जन्नत की तरह भी बन सकता है और उसकी ग़लत और मुख़ालिफ़ सोच की वजह से उसका घर जहन्नम का नक़शा भी पेश कर सकता है।

इस्लाम इस बात को सख़्त नापसन्द करता है कि मर्द व औरत एक-दूसरे के ख़िलाफ़ और एक-दूसरे के दुश्मन बनकर रहें और फ़ेमिनिज़्म और औरतों की तहरीकों के नाम पर दोनों जिंसों के बीच अधिकारों की कश्मकश का माहौल बना रहे। इस्लाम मर्दों और औरतों को एक-दूसरे का

साथी क़रार देता है जो नेकी और भलाई के कामों में एक-दूसरे की मदद करते हैं, (क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत-71)। इस्लाम ने मर्दों और औरतों के अधिकारों और ज़िम्मेदारियाँ पर तफ़सील से रौशनी डाली है। इस्लाम चाहता है कि दोनों अपने-अपने दायरों में काम करते हुए एक नेक और पाकीज़ा समाज की तामीर में अपना रोल अदा करें।

दूसरी तरफ़ इस हक़ीक़त से भी इनकार मुमकिन नहीं कि जो हुक़ूक़ (अधिकार) इस्लाम ने औरतों को दिए हैं, हमारा रिवायती समाज अमली तौर पर वे हुक़ूक़ उन्हें नहीं देता। इस्लाम ने औरत को इतना ऊँचा मक़ाम और इज़्ज़त व हिफ़ाज़त दी है कि जिसका मुक़ाबला कोई दूसरा समाज नहीं कर सकता। अगर हमारा समाज औरत के बारे में इस्लाम की तालीमात पर अमल करने लगे तो उसकी बरकतें सारी दुनिया को इस्लाम की तरफ़ मुतवज्जह करने के लिए काफ़ी होंगी। हमारे समाज में औरत के मक़ाम को इस्लाम की तालीमात के मुताबिक़ बुलन्द करने का यह काम मर्दों और औरतों, सबको मिल-जुलकर करना है। आमतौर पर देखा यह गया है कि इस मामले में बड़ी रुकावटें ख़ुद औरतों ही की तरफ़ से खड़ी की जाती हैं।

बेशक औरत के साथ जब भी नाइनसाफ़ी होती है तो उसमें मर्द का भी अहम रोल होता है, लेकिन मालूमात व तजरिबात से यह बात भी सामने आती है कि घरेलू ज़िन्दगी से लेकर प्रोफ़ेशनल जगहों तक, जब भी औरत ज़ुल्म का शिकार होती है तो उसमें कहीं-न-कहीं एक और औरत का हाथ भी होता है। इस लेख में औरतों के इसी मुख़ालिफ़ रोल पर बात की गई है कि किस तरह ख़ुद औरतें समाज में औरतों के रोल को ऊँचा उठाने की राह में रुकावट बनती हैं।

कुछ साल पहले अमेरिकी लेखिका केली वेलन (Kelly Valen) की एक किताब बहुत मशहूर हुई थी 'The Twisted Sisterhood : Unraveling the Dark Legacy of Female Friendships' इसमें लेखिका ने सर्वे के नतीजों और बहुत-सी घटनाओं और तादाद के ज़रिए यह साबित करने की कोशिश की है कि औरतों की तरक़्क़ी के रास्ते में अकसर औरतें ही रुकावट बनती हैं। केली के सर्वे के मुताबिक़ 85 प्रतिशत औरतें दूसरी औरतों से परेशान

होने की वजह से तनाव की शिकार रहती हैं। 88 प्रतिशत औरतों ने दूसरी औरतों की तरफ़ से कमीनगी (Meanness) और दूसरे मुख़ालिफ़ और ग़लत रवैयों की तकलीफ़ बरदाश्त की है। इन औरतों में ख़ानदान की दूसरी औरतें, ससुराली रिश्तेदार औरतें और साथ में काम करनेवाली औरतें वग़ैरा सब शामिल हैं। केली की इस किताब ने एक नई बहस छेड़ दी है। आमतौर पर औरतों की तहरीकें औरतों पर ज़ुल्म के लिए मर्दों को ज़िम्मेदार समझती रही हैं, लेकिन इस किताब ने यह साबित किया कि ऐसा नहीं है। औरतों की कमज़ोरी और मज़लूमियत अकसर ख़ुद औरतों ही की वजह से होती है।

नफ़सियात के माहिरों (मनोवैज्ञानिकों) के मुताबिक़ औरतों के अन्दर दूसरी औरतों से तुलना करने (Upward Social Comparison) और उनसे ख़ुद को बेहतर साबित करने का ज़ोर पाया जाता है। यह ज़ोर उनके अन्दर मुख़ालिफ़ जज़बात यानी ग़ुस्सा, नफ़रत, हसद वग़ैरा को भी परवान चढ़ा सकता है। मिसाल के तौर पर यूनिवर्सिटी ऑफ़ टेक्सेस के नफ़सियाती साइंटिस्ट जेम कनफ़र (Jaime Confer) की रिसर्च में 7 प्रतिशत मर्द दूसरे मर्दों से हसद करने में पाए गए, जबकि दूसरी औरतों के लिए ऐसे जज़बात रखनेवाली औरतों का अनुपात तक़रीबन 58 प्रतिशत था। मर्द किसी औरत को यानी दूसरी जिंस को अपने से आगे बढ़ते हुए नहीं देख सकते, लेकिन औरतें दूसरी औरतों यानी अपनी ही जिंस को अपने से आगे बढ़ने नहीं देना चाहतीं। इस तरह मर्द दूसरे मर्दों के हसद (जलन) से भी महफ़ूज़ रहते हैं और औरतों के भी, जबकि औरतें मर्दों के हसद का भी शिकार रहती हैं और औरतों के भी। आगे न बढ़ने देने का यह ज़ोर अलग-अलग जगहों पर अलग-अलग रूप में सामने आता है। काम की जगहों पर दूसरी औरतों की तरक़्क़ी और उनकी कामयाबी से जलन और हसद के जज़बात पैदा होते हैं। सास और बहू के बीच बेटे या शौहर से क़रीब होने की लड़ाई शुरू हो जाती है। देवरानियों-जेठानियों में घर के मामलों पर कंट्रोल की कश्मकश होने लगती है वग़ैरा। लेकिन इसका नतीजा आमतौर से यही निकलता है कि औरतें दूसरी औरतों की समाजी तरक़्क़ी के रास्ते में रुकावट बन जाती हैं।

औरतें और समाजी रिवायतें

औरतों को इस्लाम के दिए गए हुक़ूक़ के अदा करने में अकसर हमारे समाज की रिवायतें रुकावट बनती हैं। ये रिवायतें मुसलमान समाज पर दूसरे समाजों, मज़हबों और मक़ामी रिवाजों के असर से बनी हैं और समाज में उनकी जड़ें गहरी हैं। मुसलमान होने की हैसियत से यह हमारी ज़िम्मेदारी है कि हम ऐसी रिवायत की तरफ़ ध्यान न दें जो इस्लाम की तालीमात से टकरा रही हो। अब इसका शुऊर आम हुआ है और बहुत-से घरों में ऐसी ग़लत रिवायतों को ख़त्म करने की कोशिश भी होती है, लेकिन आमतौर से औरतें इन रिवायतों की बहुत बड़ी हिफ़ाज़त करनेवाली बनकर सामने आ जाती हैं। ये रिवायतें औरत को पिछड़ी हुई और मज़लूम बनाए रखने में अहम रोल अदा करती हैं।

इन रिवायतों में इस वक़्त सबसे अहम और तबाह करनेवाली रिवायत शादी-ब्याह की रस्म और रिवाज हैं। इस्लाम ने निकाह को बहुत आसान बनाया है। मर्द और औरत का शादी के रिश्ते में रहने के लिए एक-दूसरे को क़बूल करना, महर का अदा करना और दो गवाहों की गवाही निकाह के लिए काफ़ी है। निकाह में औरत या उसके ख़ानदान की तरफ़ से एक पैसे के ख़र्च की भी ज़रूरत नहीं है। निकाह की यह आसानी औरत की ताक़त बढ़ाती है। इसकी वजह से माँ-बाप पर लड़की बोझ नहीं बन पाती। हमेशा लड़कों की नहीं, बल्कि लड़कियों की डिमांड ज़्यादा रहती है। तलाक़ औरत के लिए नहीं, बल्कि मर्द के लिए नुक़सानदेह होती है और वह तलाक़ देने से पहले दस बार सोचने पर मजबूर होता है। तलाक़शुदा और बेवा औरतों की शादियाँ निहायत आसान हो जाती हैं। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) और सहाबा के ज़माने में ऐसी ही सूरतेहाल थी। आज जो लड़कियों की शादी मुश्किल हो गई है, लड़कियों के माँ-बाप को दबकर रहना पड़ता है और ख़ुद लड़कियाँ ससुराल में हर तरह के ज़ुल्म व ज़्यादती को बरदाश्त करते रहने पर ख़ुद को मजबूर पाती हैं, यह एक ग़ैर-फ़ितरी सूरतेहाल है और इसकी बड़ी वजह शादियों का मुश्किल होना है।

आसान निकाह की तहरीकें सालों से चल रही हैं लेकिन इस रास्ते में अकसर रुकावट औरतों की तरफ़ से ही होती है। शादी की रस्मों को वे बहुत अज़ीज़ रखती हैं। जहेज़ दिए बग़ैर बेटी को रुख़सत करना बुरा समझती हैं। बेटे के ससुराल से मुनासिब जहेज़ न मिले तो उसे अपने बेटे की और अपने ख़ानदान की तौहीन समझती हैं। ये ज़रूरी समझती हैं कि उनकी बेटी की शादी की दावत, दूसरे रिश्तेदारों की दावतों से ज़्यादा शानदार और भारी-भरकम हो। आलीशान दावतों और शानदार तक़रीबों से अपने जज़बात और अरमान जोड़ लेती हैं। बेमानी और ग़ैर-माक़ूल रस्मों को जान से भी ज़्यादा अज़ीज़ रखती हैं। इन बातों को ऐसा जज़बाती मसला बना लेती हैं कि सुधार की कोशिश करनेवाले मर्दों के लिए सुधार के काम करने बहुत ज़्यादा मुश्किल हो जाते हैं। ये औरतें यह नहीं समझ पातीं कि दो-चार दिन के इन ग़ैर-माक़ूल जज़बात और अरमानों की वजह से वे अगली नस्ल की लड़कियों की ज़िन्दगियाँ मुश्किल-से-मुश्किल बनाती जा रही हैं और इस्लामी निकाह की रूह ख़त्म करने की वजह बन रही हैं।

बेवाएँ और तलाक़शुदा औरतें दूसरी औरतों के तानों के डर से ही दूसरे निकाह से रुकी रहती हैं। ताना देनेवाली औरतें अच्छी तरह जानती हैं कि ऊँचे मरतबे की सहाबियात ने अपने जलीलुल-क़द्र शौहरों के इन्तिक़ाल के बाद भी निकाह किए हैं। लेकिन इसके बावजूद, ग़ैर-इस्लामी असरात की वजह से वे ऐसी शादियों को ख़ुद भी बुरा समझती हैं और समाज में ऐसे रुझान को परवान चढ़ाती हैं जिसकी वजह से दूसरी बेवाएँ और तलाक़शुदा औरतें भी इसकी हिम्मत नहीं कर पातीं। बेवाओं और तलाक़शुदा औरतों का निकाह न हो पाना, यह भी आज हमारे समाज में औरतों की कमज़ोरी की एक बड़ी वजह है।

औरतों की कमज़ोरी की एक बड़ी वजह औरत को उसके माली हुक़ूक़ से महरूम (वंचित) करना है। इस्लाम ने औरत को जो माली हुक़ूक़ दिए हैं उसका तसव्वुर भी नए समाज के लिए मुश्किल है। इस्लाम ने औरत को पूरे हुक़ूक़ दिए हैं, लेकिन कोई माली ज़िम्मेदारी उनपर नहीं लागू की है। अल्लाह ने साफ़-साफ़ फ़रमा दिया है कि औरत का माल उसका अपना माल है।

उसके शौहर या ससुराली रिश्तेदार को कोई हक़ नहीं कि वे ज़बरदस्ती उस माल के मालिक बनने की कोशिश करें। अल्लाह कहता है—

"और जो कुछ अल्लाह ने तुममें से किसी को दूसरों के मुक़ाबले में ज़्यादा दिया है उसकी तमन्ना न करो। जो कुछ मर्दों ने कमाया है उसके मुताबिक़ उनका हिस्सा है और जो कुछ औरतों ने कमाया है उसके मुताबिक़ उनका हिस्सा है।"

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-32)

बीवी और शौहर का माल भी अलग-अलग होना और अपने-अपने मालिक के लिए होना ज़रूरी है कि बहुत-से शरई अहकाम का इसपर दारोमदार है। शौहर को अपने माल में से ज़कात का हिसाब करना है और बीवी को अपने माल में से। शौहर का माल उसके मरने के बाद उसके वारिसों में तक़सीम होगा और बीवी का माल उसके वारिसों में। इसलिए इस्लाम के मुताबिक़ यह सही नहीं है कि बीवी का माल शौहर के माल के साथ मिल जाए और उसके माल पर भी शौहर क़ब्ज़ा कर ले। महर बीवी का माल है। उसके शौहर या माँ-बाप की तरफ़ से दिए गए तोहफ़े उसका माल हैं। उसको विरासत में मिलनेवाला माल उसका अपना है। फिर अगर औरत तिजारत या नौकरी वग़ैरा के ज़रिए माल कमाती है तो यह भी उसका हक़ है। और बीवी का नफ़क़ा (गुज़ारा भत्ता) उसके शौहर पर वाजिब है। इस तरह इस इस्लामी स्कीम में औरत माली लिहाज़ से बहुत ताक़तवर (Empowered) है।

हमारे समाजी निज़ाम में औरतों के माल पर शौहर और उससे आगे बढ़कर उसके पूरे ससुराल का ज़बरदस्ती क़ब्ज़ा कर लेना बहुत आम बात है। जहेज़ के तौर पर औरत को जो कुछ मिलता है उसे ससुरालवाले अपना समझते हैं। एक बार एक ग़ैर-मुस्लिम डॉक्टर की कहानी पढ़ी थी कि उसकी सारी कमाई रोज़ाना उसकी सास ले लेती है, और सिर्फ़ पचास रुपये रोज़ाना उसके जेब ख़र्च के लिए लौटाती है। यह सूरतेहाल बहुत-से मुस्लिम घरानों में भी पाई जाती है, जहाँ काम करनेवाली औरतों से 'उनकी सासें' उनकी सारी कमाई पर क़ब्ज़ा कर लेती हैं। इस रिवाज के ज़रिए सिर्फ़ वे अपनी

बहुओं पर ही ज़ुल्म नहीं करतीं, अपनी बेटियों पर भी इसी तरह के रिवाजी ज़ुल्म के रास्ते आसान करती हैं और नस्ल-दर-नस्ल इस ज़ुल्म के होने का ज़रिआ बनती हैं।

सबसे बड़ा मसला विरासत में औरत के हिस्से के बारे में है। इस्लामी क़ानून के मुताबिक़ माँ, बेटी और बीवी को हर सूरत में मरनेवाले के माल और जायदाद से हिस्सा मिलता है। इनके अलावा बहुत-सी सूरतों में दूसरी रिश्तेदार औरतें जैसे बहन और पोती वग़ैरा का भी हिस्सा मिलता है। शायद आज भी कुछ गिने-चुने घराने ही होंगे जहाँ औरतों को यह हिस्सा दिया जाता है। क़ुरआन ने विरासत के अहकाम को बहुत तफ़सील से बयान किया है और इन अहकाम की ख़िलाफ़वर्ज़ी पर बड़ी ख़ौफ़नाक धमकी सुनाई है। लेकिन इसके बावजूद औरतों को विरासत के माल में हिस्सा देने का आम रिवाज दीनदार घरानों में भी नहीं हो पाया है। अकसर घरानों में इसकी अदाएगी में औरतें ही रुकावट बनती हैं। घर के बुज़ुर्ग के मरने के बाद बेवा माँ को इस बात से तकलीफ़ होती है कि उसके मरे हुए शौहर की जायदाद तक़सीम हो। हालाँकि यह शरीअत का हुक्म है। फिर जब तक़सीम का मरहला आता है तो बेटों की बीवियों को यह पसन्द नहीं आता कि उनकी नंदों को हिस्सा दिया जाए। वे हिसाब लगाना शुरू करती हैं कि किस नंद की शादी पर उनके शौहर ने कितना ख़र्च किया था। बहुत-सी बीवियों को चूँकि उनके अपने बापों से हिस्सा नहीं मिला होता है इसलिए वे इसका बदला अपनी नंदों का हिस्सा मारकर लेना चाहती हैं। हालाँकि उन्हें अपना हिस्सा, अपने भाइयों से वुसूल करना चाहिए न कि नंदों का हिस्सा नाजाइज़ तौर पर मारकर। यह मसला उस वक़्त और भी पेचीदा हो जाता है जब मरनेवाला खेती की ज़मीनें छोड़कर मरे, या ऐसा कारोबार छोड़कर मरे जिसकी कमाई ख़ानदान के लालन-पालन का ज़रिआ है।

विरासत के अहकाम शरीअत के अहकाम हैं। उनकी ख़िलाफ़वर्ज़ी ख़ुदा के ग़ज़ब को भड़काने का ज़रिआ बन सकती है। वह दुनिया में बेबरकती की वजह भी बनती है और आख़िरत में अज़ाब की भी। जहाँ तक हमारे मौज़ू (विषय) का ताल्लुक़ है, विरासत के अहकाम औरत को माली मज़बूती

देते हैं। अगर औरत की अपनी कोई कमाई न भी हो तब भी एक मध्यम वर्ग के घराने में औरत को उन साधनों से इतना माल मिल जाता है कि उसको ज़रूरी मआशी मज़बूती मिल जाती है। जो औरतें अपने छोटे से वक़्ती फ़ायदे के लिए शरीअत के ख़िलाफ़ ग़लत रिवाज को आम करती हैं, वे करोड़ों मुसलमान औरतों को कमज़ोर करने का ज़रिआ बनती हैं। इनमें से बहुत-सी औरतें बेवा होने की वजह से, तलाक़ की वजह से, या शौहर के ज़ुल्म की वजह से बेसहारा हो जाती हैं और ऐसी सूरत में उनके जाइज़ हक़ उनको न मिले तो निहायत बेबसी की ज़िन्दगी गुज़ारने पर मजबूर हो जाती हैं। इस सूरतेहाल के लिए हमारे ग़ैर-शरई रिवाज ज़िम्मेदार हैं और यक़ीनन वे मर्द व औरत भी ज़िम्मेदार हैं जो अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल॰) से बग़ावत करके ऐसे रिवाजों को आगे बढ़ाने का ज़रिआ बनते हैं।

इसी तरह का मामला मिल-जुलकर रहने के बारे में उन बहुत सारे हुक़ूक़ का है जो इस्लाम ने औरत को दिए हैं।

इस्लाम औरत को यह हक़ देता है कि उसकी शादी उसकी मरज़ी के ख़िलाफ़ न हो। बहुत-से घरानों में माँ-बाप इसे अपनी इज़्ज़त का मसला बना लेते हैं। लड़की के जज़बात का बिलकुल ख़याल नहीं रखते। ज़ात-पात और ख़ानदानी मेयार वग़ैरा के पैमानों को ग़ैर-ज़रूरी अहमियत देते हैं। आज भी ऐसे घराने मौजूद हैं जहाँ रिश्ता तय करते वक़्त लड़की से उसकी राय तक नहीं ली जाती। घर में ज़ोर-शोर से शादी की तैयारी होती रहती है और लड़की को पता ही नहीं होता कि उसका होनेवाला शौहर कौन है। शादी की रज़ामन्दी देना सिर्फ़ एक रस्म बन जाता है, इसलिए कि इस मौक़े पर इनकार करना या अपनी राय देना लड़की के लिए अमली तौर से मुमकिन नहीं रहता। यह माँ की ज़िम्मेदारी है कि वह रिश्ता तय करने से पहले लड़की से खुलकर बात करे और इस बात को यक़ीनी बनाए कि उसका दूल्हा उसकी मरज़ी से तय हो।

इस्लाम बीवी को नान-नफ़क़े का हक़ देता है। यानी उसके अपने और शौहर की ज़िन्दगी के मेयार के मुताबिक़ मुनासिब सहूलतें उसको मिलें। यह नहीं कि बहू को नौकरानी समझा जाए और सारे घर और ससुराल की

ख़िदमत का बोझ उसपर लाद दिया जाए। इस्लाम प्राइवेसी का हक़ देता है। हिजाब को ज़रूरी क़रार देता है। देवर, जेठ, नन्दोइ वग़ैरा सब ग़ैर-महरम रिश्तेदार हैं। इस्लामी रहन-सहन का ये लाज़िमी तक़ाज़ा है कि इनके सिलसिले में मुनासिब फ़ासिले को यक़ीनी बनाया जाए। मुनासिब प्राइवेसी के बग़ैर, इन रिश्तेदारों के साथ रहने पर मजबूर करना या उनकी ख़िदमत पर मजबूर करना, उनसे खुलकर मिलने पर मजबूर करना या ऐसा रहन-सहन जिसमें उन रिश्तेदारों से मुनासिब फ़ासिला बनाए रखना मुमकिन न हो, यक़ीनन इस्लामी तालीमात के ख़िलाफ़ है। इस्लाम की इन तालीमात पर अमल हो तो उन बहुत-से ख़ुराफ़ात और ज़ुल्म से बचा जा सकता है जो मक़ामी समाज के असर से अब मुसलमान घरों में भी घुस आए हैं। आमतौर पर घर के रहन-सहन पर घर की बूढ़ी औरत यानी सास का कंट्रोल होता है। ग़लत रिवायतों की हिफ़ाज़त करने के लिए भी वही ज़िम्मेदार होती हैं। बहुत-सी औरतें अपने लड़कों के दरमियान भाईचारा और मज़बूत रिश्ते के लिए यह ज़रूरी समझती हैं कि वे सब और उनकी बीवियाँ एक ही घर में बहुत ज़्यादा बेतकल्लुफ़ बनकर रहें। न इस्लाम इसकी इजाज़त देता है और न भाइयों के दरमियान भाईचारे के लिए ज़रूरी है। बुज़ुर्ग औरतें चाहें तो इन रिवायतों के सुधार और पाकीज़ा इस्लामी रहन-सहन की क़द्रों को बढ़ावा देना उनके लिए मुश्किल नहीं होगा।

रिश्तों की बेहतरी और औरतें

यह तो हक़ (अधिकार) व फ़राइज़ (ज़िम्मेदारियों) की बहस हुई। इनसानी रिश्ते सिर्फ़ हुक़ूक व फ़राइज़ के क़ानूनी बैलेंस से मज़बूत नहीं हो सकते। ख़ास तौर पर मज़बूत ख़ानदानों की बुनियाद के लिए हुक़ूक़ व फ़राइज़ का बैलेंस भी ज़रूरी है और उसके अलावा, एक-दूसरे के लिए मुहब्बत, एहतिराम, भरोसा और क़ुरबानी जैसे जज़बात भी ज़रूरी हैं। ख़ानदानी ज़िन्दगी में बदअम्नी की अस्ल वजह ग़लत और मुख़ालिफ़ जज़बात होते हैं। ऐसी बदअम्नी यक़ीनन औरत ही को नुक़सान पहुँचाती है और उसको कमज़ोर कर देती है। तहक़ीक़ से यह बात मालूम होती है कि अकसर इन मुख़ालिफ़ जज़बात को बढ़ावा देने में भी औरतों का रोल होता

है। हमारे समाज में तलाक़ के अकसर क़िस्से के पीछे किसी औरत का ही हाथ होता है। सास और बहू के रिश्ते तो हमारे मुल्क में नाविलों से लेकर फ़िल्मों और सीरियलों तक का पसन्दीदा विषय है। अकसर सास और बहू के रिश्ते, माँ-बेटे और शौहर-बीवी के रिश्ते में भी असर डालने लगते हैं। अगर सास समझदारी से काम न ले तो वह अपने बेटे की शादीशुदा ज़िन्दगी को मुश्किल बना देती है। कभी वह ख़ुद बेटे को तलाक़ के लिए मजबूर करती है और कभी ऐसे हालात पैदा कर देती है, जिनका लाज़िमी नतीजा शौहर और बीवी की जुदाई ही की सूरत में निकलता है। कई सूरतों में शौहर की बहनें और दूसरी रिश्तेदार औरतें भी तलाक़ की वजह बनती हैं।

ख़ानदानी निज़ाम की बदअम्नी के ज़रिए औरत को कमज़ोर करने में सिर्फ़ सास और ससुराली रिश्तेदारों का ही हाथ नहीं होता, ख़ुद लड़की और उसकी माँ का भी बहुत-सी सूरतों में बहुत ख़राब रोल होता है। हमारे समाज में सास, नन्द, देवरानी, जिठानी और दूसरे ससुराली रिश्तेदारों के बारे में ऐसे ग़लत तसव्वुरात आम हैं कि एक लड़की अपने लाशुऊर में इन ही तसव्वुरात को लेकर ससुराल में क़दम रखती है। अगर लाशुऊर में इन रिश्तों की कोई ख़ास छवि बैठ जाए तो रवैयों पर उसका असर लाज़िमी तौर पर पड़ता है। वह हर ससुराली रिश्तेदार को शक की निगाह से देखती है। उसकी मामूली नाराज़गी में भी ज़ुल्म और ज़्यादती का एहसास होने लगता है। हर मामले से वह ससुराल और मैके के दरमियान फ़र्क़ करने की आदी हो जाती है। ऐसे रवैयों से तल्ख़ियों का पैदा होना फ़ितरी बात है। अकसर लाशुऊर की ये तस्वीरें माएँ उस रोज़ाना की बातचीत के ज़रिए बनाती हैं जो वे अपने घरों में करती रहती हैं। माँ ख़ुद अपने ससुराल और ससुराली रिश्तेदारों के बारे में हमेशा मुख़ालिफ़ बातों का इज़हार करती रहे या चुन-चुनकर ऐसे घरानों का ज़िक्र करती रहे जहाँ ससुरालवाले ज़ालिम हैं तो कम उम्र लड़की का नया ज़ेहन, ससुराल के बारे में कुछ ख़ास तसव्वुरात पैदा कर लेगा। ये तसव्वुरात उस मासूम लड़की को नई ज़िन्दगी के चैलेंजों के लिए नाकारा बना देंगे। उसकी जज़बाती ज़िहानत कम हो जाएगी। फिर वह ससुराल में जाएगी तो उसकी ग़लत सोच पूरे माहौल को कड़वा बना देगी। जज़बाती ज़िहानत की

कमी आदमी को कमज़ोर (Vulnerable) बना देती है। ससुरालवाले भी समझदार न हों तो फिर कड़वाहट बढ़ती है और नतीजा या तो अलग होने की सूरत में निकलता है या ज़ुल्म की सूरत में।

अगर औरतें इस्लाम की तालीमात को अपने घरों में लागू करने के लिए कमर कस लें और यह तय कर लें कि वे अल्लाह और उसके रसूल के हुक्मों के मुक़ाबले में न रिवाजों की परवा करेंगी, न अपने तंगनज़र वक़्ती फ़ायदों की, तो ख़ुद-ब-ख़ुद सूरतेहाल बदलेगी, और यही औरतों की ज़िम्मेदारी है। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने एक मशहूर हदीस में कहा है, "तुममें से हर एक निगराँ है और अपने ज़ेरे-निगरानी के सिलसिले में जवाबदेह है," (बुख़ारी)। पैग़म्बर (सल्ल॰) ने इस हदीस में दूसरे लोगों के तज़किरे के साथ-साथ यह भी कहा है कि औरत अपने शौहर के घर और उसके बच्चों की निगराँ है और उसके सिलसिले में जवाबदेह है। इसलिए अगर कोई औरत घर की ज़िम्मेदार है तो उस घर में सही रिवायतों और पाकीज़ा इस्लामी रहन-सहन को आगे बढ़ाने की वह ज़िम्मेदार है और इस ज़िम्मेदारी के सिलसिले में वह अल्लाह के सामने जवाबदेह है।

आज अल्लाह का शुक्र है ऐसी औरतों की कमी नहीं है जो इस सूरतेहाल को बदलने में अहम रोल अदा कर रही हैं। माओं जैसी प्यार-मुहब्बत लुटानेवाली सासें भी मौजूद हैं। मैं ऐसी कई बुज़ुर्ग औरतों को जानती हूँ जिन्होंने अकेले दम पर पूरे ख़ानदान को इस बात पर तैयार किया कि वे बेटियों का विरासत में हिस्सा अदा करें। उन्होंने अपने ख़ानदानों से ग़लत रस्म व रिवाज को ख़त्म किया। शादियों को आसान बनाया। अपने घर के रहन- सहन और तौर-तरीक़ों को शरीअत की तालीमात के मुताबिक़ बदला। ये मिसालें आम हों और औरतें शरीअत पर अमल करने का बीड़ा उठाकर आगे बढ़ें तो हमारे घर और ख़ानदान 'इन शाअल्लाह' दुनिया में जन्नत के नमूने बनेंगे और औरत को उसका वह हक़ीक़ी मक़ाम मिलेगा जो इस्लाम ने उसे दिया है।

बच्चे और उनकी तरबियत

हम्ल के मरहले और उसके नफ़सियाती तक़ाज़े

अल्लाह ने इनसान को बेशुमार नेमतें दी हैं, उनमें बच्चे सबसे बड़ी नेमत हैं। बच्चे पूरी इनसानियत का सरमाया होते हैं। इसी लिए अल्लाह ने उनकी बेहतरीन तरबियत की ज़िम्मेदारी माँ-बाप के ज़िम्मे की है। ऐसे माँ-बाप जो ख़ुद दीन की समझ-बूझ रखते हों वे अपने बच्चों के ज़रिए एक बेहतरीन क़ौम को और इनसानियत के शानदार भविष्य को भी बना सकते हैं।

अल्लाह ने माँ के पैरों के नीचे जन्नत रखी है। क़ुरआन में अल्लाह ने माँ के एहसान का ख़ास तौर से ज़िक्र किया है और उसका हवाला देकर माँ-बाप के साथ अच्छे सुलूक की ताकीद की है।

> "हमने इनसान को हिदायत की कि वह अपने माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करे। उसकी माँ ने तकलीफ़ उठाकर उसे पेट में रखा और तकलीफ़ उठाकर ही उसको जन्म दिया और उसके हम्ल (गर्भ) और दूध छुड़ाने में तीस महीने लग गए।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-46 अहक़ाफ़, आयत-15)

हम्ल और माँ के पेट का मरहला एक बच्चे की ज़िन्दगी का बड़ा अहम मरहला होता है। इस मरहले में उसकी शख़्सियत की बुनियाद पड़ जाती है। उसकी जिस्मानी शख़्सियत की भी और रूहानी, अख़लाक़ी और ज़ेहनी शख़्सियत की भी। बच्चे की ज़िन्दगी-भर सेहत कैसी रहेगी? उसकी सलाहियतें क्या होंगी? उसकी शख़्सियत की ख़ास बात क्या होगी? उसके अख़लाक़ क्या होंगे? इन सब बातों के लिए पाएदार बुनियादें माँ के पेट में ही पड़ जाती हैं और इन बुनियादों के बनाने में माँ का बड़ा अहम किरदार होता है।

इस किरदार को सही तौर से अदा करने के लिए माँ को बड़ी तकलीफ़ों से गुज़रना पड़ता है और बड़े सख़्त जिस्मानी, जज़बाती और नफ़सियाती मरहलों का सामना करना पड़ता है। इन मरहलों में माँ का सही रवैया उसकी सेहत के लिए भी ज़रूरी है और उसके बच्चे की सेहत के लिए भी। ऐसा सही रवैया अपनाने में माँ को भी अपना रोल अदा करना पड़ता है और उन लोगों को भी जो उसके साथ रह रहे हैं। ख़ास तौर पर शौहर यानी होनेवाले बच्चे के बाप को और उसके साथ-साथ घर के दूसरे लोगों, यानी होनेवाले बच्चे के दादा-दादी, नाना-नानी और दूसरे रिश्तेदारों को भी बेहतर रवैया अपनाना ज़रूरी होता है।

हम्ल के दौरान होनेवाली नफ़सियाती तब्दीली

हम्ल के दौरान औरत बहुत सारी जिस्मानी तब्दीलियों से गुज़रती है। जैसे ही उसके जिस्म में एक नए इनसानी वुजूद की परवरिश शुरू होती है, उसकी जिस्मानी ताक़तों का बड़ा हिस्सा, उस नन्हे वुजूद की परवरिश के लिए ख़ास हो जाता है। हार्मोन में बदलाव आने लगते हैं। जिस्म से बीमारियों को दूर करनेवाली ताक़त कम हो जाती है। बीमारियों का लगना आसान हो जाता है। कुछ औरतों के मसूड़ों में दर्द शुरू हो जाता है। किसी के जिस्म पर तरह-तरह के निशान और ऐंठनें शुरू हो जाती हैं। जिस्म गर्म रहने लगता है। पसीना ज़्यादा आने लगता है। जोड़ों और पीठ में दर्द शुरू हो जाता है। उल्टी की शिकायत तो बहुत आम है। उठने, बैठने, सोने और लेटने में परेशानी होने लगती है। जिस्म की बनावट में होनेवाला बदलाव हर हरकत में रुकावट पैदा करना शुरू करता है। इस तरह के दसियों मसले पैदा होने लगते हैं। कुछ बदलाव बहुत तकलीफ़ देनेवाले होते हैं। उनमें से कुछ बदलाव वे होते हैं जिनको दूसरे लोग महसूस करते हैं। किसी भी परेशानी में आदमी के जिस्म के कुछ हिस्सों का बोझ बढ़ जाता है, लेकिन हम्ल एक ऐसा मरहला है जिसमें औरत के तमाम ज़ाहिरी और अन्दुरूनी हिस्सों का बोझ बढ़ जाता है। उसके दिल, गुर्दे और जिगर को भी बहुत ज़्यादा काम करना पड़ता है।

जिस्मानी बदलाव तो फिर भी दूसरे लोग नोट करते हैं। अस्ल मसला नफ़सियाती और जज़बाती बदलाव का होता है। ख़ास तौर पर वे लड़कियाँ जो पहली बार हम्ल के मरहले से गुज़र रही हों, उनके लिए यह मरहला बड़ा चैलेंजिंग होता है। हम्ल के शुरुआती वक़्त में औरत के चेहरे पर निखार आ जाता है। सब लोग समझते हैं कि वह बेहद ख़ुश है। बेशक हर औरत के लिए यह बहुत ख़ुशी का मौक़ा होता है लेकिन ख़ुशी के साथ-साथ बहुत-से नफ़सियाती चैलेंजों से भी उसे गुज़रना पड़ता है, जिसका दूसरे लोगों को अन्दाज़ा नहीं होता। हर हम्ल अपने-आपमें नया और अलग होता है और हर हम्ल के तजरिबे भी अलग होते हैं। इसलिए जो औरतें एक से ज़्यादा बार हामिला रह चुकी हैं वे भी कई बार नए चैलेंजों का सामना करती हैं।

हम्ल (गर्भ) ठहरते ही औरत के जिस्म में बहुत-से हार्मोनल बदलाव शुरू हो जाते हैं। उसके जिस्म का रासायनिक बैलेंस बदल जाता है। इसका सीधा असर उसके मिज़ाज और नफ़सियात पर भी होता है। मूड तेज़ी से बदलने लगता है। ख़ुशी व मुसर्रत से शदीद घबराहट व बेचैनी के मरहले तक पहुँचने में कुछ सेकेंड से ज़्यादा नहीं लगते। हर आदमी ज़िन्दगी में जज़बाती ऊँच-नीच से गुज़रता है, लेकिन हामिला औरत बहुत ज़्यादा और बड़ी तेज़ी से इन मरहलों से गुज़रने लगती है। उसकी तबीयत हस्सास हो जाती है। इन्तिहाई मामूली बातों पर आँखों से आँसू बहने लगते हैं। कभी मिज़ाज में चिड़चिड़ापन आ जाता है, छोटी-छोटी बातों पर ग़ुस्सा आने लगता है।

ये बदलाव सब औरतों में एक-सा नहीं होता। औरत की शख़्सियत, उसके लाशुऊर की प्रोग्रामिंग और उसके साथ रहनेवालों का रवैया और माहौल, इन सबका औरत को नार्मल रखने में अहम रोल होता है। मिसाल के तौर पर अगर शुरुआती दौर में औरत बहुत ज़्यादा तनाव का शिकार हो तो उसे मतली और उल्टी का सामना करना पड़ता है। नतीजे में वह मतली ही पर ध्यान देने लगती है, खाने-पीने से परहेज़ करने लगती है। खाने की कमी की वजह से और बीमार हो जाती है। अगर शुरुआत में वह एतिमाद के साथ हम्ल को क़बूल करे तो इस तकलीफ़ से बच सकती है।

पहले तीन महीने

यह हम्ल का पहला मरहला होता है। पहली बार हामिला होनेवाली (गर्भवती) औरतों के लिए यह बिलकुल नया तजरिबा होता है। मूड में अचानक बदलाव आने शुरू हो जाते हैं। इस मरहले में इस्क़ात (गर्भपात, Miscarriage) का ख़तरा ज़्यादा होता है। कुछ औरतें इस ख़तरे की वजह से डिप्रेशन का शिकार हो जाती हैं। ख़ास तौर पर जिन औरतों को पहले कभी ऐसे हादिसे से गुज़रना पड़ा, उनका डर सीरियस नफ़सियाती मसले भी पैदा कर सकता है। ऐसी औरतें इस मरहले में अपने हम्ल को छिपाने की भी कोशिश करती हैं।

चौथे से छठा महीना

आमतौर पर यह हम्ल के दौरान होनेवाली तकलीफ़ों के मुक़ाबले में आरामदेह मरहला होता है। शुरुआती तीन महीनों में औरत जिस ज़ेहनी दबाव से गुज़रती है, वह यहाँ किसी हद तक कम हो जाता है। गर्भपात का ख़तरा भी टल जाता है। इस मरहले में माँ के पेट में बच्चे हरकत करना शुरू कर देते हैं। बच्चा हाथ-पैर हिलाने लगता है और माँ उसके हरकत करने से बहुत ख़ुश होती है। उसकी ख़ाहिश होती है कि शौहर यानी बच्चे का बाप भी इस हरकत को महसूस करे। इस दौर में एक और दिलचस्प बदलाव होना शुरू हो जाता है। औरत बहुत ज़्यादा अपने शौहर पर निर्भर हो जाती है। जिस्मानी बदलाव की वजह से वह चाहती है कि शौहर हमेशा उसके आसपास रहे।

सातवें से नवाँ महीना

इस मरहले में औरत बच्चा जनने के लिए अपने-आपको तैयार करती है। जहाँ आनेवाले बच्चे को लेकर बहुत-से ख़ाब होते हैं वहीं बहुत-से डर भी जन्म लेते हैं। पहली बार माँ बननेवाली औरत में दर्दे-ज़ेह (प्रसव पीड़ा, Labour Pains) का डर बहुत ज़्यादा होता है। अनगिनत सवाल होते हैं जिनका जवाब उसे नहीं मिलता। आनेवाले बच्चे की सेहत और जिस्मानी बनावट वग़ैरा के बारे में भी वह बहुत ज़्यादा फ़िक्रमन्द होती है। वक़्त से पहले हो जानेवाली पैदाइश वग़ैरा का भी ख़ौफ़ सताता है।

माँ की नफ़सियाती सेहत का बच्चे पर असर

नई खोज से यह बात साबित हो चुकी है कि माँ के पेट ही में बच्चे की नफ़सियाती नशो-नुमा भी शुरू हो जाती है। पेट के बच्चे की नफ़सियात (Fetal Psychology) नफ़सियात का एक अहम विषय है। नवें हफ़्ते यानी तीसरे महीने ही में बच्चा आवाज़ें सुनने और उसको रिस्पांस करने के लायक़ हो जाता है। माँ की आवाज़ पहचानने लगता है। कुछ और वक़्त गुज़रता है तो आवाज़ से माँ का मूड भी समझने लगता है। माँ जब हँसती है तो अल्ट्रासाउंड में उसका असर बच्चे पर साफ़ महसूस होता है। वह भी ख़ुशी का इज़हार करता है और उछलने-कूदने लगता है और अगर माँ ग़मगीन हो या तनाव का शिकार हो तो बच्चा उसका असर भी क़बूल करता है। रिसर्च से मालूम होता है कि हम्ल के दौरान तनाव, ग़लत सोच, हादिसे, झगड़े का असर बच्चे की जिस्मानी सेहत पर भी पड़ता है और नफ़सियाती सेहत पर भी। तनाव और नफ़सियाती उलझनों की शिकार माओं के बच्चे पैदाइशी बीमारियों का शिकार हो सकते हैं। उनका वज़्न कम रह जाता है। जिस्म के हिस्से पूरी तरह नहीं बन पाते। ज़ेहनी सलाहियत पर इसका असर पड़ता है। वे ए.डी.एच.डी. (ADHD) जैसी नफ़सियाती बीमारियों का शिकार हो सकते हैं जो उन्हें अच्छा तालिबे-इल्म (विद्यार्थी) बनने नहीं देतीं। चुनाँचे हम्ल के दौरान जहाँ हामिला औरत की यह ज़िम्मेदारी है कि वह ख़ुद को सही सोच, अच्छे ख़यालात और पाकीज़ा कामों में लगाए रखे वहीं घर के सारे लोगों की ज़िम्मेदारी है कि इस मामले में उसकी हर मुमकिन मदद करें।

हम्ल के ताल्लुक़ से मुसबत (सकारात्मक) रवैया

ख़ुशगवार हम्ल के लिए पहली ज़रूरत यह है कि हम्ल के बारे में माँ का और दूसरे रिश्तेदारों का भी रवैया बेहतर हो। यह एक पाकीज़ा इनसानी ज़िम्मेदारी है। हामिला होने पर अल्लाह का शुक्र अदा करना चाहिए और बच्चे की सेहत और अच्छे अख़लाक़ के लिए अल्लाह से दुआ करनी चाहिए।

"जब मर्द ने औरत को ढाँक लिया तो उसे हल्का-सा हम्ल (गर्भ) ठहर गया जिसे लिए-लिए वह चलती-फिरती रही। फिर जब वह

बोझल हो गई तो दोनों ने मिलकर अल्लाह, अपने रब, से दुआ की कि अगर तूने हमको अच्छा-सा बच्चा दिया तो हम तेरे शुक्रगुज़ार होंगे।" (क़ुरआन, सूरा-7 आराफ़, आयत-189)

यह औरत के लिए बहुत बड़ा शर्फ़ (सम्मान) है कि दुनिया के पैदा करनेवाले ने इनसान की पैदाइश के लिए उसके पेट को चुना है। वह नहीं जानती कि उसकी कोख में पल रही यह नन्ही-सी जान, किन बड़ी ख़ूबियों और सिफ़ातों से सजी होगी और इनसानियत के लिए क्या-क्या लेकर आएगी। एक ईमानवाली औरत हम्ल को मुसीबत नहीं समझती, बल्कि पूरे जोश व ख़रोश और अच्छे तरीक़े से करने, ख़ुदा के लिए शुक्र का जज़बा और होनेवाले बच्चे के सिलसिले में अच्छी उम्मीदों और ख़ाबों के साथ इस पाकीज़ा ज़िम्मेदारी को पूरा करने के लिए तैयार हो जाती है। इस ज़माने में अल्लाह की ख़ास रहमत भी उसकी तरफ़ होती है। कई हदीसों से मालूम होता है कि हम्ल माँ की फ़ज़ीलत का एक अहम सबब और औरत के लिए अज्र हासिल करने का एक अहम ज़रिआ है। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने हम्ल और पैदाइश के दौरान मौत को शहादत की मौत क़रार दिया है, (हदीस : अबू-दाऊद)। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने माँ के हक़ को बाप से ज़्यादा क़रार दिया है। आलिमों ने इसकी वजह यही बताई है कि माँ हम्ल, पैदाइश और दूध पिलाने के सख़्त मरहलों से गुज़रकर उसकी परवरिश करती है।

कुछ लोग जब हम्ल नहीं चाहते या उसकी उम्मीद नहीं रखते लेकिन इसके बावजूद हम्ल ठहर जाता है तो ऐसी सूरत में औरत और उसके जान-पहचानवाले तनाव के शिकार हो जाते हैं। हम्ल के न चाहने की वजह से उसके लिए उनका रवैया बुरा हो जाता है। इस्लाम ने वज़ाहत की है कि हम्ल का ठहरना या न ठहरना यह ख़ुदा की मरज़ी का हिस्सा है। पैग़म्बर (सल्ल॰) ने एक हदीस में साफ़ फ़रमाया है कि हम्ल का होना न होना तक़दीर से है, (हदीस : मुस्लिम)। इसलिए ईमानवाले बन्दे को अल्लाह के देने पर हमेशा ख़ुश रहना चाहिए।

कुछ औरतों की ख़ाहिश लड़के की होती है और उन्हें यह फ़िक्र रहती है कि कहीं लड़की पैदा न हो जाए। यह सोच भी ग़लत रवैये की वजह बनती

है। इस्लाम इस सोच की भी सख़्ती से मज़म्मत (निंदा) करता है। लड़कियों की पैदाइश और उनकी परवरिश जन्नत को हासिल करने का ज़रिआ है।

कुछ औरतों को पैदाइश के मरहले का डर, पैदाइश के बाद बीमार होने, मोटे हो जाने और हुस्न में कमी आ जाने का डर भी सताता है। एक ईमानवाली औरत अल्लाह पर भरोसा करती है। वह यह यक़ीन रखती है कि वह इनसानी नस्ल के बढ़ाने की पाकीज़ा ज़िम्मेदारी अंजाम दे रही है। अल्लाह उसके साथ अच्छा मामला करेगा और जो मामला भी अल्लाह करेगा, उसमें आख़िरकार भलाई ही होगी। इसलिए उसे तनाव में पड़ने की ज़रूरत नहीं। एक ईमानवाली औरत अल्लाह से इस हालत में अपने लिए और अपने होनेवाले बच्चे के लिए ख़ैर और भलाई की दुआ करती रहती है। क़ुरआन में अल्लाह ने एक नेक बन्दी मरयम (अलैहि॰) की माँ के जज़बात को बयान करते हुए कहा है—

> "(वह उस वक़्त सुन रहा था) जब इमरान की औरत कह रही थी कि मेरे पालनहार! मैं इस बच्चे को जो मेरे पेट में है तेरी नज़्र (भेंट) करती हूँ, वह तेरे ही काम के लिए वक़्फ़ होगा।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-35)

हामिला (गर्भवती) औरत के साथ अच्छा रवैया

एक सेहतमन्द और तनदुरुस्त माँ ही सेहतमन्द बच्चे को जन्म दे सकती है। हम्ल के दौरान माँ के खाने-पीने पर ख़ास ध्यान देना चाहिए। घर के दूसरे लोगों को चाहिए कि होनेवाली माँ के खाने-पीने का ख़ास ख़याल रखें और इस बात को यक़ीनी बनाएँ कि वह अच्छे खान-पान की पाबन्दी कर रही हो। कभी-कभी हामिला औरत, इस दौरान में जिस नफ़सियाती कैफ़ियत से गुज़र रही होती है, उसकी वजह से अपने-आपपर और अपने खाने-पीने पर ध्यान नहीं दे पाती। यह शौहर और घर के दूसरे लोगों की ज़िम्मेदारी है कि उसका ख़याल रखें। इसी तरह यह भी ज़रूरी है कि उसको नफ़सियाती सपोर्ट दिया जाए। उसे और उसके पेट में पल रहे मासूम बच्चे को ख़ुशगवार और सेहतमन्द माहौल दिया जाए। इस मरहले में अगर शौहर

और दूसरे क़रीबी रिश्तेदार औरत को जज़बाती सहारा दें, उसकी हिम्मत बढ़ाएँ और दिलजोई करें, उसे अपने चारों तरफ़ ख़ुशियों और बेपनाह मुहब्बतों से भरा हुआ पाकीज़ा और सेहतमन्द माहौल मिले, उसे यह महसूस हो कि घर का हर-हर हिस्सा नए मेहमान की ख़बर पर बहुत ज़्यादा ख़ुश व ख़ुर्रम है और उसपर जान निछावर किए हुए है, तो ऐसे माहौल में हामिला औरत आसानी से ऊपर दिए गए नफ़सियाती चैलेंजों का मुक़ाबला कर सकती है और ख़ुश व ख़ुर्रम रह सकती है। वह ख़ुश और मुत्मइन रहेगी तो उसका बच्चा भी सेहतमन्द रहेगा।

हमारे रिवायती समाज में आमतौर पर इन बातों का ख़याल नहीं रखा जाता। ख़ास तौर से पहले हम्ल में, जबकि लड़की अभी नातजरिबेकार नई-नवेली दुल्हन होती है, हम्ल के बाद उसकी मुश्किलों में और बढ़ोत्तरी होती है। रिवायती समाज ने सास और बहू का एक ख़ास रिश्ता बना दिया है। शादी के बाद कुछ दिन तो सब सही चलता है लेकिन हम्ल का मरहला आते-आते बहुत-से घरों में मन-मुटाव शुरू हो जाते हैं और उनका असर बहू के खाने-पीने पर पड़ता है। उसके ख़ास खान-पान की ज़रूरत का ख़याल नहीं रखा जाता। हम्ल की वजह से वह जल्दी थक जाती है। पहले हम्ल में तो बहुत ज़्यादा आराम की ज़रूरत पेश आती है। ऐसे में फ़ितरी तौर पर घरेलू काम-काज भी मुतास्सिर हो सकता है। इससे भी झगड़े पैदा होने लगते हैं।

जहेज़ के लालची ख़ानदानों में जहेज़ और दूसरी माँगों को लेकर झगड़े भी इस दौरान बढ़ जाते हैं। यह बड़ी बदक़िस्मती की बात है कि कई घरानों में अस्पताल, इलाज और उसमें होनेवाले ख़र्चों को लेकर औरत के मैके और ससुराली ख़ानदान में झगड़े शुरू हो जाते हैं। इस्लाम ने बहुत साफ़ तौर पर बीवी के ख़र्चे शौहर के ज़िम्मे रखे हैं। शौहर के लिए हरगिज़ जाइज़ नहीं कि वह बच्चे की पैदाइश वग़ैरा का बोझ अपनी ससुराल पर डाले और न यह जाइज़ है कि ताक़त के बावजूद वह अपनी बीवी को बेहतर-से-बेहतर इलाज की सहूलत फ़राहम करने में किसी काहिली से काम ले। एक हामिला औरत जो बहुत ज़्यादा ज़ेहनी और जिस्मानी दबाव के दौर से गुज़र रही है, उसे यह मालूम हो कि उसकी हस्ती को लेकर उसके ससुराल और मैकेवाले

लड़ रहे हैं, तो उसके दिल पर क्या गुज़रेगी? फ़ितरी तौर पर हम्ल के इस सख़्त मरहले में, ऐसे झगड़े की जज़बाती तकलीफ़ कई गुना बढ़ जाती है। यह बहुत बड़ा ज़ुल्म है जो हमारे समाज में बहुत-सी मासूम लड़कियों की सेहत ही बरबाद नहीं करता, बल्कि उनकी कोख में पल रही अगली नस्लों पर भी बहुत ज़्यादा ख़राब असर डालता है।

हामिला (गर्भवती) औरत और पाकीज़ा दीनी माहौल

साइंस और रिवायतों दोनों से यह बात साबित है कि होनेवाले बच्चे पर माँ के खान-पान, माहौल, घरेलू रिश्ते, उसके अख़लाक़ व किरदार का गहरा असर पड़ता है। कोख में पल रहे बच्चे को अपनी माँ से खान-पान मिलता है। इसलिए जहाँ यह ज़रूरी है कि यह खान-पान भरपूर और सेहतमन्द हो वहीं यह भी ज़रूरी है कि यह हलाल और पाकीज़ा हो। इस्लामी इतिहास में हमको कुछ माओं के हैरतअंगेज़ क़िस्से मिलते हैं, जिन्होंने अपनी औलाद को हराम लुक़्मों से बचाने के लिए ग़ैर-मामूली एहतियातों से काम लिया।

जिस तरह हम्ल के दौरान जिस्मानी खान-पान पर ध्यान ज़रूरी है उसी तरह बल्कि उससे ज़्यादा रूहानी खान-पान पर भी ध्यान देने की ज़रूरत है। यह वह दौर है जिसमें मासूम बच्चे के लाशुऊर की बुनियादें पड़ रही हैं। इस दुनिया से उसका सारा ताल्लुक़ उसकी माँ के वास्ते से है। चुनाँचे माँ जो कुछ करती है और सोचती है या उसके आसपास के माहौल में जो कुछ होता है, उसका असर इस नए मेहमान की शख़्सियत की बुनियादों पर पड़ता है। एक सच्ची मुसलमान औरत, हम्ल के ज़माने में अपनी मसरूफ़ियतों और कामों के सिलसिले में ज़्यादा हस्सास हो जाती है। क़ुरआन का ज़्यादा-से-ज़्यादा पढ़ना और उसपर ग़ौर-फ़िक्र करना, अल्लाह को याद करना, नमाज़ की पाबन्दी करना, ताक़त-भर नफ़्ल का एहतिमाम करना, पाकीज़ा बातचीत, अच्छे लोगों के क़िस्से वग़ैरा से हामिला (गर्भवती) औरत को भी सुकून मिलेगा और उसका बच्चा भी सेहतमन्द और जिस्म व सीरत के हुस्न से मालामाल होगा। हामिला औरत के साथ घर के दूसरे लोगों की भी ज़िम्मेदारी है कि वे इस बात को यक़ीनी बनाएँ कि बच्चे को अपनी परवरिश के लिए

पाकीज़ा माहौल मिले। घर में अच्छी बातें होती रहें। जो आवाज़ें भी माँ के पेट में पल रहे उस नन्हे वुजूद के लाशुऊर से टकराएँ वे पाकीज़ा और किरदार बनानेवाली आवाज़ें हों। नमाज़ और क़ुरआन का समझकर पढ़ना होता रहे। दुआएँ पढ़ी जाती रहें। घर के लोग एक-दूसरे के साथ अच्छे लहजे में और मुहब्बत के साथ बात करें।

शोर-शराबा और तेज़ आवाज़ें बच्चे के परवान चढ़ने के लिए बहुत नुक़सानदेह होती हैं। ऐसी आवाज़ों पर बच्चा पेट में बेचैन हो जाता है। अगर घर में लड़ाई-झगड़े का माहौल हो, या रात-दिन टीवी चल रहा हो और उसपर शोर-शराबा और बेहूदा बातों का हंगामा बरपा हो या आसपास गाली-गलोज और गन्दी बातें चल रही हों, तो इन सबका बुरा असर बच्चे के लाशुऊर पर पड़ता है। इसी तरह माँ के अन्दर छल-कपट, हसद, घमण्ड, झूठ, नफ़रत वग़ैरा जैसी अख़लाक़ी बुराइयाँ हों तो वह अपने ख़ून के साथ उनके असर को भी अपने हम्ल तक पहुँचाती है।

यह बात कई खोजों (रिसर्चों) से साबित हो चुकी है कि माँ अपने बच्चे के बारे में जो कुछ सोचती है, उसका असर भी बच्चे की शख़्सियत पर पड़ता है। ऐसी रिसर्चें भी मौजूद हैं कि जिन माओं ने डरावनी फ़िल्में देखने में वक़्त गुज़ारा और उनके डरावने किरदार हम्ल के दौरान उनकी निगाहों में घूमते रहे, उनके बच्चे डरावनी शक्ल व सूरत के साथ पैदा हुए। इसलिए इस दौरान ज़्यादा-से-ज़्यादा नबियों, सहाबा और दूसरे नेक लोगों और बुज़ुर्गों की सीरत को पढ़ते रहना चाहिए। अपने बच्चे को उनके जैसा बनाने का ख़ाब देखना चाहिए। शायद इसी वजह से कुछ लोगों में हम्ल के दौरान ख़ास तौर से सूरा-19 मरयम और सूरा-12 यूसुफ़ पढ़ने का रिवाज है।

अपने बच्चे के भविष्य के बारे में अच्छा सोचने के लिए बाक़ायदा अभ्यास भी बताए जाते हैं, जिन्हें वीज़ोलाइज़ेशन या इमेजरी (Imagery) कहा जाता है। इसमें औरत माहिर काउंसलर की निगरानी में अपने होनेवाले बच्चे के बारे में सोचती है। उसके शानदार और पाकीज़ा भविष्य का तसव्वुर करती है। जागती आँखों से उसके बारे में ऊँचे ख़ाब देखती है। ऐसे तसव्वुरात का गहरा असर अब साइंसी लिहाज़ से साबित है।

क़ुरआन ने नेक औलाद के लिए बहुत ख़ूबसूरत दुआएँ सिखाई हैं। इन दुआओं को इस अर्से में सुबह व शाम ज़्यादा-से-ज़्यादा दोहराते रहिए। इससे अल्लाह की मदद व साथ भी मिलेगा और आपके तसव्वुरात भी पाकीज़ा हो जाएँगे।

रब्बि हब ली मिल-लदुन-क ज़ुर्रिय्यतन तय्यि-बतन इन-न-क समीउद्दुआ।

"पालनहार! अपनी क़ुदरत से मुझे नेक औलाद दे। तू ही दुआ सुननेवाला है।" (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-38)

रब्बि हब ली मिनस्सॉलिहीन।

"ऐ परवरदिगार! मुझे एक बेटा दे जो नेक लोगों में से हो।"
(क़ुरआन, सूरा-37 साफ़्फ़ात, आयत-100)

रब्बना हब लना मिन अज़वाजिना व ज़ुर्रिय्यातिना क़ुर-र-त अअ्युनिवं वज-अलना लिल-मुत्तक़ी-न इमामा।

"ऐ हमारे रब! हमें अपनी बीवियों और अपनी औलाद से आँखों की ठण्डक दे और हमको परहेज़गारों का इमाम बना।"
(क़ुरआन, सूरा-25, फ़ुरक़ान, आयत-74)

बच्चे क्या चाहते हैं?

हर माँ-बाप की यह ख़ाहिश होती है कि वे अपने बच्चे के मिसाली माँ-बाप बनें। उसकी हर ज़रूरत पूरी करें और उसकी ज़िन्दगी को ज़्यादा बेहतर और बामक़सद बनाएँ। यह सवाल हर माँ-बाप के सामने आता है कि क्या इस सिलसिले में वे अपनी ज़िम्मेदारियाँ सही तरीक़े से अदा कर रहे हैं? क्या बच्चे के लिए उनका रवैया सही है? और क्या उनका बच्चा उनसे ख़ुश है? इस फ़िक्रमन्दी के बावजूद सही बात यह है कि अकसर माँ-बाप वह सही नज़र और रवैया नहीं रखते जिसकी बच्चे को ज़रूरत होती है।

नफ़सियात के माहिरों के मुताबिक़ हर बच्चा मुहब्बत, तवज्जोह और अहमियत चाहता है। लेकिन सबसे अहम बात यह है कि वह अपना मक़ाम और अपनी मुस्तक़िल हैसियत और पहचान चाहता है। उसकी हैसियत और पहचान का शुऊर हमें उसे सही तरह से समझने में मदद करता है और गहराई से उसके एहसासों को समझने के लायक़ बनाता है। बच्चों की ज़रूरतें, उनकी ख़ाहिशें और उनके शौक़, ये सारी चीज़ें हम भी जान सकते हैं अगर हम उनसे क़दम-से-क़दम मिलाकर चलें। एक बच्चे में भी वे सारे एहसास होते हैं जो एक बालिग़ आदमी में होते हैं, लेकिन उसके पास तजरिबे की कमी होती है। बच्चा एहसास तो रखता है लेकिन उनको बयान नहीं कर पाता। अपने जज़बात को वह अलफ़ाज़ की शक्ल नहीं दे सकता। इसलिए यह माँ-बाप का फ़र्ज़ है कि अपने बच्चे के जज़बात को समझें और उन जज़बों को लफ़्ज़ों में पिरोने में उसकी मदद करें।

बच्चों का अपने लिए फ़ुरसत का कुछ वक़्त

"मुझे कुछ फ़ुरसत के लम्हे चाहिएँ। स्कूल होमवर्क, ट्यूशन, कराटे की क्लास और तैराकी ये सब मुझे थका देते हैं।"

क्या आपका बच्चा ग़ैर-मामूली तौर पर मसरूफ़ है? क्या उसके पास

उसके अपने लिए फ़ुरसत के लम्हे हैं? नफ़सियात के माहिरों ने आजकल मसरूफ़ माँ-बाप की ज़िन्दगियों में एक नए रुझान को नोट किया है। अपने बच्चों को अपने वक़्त के साँचे में ढालने का रुझान। अपने सबसे मसरूफ़ वक़्त के साँचे में हम अपने बच्चों को भी ढालना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि हमारा बच्चा वे सारी ज़िम्मेदारियाँ सम्भाले जो उसकी पहुँच से बाहर हैं। मक़सद के पीछे बुरी तरह भागते बच्चे के पास कुछ लम्हे भी नहीं होते जिनमें वह अपने तसव्वुरात और सलाहियतों की दुनिया में कुछ वक़्त गुज़ार सके।

बच्चे जब खेलते हैं और खुली वादियों और मैदानों में घूमते हैं तो उनका दिमाग़ कायनात के बहुत छिपे हुए राज़ों और नई-नई चीज़ों को जानने और अक़्ल व समझ को बढ़ाने में मसरूफ़ होता है। वे एक पेड़ को देखते हैं और सोचते हैं कि वह ऐसा क्यों है। एक जानवर को देखते हैं और सोचते हैं कि वह ऐसा क्यों कर रहा है। होमवर्क और क्लासों के बोझ में फँसे आज के बच्चे के पास यह सोचने के लिए वक़्त ही नहीं है। जबकि छिपी हुई नई-नई चीज़ों को जानने की सलाहियतों को उजागर करने के लिए फ़ुर्सत के लम्हे बहुत अहम होते हैं।

बचपन सिर्फ़ गुज़ार देने के लिए नहीं होता। यह ज़िन्दगी का बहुत अहम दौर होता है और इसी दौर में शख़्सियत की बुनियादें बन जाती हैं। इसलिए अपने बच्चों के औक़ात और उनकी मसरूफ़ियतों का इन्तिज़ाम करते हुए हमें सूझ-बूझ से काम लेना चाहिए। फ़ुरसत के लम्हे उनको देने का मतलब यह नहीं है कि उनके साथ टीवी के सामने घंटों बैठ जाएँ, बल्कि उन्हें टहलने के लिए ले जाएँ या उनके साथ पढ़ें या खेलें।

खेल के वक़्त और तख़लीक़ी (रचनात्मक) खेल

> "मुझे अपने पापा के साथ खेलना बहुत पसन्द है। वे मुझे तैराकी करवाने ले जाते हैं और मेरे साथ फ़ुटबॉल भी खेलते हैं।"

कुछ लोग यह समझते हैं कि बच्चों के साथ क्या खेलें? बच्चों के साथ तो बच्चे ही खेल सकते हैं। लेकिन हक़ीक़त यह है कि अपने और बच्चे के बीच मौजूद दीवार को गिराना है और इस रिश्ते को मज़बूत करना है तो खेल

एक बहुत ही अच्छा ज़रिआ है। नफ़सियात के माहिरों की यही राय है कि बच्चों के साथ खेलना बहुत ज़रूरी है, चाहे वह खेल पहाड़ी से पत्थर चुनना ही क्यों न हो।

अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) हसन व हुसैन (रज़ि॰) को अपने कन्धों पर बिठाकर सवारी कराते थे। बच्चों के साथ खेलने के कई क़िस्से हमें पैग़म्बर (सल्ल॰) की ज़िन्दगी में मिलते हैं।

बच्चे की तख़लीक़ी (रचनात्मक) सलाहियतों की तरक़्क़ी के लिए आपके लगातार हौसला बढ़ाने और ध्यान देने की ज़रूरत होती है। बच्चा चाहे छह (6) या दस (10) साल का ही क्यों न हो, वह चाहता है कि आप उसे क़बूल करें, उसे मानें और वह सीखता ही अपने-आपको मनवाकर है। यह एक क़ुदरती बात है कि हर इनसान अपने हर काम को सही समझता है, चाहे वह एक छोटी-सी उम्र का बच्चा ही क्यों न हो। अपने बच्चों से मुहब्बत कीजिए। उनके साथ गुज़रे वक़्त को फ़ुज़ूल मत समझिए। बहुत ग़ौर से उनकी बातें सुनिए और उनका हौसला बढ़ाइए। बच्चों के साथ खेल के वक़्त को रोज़ाना की आदत बनाइए। बच्चों से राबिता रखने (Communication) के लिए यह एक बहुत बड़ा हथियार है। बच्चे रस्मी बातचीत को पसन्द नहीं करते। खेल के दौरान ही आप उनसे बहुत कुछ डिस्कस कर सकते हैं। आप यह जान सकते हैं कि आपकी ग़ैर-मौजूदगी में या स्कूल का वक़्त उसने कैसे और किसके साथ गुज़ारा? खेलते-खेलते बातचीत के दौरान आपको मालूम होगा कि आपके बच्चों के साथी-दोस्त कैसे हैं? वह उनसे अपने ताल्लुक़ को कैसे निभाता है? अगर बचपन से ही आप बातचीत और कम्यूनिकेशन की आदत डालेंगे, चाहे आज यह बातचीत आपके लिए ग़ैर-अहम ही क्यों न हो, तो आगे अपनी ज़िन्दगी के अहम मौक़ों पर भी वह सारी बातों को बिना किसी हिचकिचाहट के आपके सामने बयान करेगा। और आपके और उसके बीच वह दूरी (Gap) नहीं रहेगी जिसकी शिकायत अकसर नई उम्र (Teenagers) और नौजवान बच्चों के माँ-बाप करते हैं।

मेहरबानी करके मेरी सुनिए

"मेरे पापा मुझे हर रात टहलाने ले जाते हैं और गुज़रे हुए दिन की मसरूफ़ियत पूछते हैं।"

बहुत-से माँ-बाप को यह कहते तो सुना है कि हम अपने बच्चों से बातें करने की बहुत कोशिश करते हैं, मगर वे अपनी दिन-भर की मसरूफ़ियत हमें बताते नहीं हैं। लेकिन आप सब्ज़ी बना रही हों, या कपड़े तह कर रही हों, या आप कम्प्यूटर के सामने स्क्रीन पर नज़रें जमाई बैठी हों, तो क्या बच्चा कुछ बोल पाएगा? उसे आपकी तवज्जोह चाहिए। आपसे नज़र का राबिता (Eye contact) चाहिए। हर बच्चा अपने माँ-बाप से भरपूर वक़्त और तवज्जोह चाहता है। बटी हुई तवज्जोह वह क़बूल नहीं करता है।

नफ़सियात के माहिर लोग मनोविज्ञानी (Psychologist) यह मश्वरा देते हैं कि बच्चे की बात पूरी तवज्जोह से सुनी जानी चाहिए। उसपर ज़ाहिर कीजिए कि आप सुन रही हैं और उसी की तरफ़ ध्यान दे रही हैं। जब वह देखेगा कि आपकी भरपूर तवज्जोह उसे हासिल है तो वह आपपर भरोसा करेगा और अपनी ज़िन्दगी की कोई बात कहने से नहीं हिचकिचाएगा।

इस दौरान माँ-बाप अपने बच्चों का गहराई से मुशाहदा (अवलोकन) कर सकते हैं। भरपूर तवज्जोह से उन्हें सुनिए। उनके सामने जो मुश्किलें हैं उनको समझने की कोशिश कीजिए। आपका बच्चा जिसकी उम्र सिर्फ़ सात साल है, उसकी और आपकी सोच में फ़र्क़ फ़ितरी है। कुछ बातें जो आपके नज़दीक ग़ैर-अहम हैं उसके लिए अहम हो सकती हैं। ऐसी सूरत में उसपर ज़ाहिर न होने दें कि उसकी बात को हम अहम नहीं समझ रहे हैं। उसकी बातों को अहमियत दें। कुछ माँ-बाप ऐसा भी करते हैं कि बच्चा अपनी बात की शुरुआत ही करता है और उन्हें कहीं कुछ ग़लत लगता है तो टोक देते हैं, आगे क्या हुआ वह बिलकुल नहीं बताएगा। ऐसा हरगिज़ न करें। बहुत तवज्जोह और सब्र से उसकी पूरी बात सुनें, फिर उसे मश्वरा दें।

एक बहुत ही अहम बात यह है कि अपने बच्चे को भरपूर तवज्जोह से सुनें। वह आपको बताएगा कि उसे कैसे परवान चढ़ाना है। अगर आप

चाहते हैं कि बच्चा आपकी बात सुने तो आपको पहले उसकी बात सुननी होगी। बच्चों को कभी लेक्चर न दें। उन्हें अच्छे और बुरे दोनों पहलुओं से आगाह कर दें और फ़ैसला उन्हें करने दें। अपनी तवज्जोह और मुहब्बत से उनके रवैयों को सही करें।

माँ-बाप के झगड़े

"जब कभी मम्मी और पापा आपस में लड़ते हैं तो मैं सहम जाती हूँ। रोना चाहती हूँ लेकिन रो नहीं पाती हूँ।"

एक बहुत मशहूर बात है, "अगर आप किसी के बारे में अच्छी राय क़ायम नहीं कर सकते तो कुछ भी कहने से बचिए।" माँ-बाप का अपने बच्चों के सामने लड़ना-झगड़ना बच्चों के लिए बहुत ही नुक़सानदेह होता है। यह उनके लिए ज़हर है। उनकी शख़्सियत को तोड़-मरोड़ देता है। एक साइकाइट्रिस्ट (मनोचिकित्सक) के मुताबिक़ बच्चों के सामने लड़ाई 'एक ख़ामोश बीमारी' है।

कुछ माँ-बाप बच्चों का सहारा लेकर भी लड़ते हैं और यह चीज़ बच्चों के एहसासों को चोट पहुँचाती है। वे उदासी से सोचते हैं कि इस झगड़े की अस्ल जड़ वे हैं और यह चीज़ उनकी शख़्सियत को कुचल देनेवाली होती है।

मामूली लड़ाई-झगड़े तो हर घर में होते ही रहते हैं, लेकिन रोज़-रोज़ के लड़ाई-झगड़े से बच्चों पर ग़लत असर पैदा होने लगते हैं। इसलिए माँ-बाप को चाहिए कि बच्चों के सामने बिलकुल भी न लड़ें, ख़ामोशी इख़्तियार करें। बच्चों का ख़मीर ही मुहब्बत से बना होता है। वे चाहते हैं कि माँ-बाप उनसे मुहब्बत करें और आपस में भी करें। कोशिश यह करनी चाहिए कि बच्चों के सामने न लड़ें या ऐसा हो भी जाए तो उनके सामने ही उस झगड़े को ख़त्म करना ज़रूरी है।

मुहब्बत का इज़हार भी करें

"क्या ही अच्छा हो मम्मी-पापा हमेशा मुझसे कहें कि हम तुमसे बहुत मुहब्बत करते हैं!"

सभी माँ-बाप अपने बच्चों से मुहब्बत करते हैं। लेकिन कुछ बच्चे जान ही नहीं पाते कि उनके माँ और बाप उनसे कितनी मुहब्बत करते हैं! अगर आप बच्चे से मुहब्बत करते हैं तो उसे महसूस भी होने दें।

एक और नफ़सियात के माहिर का ख़याल है कि आप अपने बच्चे से जितनी मुहब्बत करते हैं उसका इज़हार भी करें और हर रोज़ एक मर्तबा उसके इज़हार का मौक़ा निकालें। अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) ने हमें हुक्म दिया है कि जिससे भी हमको मुहब्बत हो उसका इज़हार करें—

"अगर तुम अपने भाई से मुहब्बत करते हो तो तुम्हें चाहिए कि उसको यह बता दो कि तुम्हें उससे मुहब्बत है।"

(हदीस : अबू-दाऊद)

बच्चे तो इस इज़हार के ज़्यादा ज़रूरतमन्द हैं। एक नवजात बच्चा अपनी नई-नई दुनिया को लम्स (स्पर्श), नज़र, आवाज़ और ख़ुशबू से ही समझ पाता है। फिर धीरे-धीरे वह अपने माँ-बाप के स्पर्श से ही उनसे अपना रिश्ता समझता है। इस बच्चे के लिए आपके चेहरे के जज़बात और आपकी आवाज़ बहुत अहम बन जाती है। अगर इस बच्चे के काम करते हुए उसकी माँ और दूसरे रिश्तेदार हमेशा परेशान रहें, ग़ुस्सा और चिड़चिड़ेपन का मुज़ाहरा करें, या उसके साथ फूहड़पन से पेश आएँ तो बच्चा जान लेगा कि लोगों के साथ रहना कोई ख़ुशगवार तजरिबा नहीं है। आपसी एतिमाद का जज़बा परवान नहीं चढ़ेगा और दूसरे लोगों से ताल्लुक़ क़ायम करते हुए उस बच्चे को हमेशा दुश्वारी पेश आएगी। चुनाँचे मुहब्बत और ख़ुलूस के इज़हार की बड़ी अहमियत है। नन्हे-मुन्ने बच्चों को प्यार करना, गले से लगाना और उनसे कहना कि मैं आपपर फ़ख़्र करता हूँ/करती हूँ, उनकी शख़्सियत को बाएतिमाद और पुरउम्मीद बनाने और फ़िक्र का सही तरीक़ा पैदा करने में अहम रोल अदा करता है। बार-बार तारीफ़ कीजिए, लेकिन ईमानदारी के साथ और बग़ैर किसी बनावट के। बच्चे जान जाते हैं कि आपकी बात आपके दिल की बात है या सिर्फ़ बनावटी है।

हमें अपने ख़ाबों को पूरा करने का मौक़ा दीजिए

"जब मैं कहूँ कि मैं बस कंडक्टर बनना चाहता हूँ तो हँसिए मत।"

हमें अपने बच्चों की पसन्द और उनके ख़ाबों के लिए बहुत हस्सास होना चाहिए। बच्चे अपनी ज़िन्दगी की सल्तनत में अपनी हुक्मरानी चाहते हैं। वे चाहते हैं कि उन्हें भी फ़ैसला करने का मौक़ा मिले। अगर कुछ एहतियात से उन्हें यह मौक़ा दिया जाए तो उन्हें यक़ीन और हिफ़ाज़त का एहसास होगा। और वे समझेंगे कि उनके माँ-बाप उनकी सही फ़िक्र करते हैं। नौउम्र बच्चों के माँ-बाप को अपने बच्चों की सम्त (दिशा) सही रखने की कोशिश करनी चाहिए, लेकिन यह कोशिश इस तरह होनी चाहिए कि बच्चे को हर फ़ैसला अपना फ़ैसला महसूस हो। उसे ज़ोर-ज़बरदस्ती का एहसास न हो। माँ-बाप एक हद में रहते हुए उनकी देखभाल करें, वरना बच्चे उन्हें अहमियत और इज़्ज़त देना छोड़ देंगे। वह बात जिसे हम बच्चे के लिए बेहतर समझते हैं, उसके बेहतर न होने का इमकान भी मौजूद है। इस इमकान को नज़रन्दाज़ नहीं करना चाहिए। इसलिए बच्चे को फ़ैसले की आज़ादी दीजिए और यह भी बताइए कि हर आज़ादी के साथ ज़िम्मेदारियाँ भी लगी होती हैं।

एक बच्चे की ज़बान में उसकी अहम माँगों का खुलासा हम इस तरह कर सकते हैं–

(i) मुझे अपने बेहतर तर्ज़े-अमल और अपनी मिसाल से सिखाइए कि मैं ख़ुद से मुहब्बत कैसे कर सकता हूँ? और तवज्जोह और एतिमाद का मतलब क्या है?

(ii) मेरी मौजूदगी को महसूस कीजिए। मेरे वुजूद से ख़ुशी और सुकून हासिल कीजिए ताकि मैं इस एहसास और एतिमाद के साथ बड़ा होऊँ कि मैं भी अहम हूँ और मैं दूसरों के अन्दर भी ख़ुदी (अभिमान) के इस एहसास को जगा सकूँ।

(iii) कुशादा और मुहब्बत से भरे दिल रखिए। पूरी तवज्जोह से मुझे

सुनिए ताकि मैं जानूँ कि मुझे देखा और सुना जा रहा है। और ख़ुद भी मैं बाद में एक अच्छा सुननेवाला बन सकूँ।

(iv) मेरी अच्छी बातों की बार-बार तारीफ़ करते रहिए। मुझे बताते रहिए कि मेरी कौन-सी बातें आपको पसन्द आ रही हैं। मुझे मालूम होगा कि मैं भी किसी लायक़ हूँ और मुझे भी दूसरों की अच्छी बातों की तारीफ़ करने का सलीक़ा आएगा।

(v) हँसिए और मुझको भी हँसाइए। ज़िन्दा-दिली का मुज़ाहरा कीजिए ताकि मैं अपनी ज़िन्दगी को मज़ेदार बना सकूँ और दूसरों की ज़िन्दगियों में भी ख़ुशियों का ज़रिआ बन सकूँ।

(vi) मुझमें नज़्म व ज़ब्त (Discipline) पैदा कीजिए और मेरी ग़लतियों को ख़ुलूस और प्यार के साथ सुधारिए, ताकि मैं एक अच्छी ज़िन्दगी ख़ुद्दारी और एतिमाद के साथ गुज़ार सकूँ।

(vii) मुझे ग़लतियाँ करने और ख़ुद अपनी राय क़ायम करने का मौक़ा दीजिए, ताकि मैं आज़ादाना फ़ैसले करने और उन फ़ैसलों की ज़िम्मेदारी क़बूल करने के लायक़ बन सकूँ।

(viii) अपनी ज़िन्दगी को भरपूर तरीक़े से गुज़ारिए। हौसला बुलन्द रखिए और जोश व वलवले के साथ अपनी उमंगों और ख़ाबों को पूरा कीजिए ताकि मैं भी आपके वलवलों, जोश और तवानाई का कुछ हिस्सा हासिल करूँ और भरपूर ज़िन्दगी गुज़ारने का हौसला पाऊँ।

(ix) ईमानदार बने रहिए, ज़िन्दगी की आला क़दरों को पूरे कमाल के साथ अपनी ज़िन्दगी में बरतिए। मैं आपके तजरिबे से सीखूँगा और उसूलवाली ज़िन्दगी गुज़ारूँगा।

(x) मुझे दूसरों की ख़िदमत के लायक़ बनाइए और इनसानों में मौजूद फ़र्क़ का एहतिराम करना सिखाइए। मैं खुले ज़ेहन और बड़े दिल की क़दरों के साथ इनसानी ज़िन्दगी की रंगा-रंगी को क़बूल कर सकूँगा।

(xi) बेहतर और अच्छी बातों और ज़िन्दगी के अच्छे क़िस्सों पर तवज्जोह ज़्यादा कीजिए। मुश्किल वक़्तों में भी अल्लाह की रहमत से नाउम्मीद मत होइए, ताकि हर नए दिन को मैं मौक़ों की एक नई दुनिया के तौर पर देख सकूँ और बेहतर तर्ज़े-फ़िक्र को परवान चढ़ा सकूँ।

(xii) मेरी मासूम ज़िन्दगी के सारे उतार-चढ़ाव के दौरान, मुझसे बिना किसी शर्त के मुहब्बत कीजिए। मैं उस मुहब्बत को सारी इनसानियत पर लुटाऊँगा।

बच्चा खाना क्यों नहीं खाता?

अकसर माएँ शिकायत करती हैं कि बच्चा खाता नहीं है, हालाँकि उसने अपनी उम्र के दो साल पूरे कर लिए हैं। बच्चा लगातार ही खाना खाने से बचे तो उसकी ज़्यादातर वजह सिर्फ़ यह हो सकती है कि माँ उसे खिलाने के लिए सही तरीक़े अपना नहीं रही है, या उनके अन्दर बच्चे की नफ़सियात समझने में कमी है, या यह कि अपनी मरज़ी के मुताबिक़ अपनी पसन्द का खाना बच्चे को खिलाने पर ज़ोर है। इस मामले में जहाँ माँ की लापरवाही मुनासिब नहीं, वहीं माँ की ज़रूरत से ज़्यादा फ़िक्रमन्दी भी ठीक नहीं। माँ का रवैया सन्तुलित हो तो बच्चे के लिए खाना पसन्दीदा काम हो सकता है। कभी-कभी बच्चा खाना न खा रहा हो तो मुमकिन है उसकी तबियत ठीक न हो, उसे भूख न लगी हो, ऐसे में बच्चे पर ज़बरदस्ती उसके लिए ज़्यादा परेशानी की वजह बन सकती है।

बच्चे के खाना न खाने की वजहें

बच्चे के खाना न खाने की अलग-अलग वजहें हो सकती हैं। दूसरी चीज़ों की भूख मुमकिन है सिर्फ़ इस वजह से महसूस न हो रही हो कि बच्चा दूध काफ़ी ज़्यादा पी लेता हो। दूध की मिक़दार कम करने और बग़ैर चीनीवाला दूध देने से दूसरी चीज़ों की ख़ाहिश पैदा होगी।

खाने से पहले टाफ़ियाँ, बिस्किट और चुविंगम वग़ैरा भी भूख ख़राब करने में अहम रोल अदा करते हैं। ये चीज़ें न सिर्फ़ दाँतों को ख़राब करती हैं, बल्कि बच्चे को ख़ुराक की ज़रूरी चीज़ों से भी महरूम रखती हैं।

आमतौर पर बच्चों को मीठी चीज़ें ही पसन्द होती हैं। वे फीके खाने, सब्ज़ियाँ वग़ैरा खाने से इनकार करते हैं। डेढ़-दो साल का बच्चा पहली-पहली बार बड़ों की तरह सब्ज़ियाँ वग़ैरा खाएगा तो उसे मुश्किल का सामना ज़रूर

होगा। इन तमाम चीज़ों का आदी बनने के लिए उसे कुछ वक़्त चाहिए होगा। वह एक-दो बार इनकार करेगा लेकिन आप सब्र से उसे पेश करती रहें तो शायद दसवीं बार उसे क़बूल कर ले।

खाना न खाने की शिकायत का जाएज़ा बच्चे के वज़्न या जिस्मानी हालत से लिया जा सकता है। अगर उसका वज़्न उम्र के मुताबिक़ नहीं बढ़ रहा है या वह दूसरे बच्चों से पीछे रहता है तो फिर सच में फ़िक्र की बात है।

लेकिन वज़्न ठीक बढ़ रहा हो और उसकी आमतौर पर सेहत भी ठीक हो तो फिर परेशान होने की ज़रूरत नहीं। एक साल की उम्र के बच्चों के बारे में डॉक्टरों की यह राए है कि बढ़ने के इस दौर में बच्चों का खाना न खाना नार्मल बात है। इस उम्र में बच्चे को जो खाना भी पेश किया जाए वह उसे नापसन्द करता है, या अगर खाता है तो सिर्फ़ एक ही क़िस्म का खाना हर दिन खाना चाहता है।

यहाँ यह बताना ज़रूरी है कि अपनी पैदाइश के एक साल बाद बच्चे का बढ़ना कुछ कम हो जाता है और वजह यह है कि हर एक किलो वज़्न पर कैलोरीज़ की ज़रूरत भी कम हो जाती है। इसी लिए उम्र के इस दौर में यानी एक साल बाद बच्चे का खाना कम हो जाता है। लेकिन हर माँ इस बदलाव को नहीं जानती इसलिए चाहती है कि बच्चे के खाने की मात्रा भी उम्र के साथ बढ़े। एक बच्चा अपनी पहली सालगिरह पर अपने पैदाइशी वज़्न से तीन गुना बढ़ता है (यानी तीन से नौ किलो) और इसी बच्चे को अपने एक साल के वज़्न को डबल करने में और पाँच साल चाहिए होते हैं। जिन बच्चों का वज़्न अनुपात से कम हो डॉक्टर उन्हें विटामिंस, प्रोटीन और मिनरल्ज़ से भरपूर दवाइयाँ या सप्लिमेंट्स (Supplements) देते हैं।

खानों के एक माहिर (Dietician) का कहना है कि जब माँ-बाप उनके पास यह शिकायत लेकर आते हैं कि उनका बच्चा ठीक से खाना नहीं खाता तो वे बच्चे की सेहत देखते हैं। अगर वह ठीक है तो उनके मुताबिक़ यह कोई घबरानेवाली बात नहीं है। यह उम्र का एक नार्मल दौर है, भूख लगने पर वह ख़ुद खाएगा।

कुछ करने के काम

(1) अपने हाथ से खाने का मौक़ा दें

रिसर्च यह कहती है कि लगभग हर बच्चा फीका खाना यानी जिसमें मिठास न हो, खाने से इनकार करता है, लेकिन हर वक़्त मीठा खाना नहीं दिया जा सकता। इसका हल यह है कि उसे खाना अपने हाथों से खाने का मौक़ा दिया जाए, वह ज़रूर खाएगा, क्योंकि यह वह उम्र होती है जिसमें बच्चा हर चीज़ में 'माहिर' होना चाहता है और हर नई चीज़ सीखना चाहता है। माएँ जब यह देखती हैं कि वह कम खाता है, बिखेरता ज़्यादा है तो वे उसे ख़ुद खाने नहीं देतीं। यहाँ सब्र से काम लेना बहुत ज़रूरी है। आप उसे अपने हाथों से खाने दें, उसका हौसला बढ़ाएँ और यही वह बेहतरीन वक़्त होता है जब आप उसे एक और नई डिश खिला सकती हैं।

बच्चा कहता है कि 'मैं नहीं खाऊँगा'। खाने (पोषाहार) के माहिरों (Dietician) का इस सिलसिले में मानना यह है कि ऐसा कहकर बच्चा अपना कंट्रोल आज़माता है। माँ की कोशिश चूँकि यह होती है कि ज़बरदस्ती खिलाए और बच्चा पूरे ज़ोर से इनकार करता है। ऐसी सूरतेहाल में कोशिश यह होनी चाहिए कि खाने के वक़्तों को जंग के मैदान में बदला न जाए, बल्कि दोस्ताना माहौल पैदा करते हुए खाना पेश किया जाए। जब आप दस्तरख़ान सजा रही हों तो उससे बातें करें। पकाई हुई डिशों के बारे में उसे बताएँ। आप ख़ुद उसका असर देखेंगी। ज़ोर-ज़बरदस्ती से खिलाई जानेवाली चीज़ें बच्चे के अन्दर लगातार नापसन्दीदगी पैदा कर सकती हैं।

आप खाना बनाने के दौरान या खाने के दौरान बच्चे की राए पूछिए कि क्या वह आमलेट खाएगा या उबला हुआ अण्डा, या वह आम खाएगा या सेब, चपाती खाएगा या चावल। उसे अपनी अहमियत का एहसास होगा, वह राए देगा और उसपर कुछ अमल भी करेगा।

अपने बच्चे के साथ कुछ समझौते कर लीजिए। मिसाल के तौर पर अगर उसकी प्लेट में आलू के पाँच कतले हों तो उससे पूछिए कि कितने खाएगा। अगर वह कहे कि तीन तो उसकी बात ख़ुशदिली से मान लीजिए। आप ज़रूर देखेंगे कि वह धीरे-धीरे न खाने की ज़िद छोड़ रहा है।

(2) दस्तरख़ान पर साथ बिठाएँ

जब घर के सब लोग दस्तरख़ान पर बैठें तो बच्चे को भी साथ बिठाया जाए। खाना खाने का वक़्त पूरी फ़ैमिली के लिए एक बहुत अच्छा वक़्त होता है। उस वक़्त बच्चों का भी हौसला बढ़ानां चाहिए कि वे भी खाने की मेज़ पर सबके साथ बैठें। यह मुनासिब नहीं है कि बच्चे को पहले या बाद में खिलाकर फिर किसी के हवाले कर दिया जाए और उसे दस्तरख़ान से दूर रखा जाए, ताकि बाक़ी लोग आराम से खाना खा लें। इस सूरत में माँ और दूसरे लोग आराम से खाना तो खा लेंगे लेकिन बच्चे के ज़ेहन पर उसके बाद बड़े ग़लत असर पड़ सकते है। मुमकिन है उसे बाद में भी दस्तरख़ान पर बैठना अच्छा न लगे। रद्दे-अमल (प्रतिक्रिया) के तौर पर वह अपनी मनमानी करना शुरू कर दे, अलग-अलग खाने के बारे में अलग-अलग राए रखे, किसी को पसन्द और किसी को नापसन्द करने लगे। खाने-पीने और दूसरे रहन-सहन के आदाब सिखाने के लिए भी दस्तरख़ान एक अच्छी और मुनासिब जगह है।

(3) बच्चे की पसन्द का लिहाज़ करें

बच्चे की अपनी एक पसन्द होती है जिसकी बुनियाद पर वह एक ही चीज़ रोज़ाना खाना पसन्द करता है। मिसाल के तौर पर कोई बच्चा इडली खाना पसन्द करता है, और वह रोज़ाना यही चीज़ खाना पसन्द करेगा। बहुत सारे बच्चे चटपटी चीज़ें या गोश्त या अण्डे रोज़ाना खाना पसन्द करते हैं, जिसकी वजह से माँ-बाप में ग़लतफ़हमी पाई जाती है कि यह गर्म मिज़ाज रखनेवाली ग़िज़ा (आहार) है और यह बच्चे के लिए नुक़सानदेह है। या फिर कोई बच्चा लगभग हर रोज़ फलों में नारंगी या केला खाना पसन्द करेगा। फिर यह समझा जाता है कि इससे बच्चे को सर्दी हो जाएगी। माहिर लोग इस मामले में यह कहते हैं कि बच्चा जिन चीज़ों को पसन्द करता है उसे वे चीज़ें देनी चाहिएँ। इसकी वजह यह भी है कि उसने अभी-अभी खाना सीखा है और वह ख़ुशी-ख़ुशी शौक़ से खाएगा तो सेहत पर उसका अच्छा असर पड़ेगा। दूसरे यह कि बच्चा भी एक ही चीज़ रोज़ाना नहीं खा पाएगा,

वह ख़ुद ही अपनी पसन्द बदल देगा, क्योंकि उसके मज़ा (स्वाद) पहचाननेवाले गुदूद (Tastebuds) भी बदलाव चाहेंगे। इसी तरह कोई बच्चा लगातार ब्रेड-जैम ख़ाते-खाते ख़ुद ही उकता जाएगा। हाँ, अगर जो चीज़ वह रोज़ाना खाता है वह बहुत थोड़ी मात्रा में खाता है और वज़्न भी नहीं बढ़ता है और सेहत भी ठीक न हो तो डॉक्टर से मिलना चाहिए।

यह बात ग़ौर करने की है कि शायद हर माँ यह नहीं जानती कि अपने बच्चे को खाना खिलाते वक़्त उसके अपने जज़बात का भी बड़ा असर पड़ता है। मिसाल के तौर पर बच्चा और ज़्यादा खाने से मना क़रता है तो माँ यह कहकर और ज़्यादा चावल खिलाती है कि "तुम अपनी अम्मी से बहुत मुहब्बत करते हो इसलिए ये चावल ज़रूर खाओगे।" इस तरह कहकर माँ एक ग़लत सिग्नल पेश करती है। बच्चे की मरज़ी बिलकुल और ज़्यादा खाने की नहीं होती, मगर अपनी अम्मी से मुहब्बत में उसे खाना ज़रूरी हो जाता है और इस तरह उसे खाने से एक क़िस्म से नफ़रत हो जाती है। बच्चे को खाना खिलाना भी एक फ़न है। इस फ़न में अहम बात है माँ का बरदाश्त करना और अच्छे अख़लाक़ पेश करना है। खाने को बच्चे के लिए दिलचस्प और ख़ुशगवार काम बनाना बहुत ज़रूरी है। माओं की मामूली-सी बेसब्री या ग़ुस्सा बच्चे के ज़ेहन पर कभी-कभी बड़े नाख़ुशगवार असरात पैदा करते हैं। ये असरात सारी ज़िन्दगी अपना असर दिखाते हैं।

आपके बच्चे की अपनी पसन्द और नापसन्द होती है। अगर आप यह चाहेंगी कि वह आपकी पसन्द के मुताबिक़ खाए तो यह नामुमकिन है। बच्चे अकसर खानों में इस्तेमाल होनेवाली ख़ास चीज़ों की ख़ुशबू नापसन्द करते हैं, मिसाल के तौर पर पोदीना और हरा धनिया वग़ैरा। कोई भी नई डिश उसे थोड़ी मात्रा में दें, नई चीज़ खाना उसके लिए बहुत मुश्किल होता है। एक-दो दिन के गैप से फिर वही डिश उसे पेश करती रहें, वह आदी हो जाएगा। फिर ज़रूर वह पौष्टिक आहार से भरी डिशें भी खाएगा। आप अलग-अलग क़िस्म की सब्ज़ियाँ या कोंपलवाली दालें, गोश्त वग़ैरा खिलाना चाहती हैं और वह खाने से इनकार करता है तो आप यह करें कि ये चीज़ें उसके पसन्द के बरतन में पेश करें। खाने के बरतनों के मामले में भी बच्चे

काफ़ी हस्सास होते हैं। आजकल बाज़ार में Toy Dishes, Baby Spoons, Baby Forks मिलते हैं, उनमें खाना बच्चों को अच्छा लगता है। सबसे उम्दा तरीक़ा यह है कि पकवान के दौरान बच्चे को अपने साथ रखें और उसे यह समझाएँ कि यह डिश उसने ख़ुद बनाई है, वह ज़रूर खाएगा।

दो साल की उम्र के बच्चे (Toddlers) फिंगर फ़ूड (Finger Food) पसन्द करते हैं। उबालकर तली हुई सब्ज़ियाँ या फल वग़ैरा लम्बी-लम्बी काटकर दें। बच्चों को मिठाई, केला, चिप्स, जेली या और दूसरे जंक खानों के बजाए दूध, सूप और ताज़ा फलों से बना जूस देना चाहिए। ये चीज़ें विटामिन से भरपूर होती हैं लेकिन जूस और दूध में चीनी नहीं मिलानी चाहिए क्योंकि फलों में और दूध में क़ुदरती चीनी पाई जाती है। बनावटी पेय और जंक फ़ूड पूरी तरह पौष्टिक आहार से ख़ाली होते हैं लेकिन पूरी तरह उनपर पाबन्दी लगाने के बजाए किसी ख़ास मौक़े पर कुछ दिया जा सकता है, लेकिन कम मात्रा में दिया जाए।

(4) कई-कई वक़्त खिलाएँ

बड़ों की तरह बच्चे कभी भी ज़ाबिते के मुताबिक़ या लगातार एक मात्रा में नहीं खा सकते। ख़ास तौर पर एक साल से तीन साल की उम्र के बच्चे तो बिलकुल भी नहीं। लेकिन आप ग़ौर करें तो उनमें केलोरीज़ का अनुपात रोज़ाना लगभग बराबर ही होगा। बच्चे ख़ुद भी भूखा रहना पसन्द नहीं करते। उसका इज़हार वे चिड़चिड़ेपन से करते हैं, या जिन बच्चों को दूध पीने की आदत होती है वे सिर्फ़ दूध से अपना पेट भरना चाहते हैं, बढ़ती उम्र के साथ सिर्फ़ दूध नाकाफ़ी हो जाता है। दो साल की उम्र के बच्चे बड़ों के मुक़ाबले में 1/4 खाना खाते हैं, इसलिए उन्हें दिन में 5 से 6 वक़्त खाना खिलाना चाहिए। माहिर लोग यह मश्वरा देते हैं कि बच्चों के खाने पर परेशान होने के बजाए एक हफ़्तावारी टाइम टेबल बनाना चाहिए कि उसने किस दिन कितना खाया। अगर बच्चा तन्दुरुस्त और चुस्त है तो आप यह देखकर हैरान होंगी कि उसका खाना सामान्य है। जब दस्तरख़ान बिछा हुआ हो और ख़ानदान के लोग खाना खा रहे हों तो बच्चे सिर्फ़ प्लेट, चम्मच और

खाने से खेलते हैं इसलिए यह ज़रूरी हो जाता है कि हर दो खानों के दरमियान उन्हें कुछ स्नेक्स भी दिए जाएँ, इस शर्त के साथ कि वे स्नेक्स आहार से पुर हों और घर में बने हों।

बच्चे के खाने की क़िस्में

बच्चे का खाना नीचे दिए गए तरीक़ों या फ़ूड ग्रुप्स में होना चाहिए–

(1) निशास्तादार खाने : गेहूँ, चावल, दालें

(2) प्रोटीनवाले खाने : अण्डा, गोश्त, मछली, मुर्ग़ी

(3) नमक और विटामिनवाले खाने : सब्ज़ियाँ, फल, गहरे हरे रंग की पत्तोंवाली सब्ज़ियाँ।

(4) ताक़त देनेवाले खाने : दूध, दही, पनीर, मक्खन, घी वग़ैरा।

इस तरह दूध पर पूरी तरह निर्भर नहीं हुआ जा सकता। हमें यह कोशिश करनी चाहिए कि बच्चा अपने खाने से प्रोटीन, चर्बी, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन, नमक वग़ैरा मुनासिब मात्रा में हासिल करे।

अगर बच्चा सब्ज़ी, तरकारी के बजाए सिर्फ़ फल पसन्द करता है तो कोई बात नहीं। फल और सब्ज़ियाँ आहार में बराबर हैं, लेकिन जिस तरह सब्ज़ियाँ फ़ायदेमन्द हैं, जूस नहीं है। क्योंकि जूस में रेशा नहीं होता और शकर की मात्रा ज़्यादा होती है।

बच्चे अगर सब्ज़ियाँ खाना पसन्द नहीं करते तो एक तरीक़ा यह है कि सब्ज़ियों, पालक, मेथी वग़ैरा को आटे के साथ गूँध लें और रोटी बनाकर दें, या गोल शक्ल की ही रोटी बनाने के बजाए रोटी को अलग-अलग शक्ल दे सकते हैं। बच्चे अलग-अलग शक्ल की रोटी पसन्द करते हैं। टमाटर सॉस और फ़्रूट जैम उन्हें बहुत पसन्द होता है। वह उसपर फैलाकर दें या यह काम खुद उनसे कराएँ। आप देखेंगी कि आपकी मेहनत रंग लाई है।

सिर्फ़ खिलाना नहीं खाना सिखाना भी मक़सद हो

आप सिर्फ़ यह मत देखिए कि तमाम वक़्त आप बच्चे को जो खिलाती हैं वह सेहत के लिहाज़ से कितना बेहतर है, बल्कि इस उम्र के बच्चे आज़ादी

के साथ खाना सीखते हैं। इस काम में आप उनकी बहुत मुहब्बत से मदद कीजिए। खाने के वक़्त को सिर्फ़ इस मक़सद तक महदूद मत रखिए कि पौष्टिक आहार से भरपूर ख़ुराक खिलाई जाए, बल्कि बच्चे का खाने की तरफ़ रुझान बढ़ाइए और शुरू ही से खाने के अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) के तरीक़े और इस्लामी आदाब सिखाइए और बेहतरीन आदतें उसमें पैदा कीजिए।

नौउम्र लड़कियों के मसले

लड़कियों की परवरिश को हर ज़माने में ज़्यादा चैलेंजिंग काम समझा गया है। जहाँ अच्छी लड़कियाँ माँ-बाप की आँखों की ठण्डक और उनकी नेकनामी का सबब होती हैं, वहीं लड़कियों की ग़लतियाँ माँ-बाप के लिए ज़्यादा बड़े सदमे और बदनामी का सबब बनती हैं। ख़ास तौर से बालिग़ होने और नौउम्री के मरहले में लड़कियों के अन्दर हया और शर्म के पाकीज़ा जज़बात परवान चढ़ाना, फ़ितनों से उनकी हिफ़ाज़त करना, उनके लिए ज़िन्दगी का अच्छा साथी (शौहर) ढूँढ़ना, ये सब मुश्किल मरहले होते हैं। मौजूदा ज़माने में इन मरहलों की मुश्किल और बढ़ गई है। ख़ास तौर पर बड़े शहरों में और मीडिया, इंटरनेट और सोशल मीडिया के फ़ितनों के इस दौर में बच्चों की तरबियत एक मुश्किल और बहुत सख़्त काम है।

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने लड़कियों की अच्छी तालीम व तरबियत पर ख़ास ख़ुशख़बरियाँ दी हैं। उन्होंने फ़रमाया, "जिस शख़्स की दो या तीन बेटियाँ हों और वह उनकी अच्छे से परवरिश करे तो मैं (यानी अल्लाह के पैग़म्बर मुहम्मद सल्ल॰) और वह शख़्स जन्नत में इस तरह दाख़िल होंगे जिस तरह ये दो उँगलियाँ (शहादत और दरमियानी उँगलियाँ) मिली हुई हैं," (हदीस : तिरमिज़ी)। यह एक बड़ी ज़िम्मेदारी का काम है और हमें इसके सिलसिले में अल्लाह के सामने जवाब देना है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने यह बात भी कही है कि "अल्लाह हर ज़िम्मेदार से उसकी ज़िम्मेदारी में दी गई चीज़ों के बारे में सवाल करेगा कि उसने उनकी हिफ़ाज़त की या बरबाद किया, यहाँ तक कि आदमी से उसके घरवालों के बारे में भी सवाल करेगा। (हदीस : नसई)

इससे अगले लेख में नौउम्र लड़कों के मसले और उनके हल पर बातें बताई जाएँगी। उनमें बहुत-सी बातें लड़कियों के मामले में भी सही हैं

(लड़कियों की माएँ, उस लेख को भी पढ़ लें)। लड़कों की तरह लड़कियों की ज़िन्दगी का यह मरहला भी बालिग़ होने की ज़िन्दगी और उसकी ज़िम्मेदारियों के लिए तैयारी का मरहला होता है। एक मासूम बच्ची अब एक जवान औरत बन रही होती है। अल्लाह उसको उन ज़िम्मेदारियों के लिए तैयार कर रहा होता है जो उसे आगे पूरा करना है। आगे उसे एक बीवी बनना है, अपना घर सम्भालना है। उसके बच्चे होने हैं और उसे उनकी तरबियत करना है। अपनी तालीम व क़ाबिलियत के लिहाज़ से दूसरे समाजी व तमद्दुनी ज़िम्मदारियाँ अंजाम देनी हैं। समाज का सामना करना है। ये सब फ़र्ज़ व ज़िम्मेदारियाँ जो एक औरत के साथ जुड़ी होती हैं, बहुत-सी जिस्मानी और नफ़सियाती बदलाव की माँग करती हैं। टीन एज (Teen Age) के इस मरहले में लड़की इन बदलाव से गुज़रती है।

चुनाँचे लड़कों की तरह लड़कियाँ भी इस मरहले में ज़्यादा आज़ादी चाहती हैं। हमजोलियों से उनका मेलजोल और उनपर इनहिसार (निर्भरता) बढ़ जाता है। एडवेंचर और खोज-बीन में लगना लड़कियों में भी पाया जाता है। आदर्शवाद (Idealism) और ख़ुद को बेहतर दिखाने की कोशिश, ताक़त और जोश का बहुत ज़्यादा होना जैसी ख़ासियतें लड़कियों में भी होती हैं। अलबत्ता कुछ मामलों में लड़कियाँ अलग भी होती हैं।

इस उम्र में लड़कियों में ज़्यादा बड़े जिस्मानी बदलाव आते हैं। कुछ हयातयाती (जैविक) बदलाव (सबसे अहम, माहवारी की शुरुआत) उनके लिए बहुत चैलेंजिंग होता है। उन जिस्मानी व जैविक बदलाव के मुताबिक़ उनके अन्दर हार्मोनल बदलाव भी आने लगते हैं। ये हार्मोन उनकी नफ़सियात पर भी गहरे असर डालते हैं। 'स्ट्रेस हार्मोन' (Stress Harmon) उनके अन्दर तनाव पैदा करता है। मिज़ाज को हद से ज़्यादा हस्सास बना देता है। अगर उनको नज़रन्दाज़ किया जाए या रद्द किया जाए तो इस उम्र की लड़कियाँ यह बात हरगिज़ बरदाश्त नहीं कर सकतीं। निहायत मामूली बात पर भी उनका रद्दे-अमल निहायत शदीद होता है। नफ़सियात के एक मशहूर माहिर ने नवीं क्लास की एक लड़की के बारे में बताया है कि उसने अपना ऑनलाइन रिज़ल्ट देखा और अपनी उम्मीदों से कुछ कम ग्रेड नज़र

आया, तो इस ज़ोर से और भयानक तकलीफ़ के साथ चीखें मारना शुरू कर दीं मानो वह किसी क़त्ले-आम (नरसंहार) की जगह पहुँचा दी गई हो। इस उम्र की लड़कियों में इस तरह का रद्दे-अमल बहुत आम होता है।

लड़कों के मुक़ाबले में लड़कियाँ ज़्यादा आसानी से ज़्यादती का शिकार हो सकती हैं। उनसे जज़बाती फ़ायदा उठाना आसान होता जाता है। लड़के अपने जज़बात का इज़हार ख़ास तौर पर माँ-बाप के सामने नहीं करते लेकिन लड़कियाँ अपनी माँ के सामने अपने जज़बात का इज़हार करती हैं। इससे उनकी परेशानियों को समझने में मदद मिलती है। नफ़सियात के माहिर यह भी कहते हैं कि इस उम्र में लड़कों के मुक़ाबले में लड़कियाँ ज़्यादा तनाव का शिकार होती हैं। कभी-कभी सख़्त तनाव उनकी सेहत बिगाड़ देता है।

लड़कों के मुक़ाबले में लड़कियों को इस मरहले में अपने बहुत-से तौर-तरीक़े बदलने पड़ते हैं। बालिग़ होने के बाद उनपर हिजाब वाजिब हो जाता है। घर से बाहर निकलने पर और मेल-जोल वग़ैरा के सिलसिले में बहुत-सी नई बन्दिशें लागू हो जाती हैं। हँसने-बोलने, खेलने-कूदने और चलने-फिरने में भी उनको बहुत सावधानियाँ बरतनी पड़ती हैं। कुछ लड़कियों के लिए ये बदलाव भी तनाव पैदा करते हैं।

इन हालात में माँ-बाप की और ख़ास तौर से माँ की यह ज़िम्मेदारी होती है कि वह बहुत ही सावधानी के साथ और इस उम्र की नफ़सियात को समझते हुए अपनी बेटी की मुनासिब रहनुमाई, तरबियत और उसको जज़बाती सहारा देने की कोशिश करे।

(1) जिस्मानी बनावट

इस उम्र में लड़की अपनी जिस्मानी बनावट को बहुत ज़्यादा अहमियत देने लगती है और अपने ज़ाहिरी हुस्न और ख़ूबसूरती को लेकर बहुत हस्सास हो जाती है। बालिग़ होने पर उसके चेहरे पर निखार आ जाता है, आवाज़ सुरीली हो जाती है और निस्वानी ख़ूबसूरती ज़ाहिर हो जाती है। अकसर घरों में भी लड़कियों की शक्ल व सूरत को लेकर बातचीत शुरू हो जाती है। अल्लाह ने उसे अच्छी शक्ल व सूरत से नवाज़ा है, तब वह उसे और

निखारने की फ़िक्र में लगी रहती है, और अगर वह मामूली शक्ल व सूरत की मालिक है तब बहुत एहसासे-कमतरी की शिकार रहती है जिसकी वजह से उसके मिज़ाज में चिड़चिड़ापन आ जाता है। तजरिबे से मालूम होता है कि वज़्न घटाने की दीवानगी वग़ैरा जैसी बीमारियाँ आमतौर पर इसी उम्र में लड़कियों को लगती हैं। बहुत-सी लड़कियाँ अपने जिस्म को ख़ूबसूरत बनाने के लिए भूका रहना शुरू कर देती हैं।

माँ की ज़िम्मेदारी है कि वह नेक सीरत की अहमियत उसके ज़ेहन में बिठाए। उसे बताए कि इनसानी शख़्सियत की अस्ल और हमेशा रहनेवाली ख़ूबसूरती किरदार और रवैये की ख़ूबसूरती है। उसे यह भी बताए कि अख़बारों और मेगज़ीनों में जो मॉडलों की तस्वीरें छपती हैं, उनमें फोटू-शॉपिंग के कमाल भी शामिल होते हैं।

इसके साथ यह भी ज़रूरी है कि उसके अन्दर अपनी सूरत, शक्ल और जिस्म को लेकर भरोसा पैदा हो। माँ की ज़िम्मेदारी है कि अपनी लड़की की शक्ल व सूरत के अच्छे पहलुओं की दिल खोलकर पहचान करे। उसके अन्दर यह भरोसा पैदा करे कि वह एक दिलकश और आकर्षक शख़्सियत की मालिक है। अगर उसके अन्दर कोई कमी है तो उसे बताया जाए कि अल्लाह ने दुनिया में किसी को पूरा और कमियों से पाक नहीं बनाया है। चाँद में भी दाग़ हैं। ख़ूबसूरत-से-ख़ूबसूरत औरतों में भी कुछ-न-कुछ कमज़ोरी ज़रूर होती है। उसके अच्छे पहलुओं को उभारा जाए। बनने-सँवरने में और कपड़ों वग़ैरा के मुनासिब चुनाव में उसकी मदद की जाए।

इस तारीफ़ की ज़रूरत जहाँ उसके अन्दर ख़ुद-एतिमादी पैदा करने के लिए है वहीं उसको ज़्यादती से बचाने के लिए भी है। लड़की इस उम्र में अपने हुस्न व जमाल की तारीफ़ व प्रशंसा की भूकी होती है। माएँ और घर के लोग तारीफ़ न करें और उन्हें तारीफ़ क्लास के किसी लड़के से मिले तो फिर वह लड़का असरन्दाज़ होने लगता है। यह ज़माना जिंसी हार्मोंज़ के सैलाब का ज़माना होता है, ऐसे में अगर ख़ूबसूरती की तारीफ़ की फ़ितरी ख़ाहिश पूरी न हो रही हो तो अजनबी लड़के की पसन्दीदगी व चाहत की एक नज़र लड़कियों को दीवाना बना देती है।

(2) ख़ुद-एतिमादी और इज़्ज़ते-नफ़्स

इस उम्र में लड़कियों की बड़ी ज़रूरत यह होती है कि उनके अन्दर ख़ुद-एतिमादी और इज़्ज़ते-नफ़्स पैदा की जाए। उनको यह यक़ीन हो कि वे अच्छी शख़्सियत की मालिक हैं और अपने माँ-बाप और ख़ानदान के लिए इज़्ज़त और फ़ख़्र की वजह हैं। यह एतिमाद माँ-बाप और भाई-बहनों की तरफ़ से तारीफ़ व वाहवाही, इज़्ज़त बढ़ाने और मुहब्बत से पैदा होता है। उसकी सलाहियतों की क़द्र कीजिए। उसकी शख़्सियत के अच्छे पहलुओं को तलाश कीजिए और उसे ज़ाहिर कीजिए। अल्लाह ने इस दुनिया में हर इनसान को अलग और अनोखा पैदा किया है। अगर आपके पड़ोसी की बच्ची क्लास में सबसे ज़्यादा नम्बर लाती है तो वह आपकी बेटी की तरह ख़ूबसूरत पेंटिंग नहीं कर सकती। अब अगर आप रात-दिन पड़ोसी से उसका मुवाज़ना (तुलना) करती रहीं तो वह इज़्ज़ते-नफ़्स और ख़ुद-एतिमादी से महरूम हो जाएगी। पेंटिंग की जो इतनी बड़ी सलाहियत अल्लाह ने उसको दी है, इससे उसका दिल उचाट हो जाएगा। वह तनाव का शिकार हो जाएगी और कल किसी ने उसकी पेंटिंग की बहुत ज़्यादा तारीफ़ कर दी तो ख़ुदा न करे उसकी मुहब्बत में गिरफ़्तार हो जाएगी। समझदार माएँ अपनी बेटियों के अच्छे पहलुओं को उजागर करती हैं। उन्हें भरपूर इज़्ज़त, एहतिराम और मुहब्बत देती हैं। ऐसी माओं की बेटियाँ ख़ुद-एतिमादी और इज़्ज़ते-नफ़्स से मालामाल होती हैं और उनको शीशे में उतारना अजनबियों के लिए आसान नहीं होता।

लड़कियों की इज़्ज़ते-नफ़्स पर सख़्त चोट उस वक़्त भी पड़ती है जब घरों में बेटों और बेटियों के बीच फ़र्क़ किया जाता है। अच्छे खाने, अच्छे कपड़ों, अच्छी और मँहगी पढ़ाई वग़ैरा पर पहला और ज़्यादा हक़ बेटों का समझा जाता है। इस्लाम ने इस तसव्वुर पर सख़्त चोट लगाई है। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने एक और हदीस में बेटियों की परवरिश पर जन्नत की ख़ुशख़बरी के लिए यह शर्त भी बयान की है कि बेटियों पर बेटे को तरजीह न दी जाए। "जिस शख़्स की बेटी हो और उसने उसकी तौहीन नहीं की, उसे ज़िन्दा दफ़न न किया और लड़कों को उसपर तरजीह न दी, अल्लाह उसे जन्नत में दाख़िल करेगा।" (हदीस : मुसनदे-अहमद)

(3) शर्म व हया और इस्लामी रहन-सहन

इस उम्र में फ़ितरी तौर पर शर्म व हया के एहसासात परवान चढ़ने लगते हैं। यह औरतों की हिफ़ाज़त का फ़ितरी इन्तिज़ाम है, जो कायनात के रब ने किया है। यह बड़ी बदक़िस्मती की बात है कि नई तहज़ीब इस फ़ितरत को मिटाकर फ़ितरी घेराबन्दी को ख़त्म करने की कोशिश में है। माँ-बाप की यह भी ज़िम्मेदारी है कि वे अपनी बच्चियों में फ़ितरी हया को परवान चढ़ाएँ, इज़्ज़त व आबरू और पाकदामनी के सिलसिले में हस्सास बनाएँ। निगाहों की हिफ़ाज़त करना सिखाएँ। जिस बच्ची की अभी-अभी जवानी शुरू हो रही है, उसे अपने ऊपर उठनेवाली हर नज़र की पहचान नहीं होती है। यह तमीज़ करना उसे सिखाएँ।

अल्लाह का यह औरतों पर बहुत बड़ा एहसान है कि उसने इस्लामी शरीअत की सूरत में एक बहुत ताक़तवर हिफ़ाज़ती क़िला हमें दिया है। बालिग़ होते ही लड़की पर तमाम इस्लामी अहकाम लागू हो जाते हैं। उन अहकाम का शुऊर उसके अन्दर पैदा करना और उनपर अमल कराना, यह भी माँ की बहुत अहम ज़िम्मेदारी है। लड़की पर हिजाब फ़र्ज़ हो गया है। सतर के अहकाम फ़र्ज़ हो गए हैं। उसके चचा-ज़ाद, मामू-ज़ाद, ख़ालू, फूफा, पड़ोसी, टीचर्स वग़ैरा अब उसके लिए नामहरम मर्द हैं। उनसे अकेले में मुलाक़ात जाइज़ नहीं। हाथ मिलाना या किसी भी क़िस्म की जिस्मानी छुवन जाइज़ नहीं। बन-सँवरकर और ख़ुशबू लगा के उनके सामने जाना जाइज़ नहीं। बिना ज़रूरत बेतकल्लुफ़ हँसी-मज़ाक़ और मिलना-जुलना जाइज़ नहीं। अगर माएँ शुरुआती उम्र ही से इन इस्लामी अहकाम की पाबन्दी कराना शुरू कर दें तो लड़कियों के ग़लत रास्ते पर जाने का इमकान बहुत कम रह जाता है।

मेरे पास जो केस आते हैं उनकी बुनियाद पर मैं कह सकती हूँ कि क़रीबी रिश्तेदारों के ज़रिए बच्चियों के साथ ज़्यादती अब मुस्लिम सोसाइटी में भी बहुत ज़्यादा बढ़ चुकी है। माँ-बाप यह समझते हैं कि हम निहायत शरीफ़ और दीनदार लोग हैं। हमारे घरों में ऐसा नहीं हो सकता। लेकिन वे

यह महसूस नहीं करते कि अब घरों की रिवायतों की बन्दिश कमज़ोर होती जा रही है। मीडिया के तूफ़ान की लहर से कोई घर बचा हुआ नहीं है और शैतान हर एक के साथ लगा हुआ है।

जो बच्चियाँ मिले-जुले (Joint) ख़ानदानों में रहती हैं, वहाँ माँ-बाप को बहुत सावधानी बरतनी पड़ती है। परदे का हुक्म और उसकी अहमियत को वाज़ेह करें। एक ही घर में साथ रहनेवाले ग़ैर-महरम मर्दों और लड़कों से मिलने और बात करने की हदें व आदाब की तालीम दें। क़रीबी रिश्तेदारों के अलावा घर में काम करनेवाले नौकर, ड्राइवर, स्कूल-कॉलेज ले जानेवाले ऑटो-ड्राइवर, ट्यूशन पढ़ानेवाले टीचर्स, कज़िन, इन सबके सिलसिले में सावधानी ज़रूरी है। किसी पर बिना किसी वजह के शक भी नहीं करना चाहिए। बस सबके सिलसिले में शरीअत के अहकाम की पाबन्दी करना काफ़ी है।

मैंने यह बात भी नोट की है कि बहुत-से घरानों में बड़ी और शादीशुदा औरतें तो इस्लामी अहकाम पर अमल करती हैं लेकिन इन नौउम्र बच्चियों के सिलसिले में यह समझा जाता है कि ये तो अभी बच्चियाँ हैं। इसी तरह कुछ घरानों में बच्चियाँ, नौजवान लड़कों से तो सावधानी के साथ दूरी रखती हैं लेकिन बड़ी उम्र के मर्दों के सिलसिले में यह समझा जाता है कि बच्ची, उनकी बेटी की तरह है। ये सब निहायत नुक़सानदेह रवैये हैं। इस्लामी शरीअत ऐसा कोई फ़र्क़ नहीं करती।

महरम मर्दों के साथ भी शर्म व हया के मुनासिब तक़ाज़ों को निभाते हुए ज़रूरी फ़ासिला रखना चाहिए।

बच्चियों के साथ जिंसी ज़्यादतियाँ इस वक़्त हमारे मुल्क में एक बड़ा मसला बनता जा रहा है। इस तरह की ज़्यादतियाँ बच्चियों की नफ़सियात पर बहुत बुरा असर डालती हैं। ज़िन्दगी-भर इसके बुरे असर से वे ख़ुद को निकाल नहीं पातीं। ये ज़्यादतियाँ मामूली दरजे की भी हो सकती हैं। किसी क़रीबी रिश्तेदार की तरफ़ से एक ग़लत टच, गन्दी निगाह, गन्दी बात या गन्दा इशारा लड़की को तबाह करके रख देता है। वह अन्दर से टूट जाती

है। दुनिया के सारे मर्दों से नफ़रत करने लगती है। जुर्म के एहसास और एहसासे-कमतरी की शिकार हो जाती है। माँ-बाप को पता ही नहीं चलता कि ऐसा कोई हादिसा पेश आया है और मासूम बच्ची के अन्दर क़ियामत मची रहती है। चालीस साल और पचास साल की उम्र की सख़्त नफ़सियाती बीमार औरतों के मसले की जड़ को समझने की कोशिश की जाती है, तब पता चलता है कि उनके बचपन की किसी ऐसी घटना की नाख़ुशगवार याद ने उनकी सारी ज़िन्दगी को तकलीफ़देह बना दिया। बेहयाई के मौजूदा सैलाब में अपनी बच्चियों को इस आफ़त से बचाना हर माँ की सबसे अहम ज़िम्मेदारियों में शामिल है।

(4) दोस्तियाँ और इंटरनेट

माँ को अपनी बेटी की तमाम सहेलियों के बारे में पूरी मालूमात होनी चाहिए, और इसकी भी कोशिश करनी चाहिए कि आप उसकी सहेलियों की भी दोस्त बनें और उनपर भी ग़ैर-महसूस तरीक़े से असरन्दाज़ हों। बेटी की सहेलियों को घर पर बुलाना, उनकी महफ़िल में कुछ मिनट बैठ जाना, उनके साथ खाना-पीना और उनको तोहफ़े देना, उनकी कामयाबियों पर जश्न मनाना, उनको उनके नामों के साथ याद रखना, अच्छे कामों पर उनकी तारीफ़ करना, इस तरह के हल्के-फुल्के कामों के ज़रिए आप यह मक़सद हासिल कर सकती हैं।

इस वक़्त एक बड़ा मसला इंटरनेट और सोशल मीडिया की दोस्तियों का है। शुरू में 18 साल से कम उम्र बच्चों को सोशल मीडिया की साइट्स अकाउंट खोलने की इजाज़त नहीं देती थी। अब अकसर साइट्स ने घटाकर यह उम्र 13 साल कर दी है। लेकिन बेहतर यही है कि कम-से-कम हाई स्कूल की पढ़ाई होने तक बच्चे सोशल मीडिया से दूर ही रहें और उसके बाद भी सोशल मीडिया पर उनकी सरगर्मियाँ, ख़ास तौर पर दोस्तियाँ माँ-बाप की निगाहों में रहें। अगर आपकी बेटी इंटरनेट इस्तेमाल करती है तो आप उसकी ज़रूरी तरबियत ख़ुद भी हासिल करें। उसके नेटवर्क में शामिल हों और उसकी मुनासिब रहनुमाई करती रहें।

(5) सेहतमन्द काम

इस उम्र में अपनी बेटी को सेहतमन्द कामों की तरफ़ ध्यान दिलाइए। पेंटिंग, पेड़ लगाना, लेख लिखना, शायरी, किताबें पढ़ना, सिलाई, खाना पकाना, वग़ैरा जैसे काम उसको लगाए रखेंगे। उसके हार्मोंज़ को कंट्रोल में रखेंगे, तनाव कम करेंगे, ग़लत रुझानों की तरफ़ उसको जाने नहीं देंगे और इन कामों की वजह से वह ख़ूब काम करनेवाली और सरगर्म रह सकेगी और उसकी और ज़्यादा ताक़त का इस्तेमाल हो सकेगा। अगर इन कामों में आप भी उसके साथ शरीक हो जाएँ तो इससे आपके साथ उसका तअल्लुक़ और बेतकल्लुफ़ी भी मज़बूत होगी।

सबसे बेहतर काम यह है कि उसे दीनी व तहरीकी सरगर्मियों में ख़ूब लगाएँ। जी॰आई॰ओ॰ जैसी तंज़ीमों से जोड़िए। इससे ऊपर दिए गए फ़ायदे भी हासिल होंगे और उसको अच्छी और पाकीज़ा सोहबत (Company) भी मिलेगी। उसकी सीरत और अख़लाक़ भी निखरेंगे और दीन के काम की बरकत से 'इन शाअल्लाह' वह हर आफ़त और फ़ितने से महफ़ूज़ रहेगी।

नौउम्री से ही अकसर घरानों में बच्ची के सामने उसके रिश्ते और शादी की बातें शुरू हो जाती हैं। सब लोग उसके रिश्ते को लेकर बेपनाह फ़िक्रमन्दी ज़ाहिर करना शुरू कर देते हैं। कुछ माँ-बाप जहेज़ और शादी के ख़र्चों वग़ैरा का रोना भी शुरू कर देते हैं। ये सब चीज़ें लड़की की नफ़सियात पर ख़राब असर डालती हैं। उसकी इज़्ज़ते-नफ़्स पर चोट लगती है। वह ख़ुद को माँ-बाप पर बोझ महसूस करने लगती है। शादी के सिवा, उसे अपना कोई और काम नज़र नहीं आता। कुछ लड़कियों में यह रवैया शादी और रिश्तों के सिलसिले में सख़्त रद्दे-अमल, विरोध और ग़लत रुझान भी पैदा कर देता है। इस उम्र में उसकी तालीम पर ध्यान दीजिए। उसे भी अपनी तालीम और सलाहियत को बढ़ाने पर ध्यान देने का मौक़ा दीजिए। शादी की फ़िक्र ज़रूर कीजिए लेकिन रात-दिन उसके सामने इस विषय को छेड़े रखना ज़रूरी नहीं है।

(6) दोस्त और रोल मॉडल बनिए

बच्चियाँ बहुत कुछ अपनी माँ से सीखती हैं। नौजवान बच्ची बहुत गहराई से अपनी माँ को देखती रहती है, इसलिए सबसे पहली ज़रूरत इस बात की है कि माँ ख़ुद परदे का एहतिमाम करे, महरम और ग़ैर-महरम रिश्तों को उसूली तौर पर निभाए। नमाज़ और दूसरी फ़र्ज़ इबादतों की पाबन्दी करे। शौहर और दूसरे ख़ानदानवालों से अच्छे तरीक़े से पेश आए। ज़्यादा इमकान यही है कि आपकी बच्ची अगले घर जाकर जो बरताव करेगी वह उसी बरताव की तस्वीर होगी जो उसकी माँ अपने घर में करती रही है।

अगर वह आपसे सही तरबियत हासिल करेगी तो आप ही का नाम रौशन करेगी। इसलिए ज़रूरी है कि जो कुछ सिफ़ात आप अपनी बेटी के अन्दर देखना चाहती हैं, वे अपने अन्दर भी पैदा करें। अगर आप चाहती हैं कि आपकी बेटी निहायत बाहया हो तो आपको ख़ुद इस मामले में बहुत हस्सास होना पड़ेगा। अगर आप चाहती हैं कि वह हिजाब की सख़्ती से पाबन्दी करे और क़रीबी रिश्तेदारों से भी मुनासिब दूरी बनाए रखे तो यह उसी वक़्त मुमकिन है जब आप ख़ुद भी ऐसा करें।

इसी तरह माँ की यह कोशिश होनी चाहिए कि वह अपनी बच्ची की सबसे बेहतरीन और सबसे बेतकल्लुफ़ दोस्त बने। इस उम्र में लड़कियों को बहुत-सी परेशानियाँ होती हैं। अपने जिस्म को लेकर स्कूल-कॉलेज में और दूसरी जगहों पर लोगों के रवैयों को लेकर, अपने बदलते हुए जज़बात व एहसासात को लेकर उसके ज़ेहन में बहुत-सी उलझनें और सवालात होते हैं। माँ के साथ उसका रिश्ता इतना बेतकल्लुफ़ होना चाहिए कि वह उन सब सवालों को बिना किसी झिझक के आपके सामने पेश कर सके और आपसे उसका हल मालूम कर सके।

स्कूलों और कॉलेजों में और घरों के बाहर आमतौर पर लड़कियों को छेड़छाड़ के मसले का सामना करना पड़ता है। अकसर मसला बहुत मामूली होता है लेकिन लड़कियाँ उसका गहरा असर क़बूल करती हैं। अगर माँ से बेतकल्लुफ़ हो तो वह अपना मसला बयान करती है और माँ उसे हल करके

इत्मीनान दिला देती है। लेकिन यह बेतकल्लुफ़ी न हो तो इस मसले के लिए भी लड़की ख़ुद को ज़िम्मेदार समझने लगती है। उसे हल सुझाई नहीं देता और वह सख़्त तनाव और उलझन की शिकार हो जाती है।

कुछ माएँ ऐसे विषयों पर अपनी बेटियों के साथ बात करते हुए झिझकती हैं। इसके नतीजे में वे अपनी बेटी के साथ बेतकल्लुफ़ दोस्ती का रिश्ता क़ायम नहीं रख पातीं। ऐसी माओं को बच्चियाँ भी कुछ नहीं बतातीं। यह सूरतेहाल कभी-कभी बहुत ख़तरनाक होती है। इसके नतीजे में माओं को अपनी बच्चियों के हालात मालूम ही नहीं होते और मालूम होते हैं तो उस वक़्त जब पानी सिर से ऊपर हो जाता है।

बेतकल्लुफ़ दोस्ती की एक बड़ी ज़रूरत यह है कि माएँ अपनी बच्चियों के साथ क्वालिटी टाइम बिताएँ। उनके साथ एक जैसी दिलचस्पियों के मामलों पर बात करें। इसके लिए रोज़ाना वक़्त निकालें। उनके कामों और दिलचस्पियों में ख़ुद भी दिलचस्पी लें।

ज़रूरत इस बात की है कि मौजूदा घिनौने समाज में लड़कियों की तरबियत ज़िम्मेदारी के जिस एहसास का तक़ाज़ा करती है, वह हम अपने अन्दर पैदा करें। इस सिलसिले की फ़ायदेमन्द किताबों को पढ़ें। तरबियती प्रोग्रामों में शरीक हों। ज़रूरत हो तो अच्छी काउंसलरों से मश्वरा लेने में झिझक न महसूस करें। याद रखें कि नौउम्री के इन कुछ सालों में आपने भरपूर ध्यान दिया और समझदारी से काम लिया तो आपकी बेटी आपकी आँखों का तारा और आपके लिए और पूरे ख़ानदान के लिए फ़ख़्र और ख़ुशी का सरचश्मा बन सकती है। अल्लाह हमें अपनी ज़िम्मेदारियों को अच्छी तरह पूरा करने की तौफ़ीक़ दे! आमीन!!

नौउम्र लड़कों के मसले

माँ-बाप की अपने बच्चों के सिलसिले में सबसे अहम ज़िम्मेदारी उनकी तरबियत की है। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया है कि माँ और बाप अपनी औलाद के सिलसिले में अल्लाह के सामने जवाबदेह हैं।

"तुममें से हर एक निगराँ है और अपने मुताल्लिक़ीन के सिलसिले में जवाबदेह है। मर्द अपने घरवालों पर निगराँ है। औरत अपने शौहर के घर पर निगराँ है और उनके सिलसिले में जवाबदेह है।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) फ़रमाया करते थे, "अपनी औलाद को अदब सिखाओ, क़ियामतवाले दिन तुमसे तुम्हारी औलाद के बारे में पूछा जाएगा कि तुमने उसे क्या अदब सिखाया और किस इल्म की तालीम दी।" यक़ीनन हर माँ और बाप अपने बच्चों की अच्छी-से-अच्छी तरबियत की हर मुमकिन कोशिश करते हैं। लेकिन इस ज़िम्मेदारी का तक़ाज़ा यह भी है कि वे तरबियत के गुर सीखें, उसकी बारीकियों को जानें कि बच्चों की अच्छी तरबियत कैसे यक़ीनी बनाई जा सकती है।

नौउम्रों की तरबियत

कहते हैं कि बहुत-से माँ-बाप के लिए अपने बच्चों का नौउम्री का दौर सबसे चैलेंजिंग दौर होता है। नौउम्री (Adolescence) और बुलूग़ (Puberty) दो अलग-अलग इस्तिलाहें हैं। बुलूग़ का ताल्लुक़ उन जिस्मानी बदलाव से है जो एक बच्चे के अन्दर उम्र के ख़ास मरहले में आने लगते हैं और उसे एक बालिग़ (व्यस्क) मर्द में बदल देते हैं। जबकि नौउम्री का ताल्लुक़ इस उम्र में आनेवाले जज़बाती और नफ़सियाती बदलाव से है। ये दोनों बदलाव एक साथ भी आ सकते हैं और कुछ वक़्फ़े (अन्तराल) के साथ अलग-अलग

भी। नौउम्री के इन नफ़सियाती बदलाव का मक़सद यह होता है कि एक मासूम बच्चा जो हर मामले में अपने माँ-बाप पर निर्भर था, अब एक आज़ाद और जवान मर्द बन रहा होता है। ज़िन्दगी की बड़ी-बड़ी ज़िम्मेदारियों और चैलेंजों के लिए तैयार हो रहा होता है। इस मरहले में सब कुछ जाननेवाला और हिकमतवाला अल्लाह उसके अन्दर ऐसे नफ़सियाती रुझान पैदा करता है जो उसको एक आज़ाद ज़िन्दगी के लिए तैयार कर सकें। नौउम्री के इस दौर के लिए अंग्रेज़ी ज़बान में 'टीन एज' (Teen Age) का लफ़्ज़ इस्तेमाल किया जाता है जो अस्ल में अंग्रेज़ी गिनती में 'टीन' पर ख़त्म होनेवाली गिनती से ताल्लुक़ रखनेवाली उम्र को कहते हैं, यानी तेरह साल (Thirteen) से उन्नीस साल (Ninteen) की उम्र। लेकिन इसका मतलब हरगिज़ यह नहीं है कि नौउमरी का ताल्लुक़ इसी उम्र से है। ये बदलाव दस-ग्यारह साल की उम्र में भी आ सकते हैं और कुछ बच्चों में काफ़ी देर से भी यह दौर शुरू हो सकता है। इस दौर को अस्ल में उसकी नफ़सियाती ख़ासियतों के ज़रिए ही से पहचाना जा सकता है।

नौउम्री के दौर की सबसे अहम ख़ासियत तो यही होती है कि बच्चा अपने आज़ाद वुजूद को मनवाने की कोशिश शुरू करता है। वह माँ-बाप पर अपना इनहिसार (निर्भरता) तेज़ी से कम करना शुरू कर देता है। अपनी ख़ुद की पसन्द और नापसन्द बनानी शुरू कर देता है। अभी तक उसके ख़यालात वही थे जो उसके माँ-बाप से उसको मिले थे। उम्र के इस मरहले में उसके अपने ख़यालात ढलने शुरू हो जाते हैं। ख़यालात के मामले में वह माँ-बाप की पैरवी नहीं करता। हर मसले पर आज़ादी के साथ सोचना शुरू करता है। अच्छे और बुरे के बारे में उसके अपने तसव्वुरात बनना शुरू होते हैं।

इस दौर में माँ-बाप के मुक़ाबले में बच्चों का अपने हम-जोलियों (Peers) से ताल्लुक़ ज़्यादा मज़बूत होने लगता है। इस तरह मानो कायनात का पैदा करनेवाला उसको आज़ाद समाजी रोल के लिए तैयार करता है। बच्चे हम-जोलियों के असर क़बूल करने लगते हैं। उनके साथ ज़्यादा वक़्त बिताने लगते हैं। हम-जोलियों को मुतास्सिर करना और उनकी निगाह में ख़ुद को बेहतर बनाना, उनकी अहम तरजीह होती है।

इस उम्र में हर चीज़ को लेकर तजस्सुस (उत्सुकता, Curiosity) होता है। घर से बाहर की लम्बी-चौड़ी दुनिया में अलग-अलग चीज़ों, लोगों, तरीक़ों और हालात वग़ैरा से उनका सामना होता है। वे बहुत-सी चीज़ों को ख़ुद आज़माकर देखना चाहते हैं। एडवेंचर भी अपने शबाब पर होता है। तजस्सुस और एडवेंचर का मिलान उन्हें नित नए तजरिबात पर उभारता रहता है।

इस मरहले के शुरुआती हिस्से में मुस्तक़बिल (भविष्य) का शुऊर बहुत कमज़ोर होता है। बच्चे हाल (वर्तमान) में जीते हैं। आगे क्या होगा? किस काम का क्या असर होगा? उसको सोचना और महसूस करना उनके लिए मुश्किल होता है। धीरे-धीरे इसी उम्र में फिर आगे देखने की सलाहियत पैदा होने लगती है।

लिबास और अपनी पहचान के मामले में इस उम्र में वह अलग-अलग तजरिबे करने लगता है। अपने हम-जोलियों में सबसे अच्छा नज़र आने की ख़ाहिश उससे तरह-तरह की हरकतें करवाती है। अपने ज़ाहिरी वुजूद (Appearance) को लेकर उसकी हस्सासियत बहुत ज़्यादा बढ़ जाती है।

यह दौर मिसालियतपसन्दी (Idealism, आदर्शवाद) का दौर होता है। बच्चा अपने ख़ाब बुनता है और उनको पूरा करने की तमन्ना शुरू करता है। अपने हीरो बनाता है और उनकी पैरवी और उनके जैसा बनने की संजीदा कोशिश शुरू कर देता है। अमली दुश्वारियों और मुश्किलात का शुऊर कमज़ोर होता है और वह यह समझता है कि ख़ाबों की दुनिया बस कुछ क़दम के फ़ासले पर मौजूद है।

यह ताक़त से भरपूर दौर होता है। जोश, वलवला और क़ुव्वत अपने शबाब पर होती है। नौउम्र बच्चा जो काम भी करता है वह भरपूर ताक़त के साथ करता है। अपने ख़यालात और अपने इरादों को अमल में लाने में भी वह भरपूर ताक़त और हौसले से काम लेता है।

ये सब ख़ासियतें, इस दौर की फ़ितरी ख़ासियतें हैं। इन ख़ासियतों का ताल्लुक़ उन बहुत सारे हार्मोनल बदलाव से भी होता है जो इस उम्र में उसके

जिस्म के अन्दर आने लगता है। जैसा कि बताया गया, इन बदलाव का एक बड़ा मक़सद भी कायनात के रब के सामने होता है। ये बदलाव न हों तो बच्चा कभी उन ज़िम्मेदारियों के लिए तैयार नहीं हो पाएगा जो उसे ज़िन्दगी के अगले मरहलों में अदा करनी हैं।

माँ-बाप को अगर इस हक़ीक़त का शुऊर न हो तो वे इन बदलाव से घबरा जाते हैं। जो बच्चा कल तक उनकी हर बात को आसानी से क़बूल कर लेता था, अब वह सवालात करने लगता है और उनको चैलेंज करने लगता है तो उन्हें लगता है कि वह बाग़ी हो रहा है। जो बच्चा कल तक उनसे चिमटा हुआ था, अब अलग हो रहा है, ज़्यादा दोस्तों के साथ रहने लगा है तो वे समझते हैं कि वह उनसे बिछड़ रहा है। उसके नित नए तजरिबात, अजीब व ग़रीब लिबास और तरह-तरह के शौक़ उन्हें परेशान करते हैं। उसके कुछ ख़यालात उन्हें फ़िक्र में मुब्तला करते हैं। उन्हें अन्देशा होने लगता है कि कहीं वह ग़लत रास्ते पर तो नहीं जा रहा है!

उम्र के इस मरहले में बच्चे की तरबियत के दौरान अगर उसे मुहब्बत, ख़ुद-एतिमादी और ख़ुशियाँ मिलें और उसके माँ-बाप उम्र के मरहले की नज़ाकतों को समझते हुए हिकमत और अक़्लमन्दी के साथ उसकी तरबियत और रहनुमाई की ज़िम्मेदारी अंजाम दें तो वह एक बेहतरीन शख़्सियत के तौर पर परवान चढ़ सकता है। नौउम्री के ये बदलाव उसकी ज़िन्दगी में ख़ुशगवार बदलाव लाने का ज़रिआ बन सकते हैं। और समझदार माँ-बाप की निगरानी में वह एक ऐसे जवान आदमी में बदल जाता है जिसमें नेक ख़यालात व नज़रियात होते हैं और वह मुबारक मक़सद के लिए भरपूर ताक़त के साथ ख़ूब कोशिश में लगा रहता है। और ऐसा न हो सके, माँ-बाप नासमझी दिखाएँ तो फिर बदलाव का यह मरहला, अल्लाह न करे, नौजवानों को बाग़ी, सरकश, ग़लत ख़यालात व नज़रियात का अलमबरदार, ग़लत आदतों का शिकार बल्कि जुर्म करनेवाला भी बना सकता है।

(1) नौउम्री की नफ़सियात को समझिए

सबसे पहले यह ज़रूरी है कि माँ-बाप नौउम्री की नफ़सियात को समझें।

नौउम्री के दौर में माँ-बाप जब बच्चों की तरबियत करते हैं तो उन्हें यह जान लेना चाहिए कि वे एक सफ़र तय कर रहे हैं, जिसके लिए उन्हें भी माहिर होना ज़रूरी है, ताकि वे अपने बच्चे के ख़ाबों को कामयाब बनाने में उसकी सही रहनुमाई कर सकें। बच्चे के इस मरहले में क़दम रखने से पहले उन्हें मालूम हो कि अब उनके बच्चे के अन्दर क्या बदलाव आ सकते हैं। अगर आप, जो कुछ आनेवाला है, उससे पहले से वाक़िफ़ रहें तो 'इन शाअल्लाह' चैलेंजों का सामना करना आपके लिए आसान होगा। इसलिए टीन एज पैरेंटिंग से मुताल्लिक़ किताबों और मज़मूनों को पढ़ें। मौलाना अफ़ज़ल हुसैन की किताब 'फ़न्ने-तालीम व तरबियत' में इसपर काफ़ी मैटर मौजूद है। उर्दू में एक और अच्छी किताब डॉ॰ आसिफ़ महमूद जाह 'बचपन, लड़कपन और भूलपन' के नाम से छपती है। अब बड़े शहरों में टीन एज पैरेंटिंग पर अच्छे वर्कशॉप भी किए जाते हैं। माँ-बाप को उनसे फ़ायदा उठाते हुए अपने इल्म और महारत में बढ़ोत्तरी की कोशिश करनी चाहिए। अपने बुज़ुर्गों से इस सिलसिले में बातचीत भी करनी चाहिए और उनके तजरिबों से फ़ायदा उठाना चाहिए।

आप अपने ख़ानदान और पास-पड़ोस के दूसरे नौउम्रों पर ग़ौर करें। उनकी शख़्सियत में आ रहे बदलाव को नोट करें। उनके बारे में उनके माँ-बाप से बात करें। एक और फ़ायदेमन्द तरीक़ा यह है कि ख़ुद अपने नौउम्री के दौर को ज़ेहन में ताज़ा करने की कोशिश करें। उस दौर के बदलाव की गहराई में जाने की कोशिश करें। सोचें कि उस दौर में आपकी पसन्द व नापसन्द में, आदतों व तरीक़ों में, माँ-बाप के साथ ताल्लुक़ात में, मिज़ाज में क्या बदलाव आए थे? उससे भी नौउम्री की नफ़सियात को समझने में मदद मिलेगी।

(2) बच्चों के दोस्त बनिए

नौउम्र बच्चों पर असरन्दाज़ होने और उनकी सही रहनुमाई करने में वे माँ-बाप ज़्यादा कामयाब होते हैं जिनका अपने बच्चों के लिए दोस्ताना रवैया होता है। दोस्ताना रवैये का मतलब यह होता है कि आपका अन्दाज़ और

लब व लहज़ा हुक्म देनेवाला और नसीहत करनेवाला न हो, बल्कि मश्वरा देनेवाला, दलील से मनवानेवाला दोस्त का-सा अन्दाज़ हो। आप कोई बात उससे सिर्फ़ इस बुनियाद पर न मनवाएँ कि यह आपका हुक्म या आपके तजरिबे की बुनियाद पर क़ायम ख़याल है, बल्कि दलील से ठण्डे लब व लहजे में बात करके अपनी बात मनवाएँ और कोशिश करें कि आपका ख़याल, उसका ख़याल बन जाए। आपसे अपने दिल की बात करने में बच्चे को कोई हिचकिचाहट न हो। वह बिना तकल्लुफ़ अपने मसले आपके साथ बाँट सके। अपने स्कूल या कॉलेज की मसरूफ़ियतों के बारे में बता सके। अपने ज़ेहन में उठनेवाले सवाल आपके सामने पेश कर सके।

इस उम्र में नसीहत, हुक्म, उसूल व ज़ाबिते वग़ैरा ज़्यादा काम नहीं आते। उल्टा उनके ख़िलाफ़ बग़ावत के जज़बात पैदा होते हैं। लेकिन अगर आप बेतकल्लुफ़ दोस्त का-सा अन्दाज़ अपनाएँ, खुलकर बात करें और दलील से उससे अपनी बात मनवाएँ कि उसके लिए अच्छा क्या है और बुरा क्या है, तो यक़ीनन आपकी बात असर कर सकती है। यह उम्र ख़यालात को परवान चढ़ाने की है। इस अमल में उसकी मदद कीजिए। अच्छे और पाकीज़ा ख़यालात व नज़रियात बनाने के अमल का हिस्सा बनिए। दीन और दीनी तालीमात पर उसके अक़ीदे और एतिमाद को मज़बूत कीजिए। यह काम बेतकल्लुफ़ बातचीत से ही मुमकिन है। और इस काम में कामयाबी के लिए ज़रूरी है कि लड़कपन के शुरुआत ही से, बल्कि और पहले से आप अपने बच्चे के बेतकल्लुफ़ दोस्त बन जाएँ। खोजबीन और अलग-अलग चीज़ों को आज़माने की नफ़सियात कभी-कभी ख़तरनाक नतीजे भी पैदा करती है। इसी नफ़सियात के नतीजे में बच्चे सिगरेट पीना जैसी आदतों के या ग़लत जिंसी रवैयों के शिकार हो सकते हैं। अगर आप इन सब कामों पर उनसे खुलकर बात करने की पोज़ीशन में हों और बातचीत के ज़रिए अच्छे रवैयों की तरफ़ उनकी रहनुमाई कर सकें तो ग़लत और तबाहीवाली बातों से उनको बचाया जा सकता है।

दोस्ती के लिए सबसे ज़रूरी चीज़ कम्यूनिकेशन है। नौउम्र बच्चों के साथ माँ-बाप के कम्यूनिकेशन की बड़ी अहमियत है। रोज़ाना कुछ वक़्त

अपने बच्चे के साथ बातचीत के लिए निकालिए, चाहे ये कुछ मिनट ही क्यों न हों। रात में सोने से पहले या शाम की चाय पर कुछ मिनट बेतकल्लुफ़ बात कीजिए। अपने बच्चे के साथ हफ़्ते में एक-आध बार कोई हल्की-फुल्की सरगर्मी अपनाइए; कोई गेम या होटल में फ़ैमली डिनर या कोई मसरूफ़ियत। दिन में कम-से-कम एक बार फ़ैमली के तमाम लोगों का मिलकर खाना भी इस ज़रूरत को पूरी कर सकता है।

कम्यूनिकेशन और दोस्त के-से ताल्लुक़ में इस बात की बड़ी अहमियत है कि आप बच्चे की इज़्ज़त करें। उसकी इज़्ज़ते-नफ़्स का ख़याल रखें। नौउम्री में इज़्ज़ते-नफ़्स को लेकर हस्सासियत बढ़ जाती है। अगर आप उसकी इज़्ज़ते-नफ़्स को ठेस पहुँचाएँगे तो वह कभी आपका बेतकल्लुफ़ दोस्त नहीं बन सकता। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) ने बच्चों की इज़्ज़त करने का भी हुक्म दिया है—

"अपने बच्चों की इज़्ज़त करो और उन्हें अच्छा अदब सिखाओ।"

(हदीस : इब्ने-माजा)

(3) यह समझ हो कि किन बातों से रोकना है और किन बातों को नज़रन्दाज़ करना है

अब आपका बच्चा एक आज़ाद शख़्सियत का मालिक बन रहा है। उसकी पसन्द और नापसन्द का एहतिराम कीजिए। पसन्द और नापसन्द के अपनाने में संजीदा दलीलों के ज़रिए उसकी मदद ज़रूर कीजिए, लेकिन हर छोटे-बड़े मामले में अपनी पसन्द उसपर थोपने की कोशिश मत कीजिए। वह किस रंग के कपड़े पहनना चाहता है? अपने कमरे को किस तरह सजाना चाहता है? किस वक़्त पढ़ना और खेलना चाहता है? ये और इस जैसी दसियों बातें हैं जिनमें आमतौर पर पसन्द व नापसन्द नुक़सान न पहुँचानेवाली होती है। माँ-बाप, ख़ास तौर पर माँ, इन मामलों में भी अपनी पसन्द थोपना चाहती हैं। कोई ख़ास लिबास उनको अच्छा नहीं लगता तो वे चाहती हैं कि वह उसे न पहने जबकि बच्चे को वह लिबास बहुत पसन्द होता है। ऐसे मामूली और नुक़सान न पहुँचानेवाले मसलों पर बहस व तकरार बग़ावत के

जज़बात को भड़काती है।

यह बात याद रखिए कि नौउम्र बच्चों पर आपको वैसा इख़्तियार हासिल नहीं रह सकता जैसा छोटे बच्चों पर होता है। आप कुछ ही मामलों में उनसे अपनी बात मनवा सकते हैं। इस महदूद इख़्तियार को ज़्यादा बड़े और अहम मामलों के लिए रिज़र्व रखिए। इस इख़्तियार को उस वक़्त इस्तेमाल कीजिए जब वह कोई ग़लत या गुनाह का काम करना चाहे, या किसी ऐसी आदत या रवैये को इख़्तियार करना चाहे जो उसकी आख़िरत के लिए या भविष्य के लिए या सेहत के लिए नुक़सानदेह हो। आप छोटी-छोटी बातों पर उलझते रहेंगे तो उन बड़े मामलों में दख़ल की गुंजाइश बाक़ी नहीं रहेगी।

नई चीज़ों को आज़माने का उसका मिज़ाज उसकी शख़्सियत की बुलन्दी के लिए ज़रूरी है। उसको सही रुख़ दीजिए। वह अगर पहाड़ पर जाना चाहे, दोस्तों के साथ किसी जगह की सैर करना चाहे, जिम जाना चाहे, किसी नए रेस्ट्राँ का खाना टेस्ट करना चाहे, तो मुनासिब सावधानियों के साथ उसे करने दीजिए, ताकि यही मिज़ाज आइन्दा सिगरेट को टेस्ट करने की तरफ़ राग़िब (आकर्षित) करे तो आप अपने वीटो और रोकने का महदूद हक़ इस्तेमाल कर सकें।

(4) उम्मीदों को वाज़ेह रखिए

आप अपने बच्चे से क्या उम्मीदें रखते हैं? यह उसे अच्छी तरह मालूम होना चाहिए। उम्मीदें बहुत ज़्यादा और हर मामले में नहीं होनी चाहिएँ, बस ज़्यादा अहम मामलों में होनी चाहिएँ और बच्चे पर वाज़ेह रहनी चाहिएँ। आमतौर पर ऐसा महसूस होता है कि नौउम्र बच्चे माँ-बाप की उम्मीदों को पसन्द नहीं करते, लेकिन ऐसा उस वक़्त होता है जब आपकी उम्मीदें या तो हक़ीक़त पर मब्नी नहीं होती हैं या बहुत ज़्यादा मामलात से मुताल्लिक़ (सम्बन्धित) होती हैं और उसके लिए आज़ादी बहुत कम रह जाती है। मुसलमान माँ-बाप को सबसे पहले यह बात अच्छी तरह ताकीद कर देनी चाहिए कि जिन चीज़ों का इस्लाम ने हुक्म दिया है, उनके सिलसिले में

कोताही या जिन बातों से मना किया है, उनके क़रीब जाने की कोशिश किसी सूरत बरदाश्त के क़ाबिल नहीं होगी। इन मामलों के सिलसिले में हस्सासियत ख़ुद उसके मिजाज़ का हिस्सा बन जाना चाहिए। कोशिश कीजिए कि चार-पाँच बड़ी-बड़ी उम्मीदें (मिसाल के तौर पर आपको ज़िम्मेदारियों का पाबन्द होना चाहिए, इम्तिहान में इतने लेवल का ग्रेड लाना चाहिए, घर के इन चार-पाँच अहम ज़ाबितों की पाबन्दी करनी चाहिए वग़ैरा) क़ायम करें। हो सके तो उन्हें क़ायम करने में बच्चे से भी मश्वरा करें। अगर ये उम्मीदें पूरी हो जाती हैं तो ख़ुश और मुत्मइन रहें। अपनी ख़ुशी और इत्मीनान का इज़हार भी करते रहें। दूसरे कामों पर ज़्यादा सीरियस रद्दे-अमल का मुज़ाहरा न करें।

(5) बच्चे के दोस्तों को जानिए और उनके दोस्त बनिए

नौउम्री में बच्चे सबसे ज़्यादा असर अपने हम-जोलियों का क़बूल करते हैं। आपका बच्चा किस रुख़ पर जा रहा है? इसको जानने का सबसे असरदार तरीक़ा यह है कि आप उसके दोस्तों को देखें। अपने मिज़ाज और रुझान के मुताबिक़ बच्चा दोस्तों को चुनता है। अगर उसके दोस्त नेक मिज़ाज हैं तो अल्लाह का शुक्र है आपके बच्चे के अन्दर भी नेक मिज़ाजी है। अच्छी सुहबत की ज़रूरत हर उम्र के इनसानों के लिए है, लेकिन नौउम्रों को यह ज़रूरत बहुत ज़्यादा होती है। पैग़म्बर (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

> "नेक आदमी की मिसाल उस शख़्स की है जो मुश्क रखे हुए हो, अगर तुमको उससे मुश्क न मिल सके तो ख़ुश्बू मिल जाएगी। और ख़राब आदमी की दोस्ती व संगत की मिसाल भट्टी धौंकनेवाले की है, अगर तुम्हारा कपड़ा न जले तो कम-से-कम उसके धुएँ से न बच सकोगे।" (हदीस : बुख़ारी)

माँ-बाप की पहली ज़रूरत यह है कि वे अपने टीनेजर्ज़ (Teenager) के दोस्तों से अच्छी तरह वाक़िफ़ हों। दूसरी ज़रूरत यह है कि वे दोस्तों के चुनने में उसकी मदद करें और तीसरी ज़रूरत यह है कि वे उसके दोस्तों के दोस्त बनें और दोस्तों पर भी ग़ैर-महसूस तरीक़े से असरन्दाज़ हों। कभी-कभी बच्चे

के दोस्तों को घर पर बुलाना, उसके दोस्तों की महफ़िल में कुछ मिनट बैठ जाना, उनके साथ खाना-पीना और उनको तोहफ़े देना, उनकी कामयाबियों पर ख़ुशियाँ मनाना, दोस्तों को उनके नामों के साथ याद रखना, अच्छे कामों पर उनकी तारीफ़ करना। इस तरह के हल्के-फुल्के कामों के ज़रिए आप अपने बच्चे के दोस्तों के दोस्त बन सकते हैं।

अच्छी सुहबत के लिए एक आसान रास्ता यह है कि अपने बच्चों को स्टुडेन्ट और नौजवानों की इस्लामी तंज़ीमों से जोड़ें। इससे नेक बच्चों के दरमियान वे उठेंगे, बैठेंगे तो उनके मक़सद और ख़यालात में पाकीज़गी आएगी। बुराइयों और बेहयाई के कामों से महफ़ूज़ रहेंगे। और वे अच्छे नौउम्र बच्चों के असर क़बूल करेंगे। इन शाअल्लाह!

(6) बच्चे की प्राइवेसी के एहतिराम और उसपर निगाह रखने में मुनासिब बैलेंस रखिए

हर इनसान अपनी ज़िन्दगी में कुछ प्राइवेसी चाहता है। एक पर्सनल स्पेस चाहता है जिसमें कोई भी दख़लन्दाज़ी न करे। यह ज़रूरत अब आपके नौउम्र बच्चे की भी है। अब अगर आप उससे दिन-भर की मसरूफ़ियात की मिनट-मिनट तफ़सील पूछना शुरू कर दें तो वह आज़ादी में ख़लल महसूस करेगा। उसके हर ई-मेल पैग़ाम और हर मैसेज को आप देखने लगें तो इससे भी उसको तकलीफ़ होगी और यह एहसास होगा कि उसके माँ-बाप उससे मुहब्बत नहीं करते।

लेकिन दूसरी तरफ़ यह भी आपकी ज़रूरत है कि आप उसपर निगाह रखें। देखें कि वह किसी ग़लत रास्ते पर तो नहीं जा रहा है। इंटरनेट पर गुमराह होना निहायत आसान है। इसलिए यह देखना ज़रूरी है कि उसकी इंटरनेट पर सरगर्मी क्या है।

समझदार माँ-बाप इस मामले में तवाज़ुन और बैलेंस से काम लेते हैं। न उससे पूरी तरह बेख़बर हो जाते और न उसे अपना ग़ुलाम बनाने की कोशिश करते हैं। अपने बच्चे की तमाम हरकतों को नज़र में रखिए, उनके किरदार और रवैये से बाख़बर रहिए और रोज़ाना के छोटे मामलों में उसपर

एतिमाद कीजिए और आज़ादी दीजिए। बस यह देखते रहिए कि कहीं 'ख़तरे की अलामतें' (Warning Signals) तो ज़ाहिर नहीं हो रही हैं? ऐसी अलामतें ज़ाहिर होने लगें, अल्लाह न करे, तो आप दख़लन्दाज़ी बढ़ा दीजिए। वरना उसकी प्राइवेसी के हक़ का एहतिराम कीजिए। अपने बच्चे के अन्दर यह यक़ीन पैदा कीजिए कि आप उसपर एतिमाद करते हैं इसलिए उसको आज़ादी दे रहे हैं और यह कि एतिमाद तोड़ा जाएगा तो आज़ादी भी कम हो जाएगी।

ख़तरे की अलामतें

नौउम्र बच्चों में नीचे लिखी गई अलामतें ख़तरनाक समझी जाती हैं। ऐसी कोई अलामत सामने आए तो आपकी तवज्जोह बढ़ जानी चाहिए। आपको उसकी जड़ में जाने की कोशिश करनी चाहिए। आप ख़ुद मसले की जड़ समझ नहीं सकते या उसे हल नहीं कर सकते तो किसी माहिरे-नफ़सियात की मदद लेनी चाहिए।

(1) अचानक वज़्न का तेज़ी से कम होना या बढ़ना। यह किसी बीमारी की अलामत हो सकती है और आदतों में किसी बड़ी तब्दीली की भी।

(2) नीन्द के मसले, नीन्द न आने की शिकायत, अचानक देर से सोना शुरू करना, रातों में घंटों कम्प्यूटर या मोबाइल के सामने बैठना, सुबह बहुत सुस्त नज़र आना।

(3) मिज़ाज या मूड में बड़ी तब्दीली, अचानक चिड़चिड़ा या ग़ुस्सेवाला हो जाना, बातचीत अचानक कम कर देना वग़ैरा।

(4) दोस्तों के हलक़े में अचानक तब्दीली। अचानक नए-नए लोगों का मिलने आना या फ़ोन पर बात होते रहना।

(5) स्कूल की ग़ैर-हाज़िरियों का बढ़ जाना। बग़ैर किसी माक़ूल वजह के स्कूल की छुट्टी करना।

(6) स्कूल में परफ़ार्मेंस का अचानक गिर जाना, इम्तिहानों में मिलनेवाले नम्बरों में भारी गिरावट।

(7) ख़ुदकुशी का ज़िक्र, (मज़ाक़ में ही सही) ख़ुदकुशी के बारे में कहना।

(8) तम्बाकू, शराब या ड्रग्ज़ की अलामतें।

(9) क़ानून तोड़ना।

(10) रात को देर तक घर से बाहर रहना।

इनमें से कुछ अलामतें, आम हालात में भी पैदा हो सकती हैं। इन अलामतों का लाज़िमी मतलब यह नहीं है कि आपका बच्चा ग़लत रास्ते पर है, लेकिन इन अलामतों से इसका इमकान ज़रूर पैदा हो जाता है। समझदार माँ-बाप इन अलामतों के सिलसिले में अपने बच्चे पर नज़र रखते हैं और ऐसी कोई अलामत देखते हैं तो फ़ौरन नोटिस लेकर उसकी वजहों को समझने की कोशिश करते हैं।

ख़ास तवज्जोह चाहनेवाले काम

(1) हया व शर्म

हया इस्लाम की पहचान है और ईमान का शोबा है। इस उम्र में हया का जज़बा परवान चढ़ाने पर ख़ास तवज्जोह देनी चाहिए। बच्चे अपने लिबास के बारे में हस्सास हों, निगाहों की हिफ़ाज़त करें। क़ुरआन ने ख़ास तौर से हुक्म दिया है कि अपने माँ-बाप के कमरे में दाख़िल होते वक़्त भी इजाज़त लिया करें।

> "और जब तुम्हारे बच्चे अक़्ल की हद को पहुँच जाएँ तो चाहिए कि उसी तरह इजाज़त लेकर आया करें जिस तरह उनके बड़े इजाज़त लेते रहे हैं।" (क़ुरआन, सूरा-24 नूर, आयत-59)

(2) लड़के-लड़कियों का आपस में ताल्लुक़

इस उम्र से पहले आमतौर पर लड़के-लड़कियों में आपस में मेल-जोल पर पाबन्दी नहीं होती। बड़े होने के बाद भी बहुत-से घरों में इस सिलसिले में एहतियात नहीं बरती जाती। इन नौउम्रों से औरतें बच्चा समझकर मुनासिब फ़ासिला नहीं रखतीं। क़ज़िन और पड़ोस की लड़कियों से मेल-जोल बचपन की तरह ही चलता रहता है। इस्लाम में मर्दों और औरतों के बीच

मुनासिब फ़ासिले के जो अहकाम हैं, वे बालिग़ होने के मरहले में लागू हो जाते हैं। औरतों को भी इसका लिहाज़ करना चाहिए। और अपने बच्चों को भी इसका आदी बनाना चाहिए कि वे अब औरतों के मामले में इस्लामी आदाब की पाबन्दी करने लगें। घर के अन्दर बहनों और महरम औरतों से भी शरीअत की तालीम के मुताबिक़ मुनासिब फ़ासिला और एहतियात की आदत डालनी चाहिए।

(3) वक़्त का बेहतरीन इस्तेमाल

चौबीस घंटों का अगर सही इस्तेमाल करना वे जान जाएँ तो उनकी तालीमी कारकर्दगी पर अच्छा असर पड़ सकता है। वक़्त का सही इस्तेमाल करने से ख़ुद के लिए भी वक़्त निकालना आसान हो जाता है। उस वक़्त को ख़ानदान, दोस्तों और अपनी तख़लीक़ी सलाहियतों के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं। वक़्त की पाबन्दी नमाज़ को बुनियाद बनाकर होनी चाहिए।

(4) अच्छी सोच

बच्चे को हमेशा नेक और अच्छी सोच का मालिक बनाइए। उसके भविष्य के लिए यह बहुत ज़रूरी है। अच्छी सोच इनसान को हमेशा सुकून देती है और ज़िन्दगी पुरअम्न हो जाती है।

(5) ख़ुद-एतिमादी

बच्चों में ख़ुद-एतिमादी यानी अपने-आपपर भरोसा पैदा करें। इसके लिए उनकी कुछ छोटी-मोटी ग़लतियों को नज़रन्दाज़ करके उनका हौसला बढ़ाएँ, ताकि उनमें यह एहसास पैदा हो कि वे बहुत कुछ कर सकते हैं।

(6) तवज्जोह (Focus)

बहुत सारी उलझनों की वजह से बच्चा कहीं पर भी अपनी तवज्जोह जमा नहीं पाता, जिसका असर उसकी पढ़ाई पर भी पड़ सकता है। बच्चे की उलझनों को दूर करके उसको एक जगह तवज्जोह जमाना सिखाएँ और उसे इसकी तरबियत दें।

(7) ख़ुद का एहतिराम

बच्चे को हमेशा यह तालीम दें कि वह अपनी इज़्ज़त करे, जब वह अपनी इज़्ज़त करेगा तो दुनिया भी उसका एहतिराम करेगी।

(8) अच्छी आदतें

इस उम्र में आदतों पर निगाह रखना ज़रूरी है। बचपन में सिखाई हुई बहुत-सी अच्छी आदतें इस उम्र में बिगड़ने लगती हैं। बच्चे अपने बड़ों का एहतिराम करें, अच्छी ज़बान इस्तेमाल करें, पाक-साफ़ रहें, नमाज़ की पाबन्दी करें, अल्लाह से ताल्लुक़ मज़बूत करें। इन सबकी ख़ास तरबियत ज़रूरी है।

माँ-बाप से बद-सुलूकी

माँ-बाप पर किया जानेवाला ज़ुल्म भी घरेलू हिंसा (Domestic Violence) में आता है। यह हिंसा की नई क़िस्म है जो रिवायती समाज में कभी थी ही नहीं, लेकिन अब नए ज़माने के समाज में इसका चलन भी बढ़ता जा रहा है। अमेरिका में किए गए सर्वे के मुताबिक़ 75% नौउम्र बच्चों और बच्चियों ने अपने माँ या बाप के साथ ज़बानी बद-सुलूकी (यानी गाली-गलोज, लानत व ताने देना वग़ैरा) को माना है, जबकि 22% ने उनपर जिस्मानी हमलों और जिस्मानी मार-पीट का एतिराफ़ किया। स्पेन में 14% बच्चों ने यह एतिराफ़ किया कि उन्होंने पिछले साल अपनी माँ या बाप को मारा-पीटा। हमारे मुल्क में हेल्प एज इंडिया ने जो सर्वे किया है उससे मालूम होता है कि कम-से-कम 20% बूढ़े माँ-बाप अपने बच्चों के ज़ुल्म के शिकार हैं। बंगलौर इसमें सबसे ऊपर है, जबकि मार-पीट में पहला नम्बर पटना का है।

किसी बेटे या बेटी के लिए माँ-बाप के साथ बद-सुलूकी से बढ़कर कोई बद-नसीबी और लानत नहीं हो सकती। ऐसा शख़्स समाज में किसी काम का नहीं रहता। इस्लाम के नज़दीक तो माँ-बाप से बद-सुलूकी, शिर्क के बाद, सबसे बड़े गुनाहों में शामिल है। क़ुरआन कहता है—

> "और तुम सब अल्लाह की बन्दगी करो, उसके साथ किसी को साझी न बनाओ, माँ-बाप के साथ अच्छे बरताव करो।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-36)

अल्लाह ने उन्हें 'उफ़' कहने तक से मना किया है—

> "तेरे रब ने फ़ैसला कर दिया है कि तुम लोग किसी की इबादत न करो, मगर सिर्फ़ उसकी। माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करो। अगर तुम्हारे पास इनमें से कोई एक या दोनों, बूढ़े होकर रहें तो

उन्हें उफ़ तक न कहो, न उन्हें झिड़ककर जवाब दो, बल्कि उनसे एहतिराम के साथ बात करो। और नरमी और रहम के साथ उनके सामने झुककर रहो, और दुआ किया करो कि पालनहार! इनपर रहम कर जिस तरह इन्होंने रहमत और मुहब्बत के साथ मुझे बचपन में पाला था।"

(क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत : 23-24)

पैग़म्बर (सल्ल॰) ने तो माँ-बाप ही नहीं, बल्कि माँ-बाप के गुज़रने के बाद उनके रिश्तेदारों, दोस्तों और उनसे मुहब्बत करनेवालों से भी अच्छा सुलूक करने की ताकीद की है।

"सबसे बड़ी नेकियों में से एक बड़ी नेकी यह है कि कोई शख़्स अपने बाप के मरने के बाद या उसकी ग़ैर-मौजूदगी में उसके दोस्तों के साथ अच्छा सुलूक करे।" (हदीस : मुस्लिम)

इस रुझान की अलामतें

बच्चों में यह रुझान यानी माँ-बाप से बद-सुलूकी और मार-पीट का रुझान अचानक पैदा नहीं हो जाता, बल्कि धीर-धीरे परवान चढ़ता है। इसलिए बच्चों के नीचे दिए गए रुझानों पर भी माँ-बाप को नज़र रखनी चाहिए और उसका वक़्त पर इलाज करना चाहिए। ज़ुल्म और मार-पीट पर माइल बच्चों में पहले नीचे दी गई कैफ़ियतें ज़ाहिर होने लगती हैं। आमतौर पर ये रुझान ग्यारह-बारह साल से लेकर अट्ठारह-उन्नीस साल की उम्र में ज़ाहिर होने लगते हैं।

- उनकी वजह से किसी भी फ़ैमली मेम्बर को जिस्मानी तकलीफ़ पहुँचती रहती है। शुरुआत छोटे बहन-भाइयों और दूसरे कमज़ोर फ़ैमली मेम्बरों से होती है। घर में बूढ़े दादा-दादी हों तो उनके साथ बार-बार और हमेशा का बद-तमीज़ी का रवैया भी इस रुझान की ख़ास पहचान है।
- बड़ों का अदब नहीं करते। बद-तमीज़ी से बात करते हैं। झिड़क देते हैं। धमकी देते हैं। चीखने-चिल्लाने लगते हैं।
- घरेलू चीज़ों को नुक़सान पहुँचाते हैं।

- जज़बाती ब्लैक-मेल करते हैं।
- सिगरेट या अलकोहल को घर में, या घर से बाहर इस्तेमाल करते हैं। अपने दोस्तों के सामने माँ-बाप का एहतिराम नहीं करते।
- पैसे के बारे में हस्सास नहीं रहते। अनजाने ख़र्चों के लिए भारी-भारी पैसे माँगते रहते हैं।

इस रुझान की वजहें क्या हैं?

अगर बच्चों में ऐसी कोई अलामत नज़र आ रही है तो पहली ज़रूरत यह है कि उसकी वजह को तलाश किया जाए। बहुत सारे माँ-बाप समझते हैं कि इस क़िस्म का बरताव हार्मोनल तब्दीली की वजह से है। यह बात सही है कि इस उम्र में थोड़ी बहुत बग़ावत और सरकशी का रुझान हर बच्चे में पैदा होता है, जो फ़ितरी है। लेकिन इस फ़ितरी रुझान में और ग़ैर-फ़ितरी बद-सुलूकी और ज़ुल्म-ज़्यादती में फ़र्क़ का शुऊर माँ-बाप को होना बहुत ज़रूरी है। जब यह बरताव माँ-बाप पर ज़ुल्म की हद तक पहुँच जाता है तो यह उनकी मौत या जायदाद में सख़्त नुक़सान का सबब बन सकता है। बच्चों की वजह से माँ-बाप पर जो ज़ुल्म होता है उससे उनमें ख़ुद-एतिमादी की कमी हो जाती है। वे माँ-बाप की हैसियत से और इनसान की हैसियत से भी अपने-आपको कमतर समझने लगते हैं। यह ज़ुल्म की वह क़िस्म है जिसका ज़िक्र वे करते हुए शरमाते हैं। उसे अपनी ही तरबियत की कमी समझकर, मज़लूमियत के साथ-साथ एहसासे-जुर्म के भी शिकार हो जाते हैं। बच्चा भी, जो जवान होता है या जवानी की उम्र में दाख़िल हो रहा होता है, एक लम्बी-चौड़ी शख़्सियत का मालिक होता है, लेकिन फिर भी अपने-आपको बेबस और तन्हा महसूस करता है, क्योंकि ऐसे बच्चों को समाज भी क़बूल नहीं कर सकता।

आइए हम देखते हैं कि सिक्के का दूसरा पहलू क्या है? वह क्या वजह है कि एक नन्हा-सा प्यारा बच्चा जो अपने बचपन में माँ-बाप की आँख का तारा था और उनपर जान भी छिड़कता था, उनके बग़ैर कुछ दिन रहना भी जिसके लिए मुश्किल था, अचानक क्यों ज़ुल्म-ज़्यादती पर उतर आया है?

रवैये की ख़राबियों की जड़ इनसान के लाशुऊर में होती है। लाशुऊर में इनसान अपनी ज़िन्दगी के तमाम तजरिबे को महफ़ूज़ रखता है और यही उसके रवैये को जन्म देते हैं।

बच्चों के ज़रिए माँ-बाप पर ज़ुल्म-ज़्यादती की कई वजहें हो सकती हैं—

1. पहली वजह यह हो सकती है कि वह ख़ुद ज़ुल्म का शिकार हुआ हो। बच्चे पर कभी ज़ुल्म हुआ होगा, यह ज़ुल्म या तो घर में हुआ होगा या उसके स्कूल में टीचर या साथ पढ़नेवाले बच्चों ने किया होगा। कई बार ऐसा होता है कि एक ही क्लास या स्कूल में पढ़नेवाले बच्चे एक-दूसरे पर ज़ुल्म ढाते हैं। यह ज़ुल्म मार-पीट की सूरत में भी हो सकता है, या शदीद बेइज़्ज़ती की सूरत में भी। ऐसा ज़ुल्म इस उम्र के बच्चे के दिमाग़ पर बहुत गहरा असर छोड़ता है। वह अन्दुरूनी तौर पर बहुत बेचैन होता है। अपनी बेइज़्ज़ती बहुत शिद्दत से महसूस करता है। एक कमज़ोर बच्चा अपना ग़ुस्सा निकालने के लिए किसी और को मौजूद नहीं पाता। और एक दिन वह अपना अन्दरूनी दबाव माँ-बाप पर, ख़ास तौर पर माँ पर निकालता है। हो सकता है कि वह पहले-पहल उल्टा जवाब ही देता हो, या घर की कोई चीज़ तोड़ देता हो, मगर ऐसा करके उसको एक तरह का सुकून मिलता है, एक ख़ुशी मिलती है। तकलीफ़ की बात यह है कि उस वक़्ती ख़ुशी को वह मसले का हल समझने लगता है और दिन-ब-दिन यह ज़ुल्म बढ़ता ही जाता है।

2. माँ-बाप के साथ बद-सुलूकी (Parent Abuse) की वजह माँ-बाप के दरमियान नाचाक़ी भी हो सकती है। जिस घर में बच्चा बचपन से यह देखता है कि उसकी माँ को जिस्मानी और ज़ेहनी तौर पर तकलीफ़ पहुँचाई जाती है। उसका बाप या घर के दूसरे लोग, दादा-दादी, चाचा वग़ैरा हर ग़लती और हर नुक़सान का ज़िम्मेदार माँ को ही ठहराते हैं तो उसका नन्हा ज़ेहन भी वही क़बूल करता है जो नज़र आ रहा है। और बड़ा होकर यह नौजवान भी अपनी हर नाकामी का क़ुसूरवार अपनी माँ को ही ठहराता है। अगर घर में बाप के ज़रिए माँ को मारा-पीटा जाता है तो उस घर के बच्चे भी वही अमल सीख लेते हैं। जिस घर में माँ, बाप की इज़्ज़त न करती हो उस घर के बच्चे भी अपने बाप की इज़्ज़त नहीं करते। यह बात अब कई रिसर्चों से साबित

हो चुकी है कि माँ-बाप के रवैये बच्चों के मासूम ज़ेहनों की प्रोग्रामिंग करते हैं। अगर बच्चे घर में रोज़ाना मार-पीट देखते हुए बड़े हुए हों तो उनका ज़ेहन मार-पीट को एक नार्मल अमल के तौर पर क़बूल कर लेता है। अगर बाप अपनी बात मनवाने के लिए या अपनी नाराज़गी के इज़हार के लिए मार-पीट का रास्ता अपनाता है तो बच्चों का लाशुऊर भी, तशद्दुद और मार-पीट को अपनी बात मनवाने या अपने ग़ुस्से के इज़हार के नार्मल तरीक़े के तौर पर क़बूल कर लेता है। ज़ुल्म-ज़्यादती चाहे माँ ही पर क्यों न हो, उन्हें कोई ग़ैर-मामूली तौर पर बुरी बात महसूस नहीं होती। ज़ुल्म-ज़्यादती के बेशुमार सीन की तस्वीरें उनके लाशुऊर से इस सिलसिले में हस्सासियत (Sensitivity) को ख़त्म कर देती हैं। इसी तरह माँ अपने शौहर से या सास-ससुर से चिल्लाकर बात करती है, उन्हें बुरा-भला कहती है तो ये सीन भी बच्चे के ज़ेहन पर घर करके उसके रवैये को बनाने लगते हैं। बच्चे के लिए उसकी शुरुआती ज़िन्दगी में उसके माँ-बाप ही रोल मॉडल होते हैं और बहुत-सी बातें वह उन ही से सीखता है।

3. ज़ुल्म-ज़्यादती के सीन बच्चे के लाशुऊर पर ज़रूरी नहीं कि माँ-बाप के रवैयों ही से घर करें। उनके दूसरे सरचश्मे (स्रोत) भी हो सकते हैं। उनमें इन दिनों सबसे ऊपर मीडिया है। फ़िल्में, बच्चों के कार्टून, टीवी के सीरियल वग़ैरा सब ज़ुल्म-ज़्यादती के क़िस्सों से भरे पड़े हैं। बच्चे का मासूम ज़ेहन अच्छे और बुरे की तमीज़ नहीं करता। हो सकता है कि सीरियल में एक बहुत अच्छा हीरो एक गुंडे के साथ मार-पीट कर रहा हो, लेकिन बच्चे का लाशुऊर अच्छाई-बुराई के गहरे तसव्वुरात के बजाए सिर्फ़ मार-पीट के सीन महफ़ूज़ कर लेता है। उसे मार-धाड़ में मज़ा आने लगता है और मार-धाड़ को उसका ज़ेहन एक फ़ख़्र के क़ाबिल अमल (Heroic Act) के तौर पर क़बूल कर लेता है। आइन्दा अगर सही-ग़लत के तसव्वुरात उसके ज़ेहननशीं न हो सकें तो फिर वह हर जगह यही हरकत शुरू कर देता है और इसे नार्मल समझने लगता है। यही वजह है कि आजकल निहायत शरीफ़ और मुहज़्ज़ब ख़ानदानों के बच्चे भी ऐसी बद-सुलूकियाँ करनेवाले पाए जा रहे हैं, हालाँकि उनके घरों में लोगों के एक-दूसरे के साथ रवैये बहुत मुहज़्ज़ब और

शाइस्ता हैं।

4. माँ-बाप से बद-सुलूकी (Parent Abuse) की एक वजह बुरे लोगों में उठना-बैठना भी हो सकता है। बच्चा जब नौउम्री के क़रीब पहुँचता है तो उसकी शख़्सियत में नयापन और एडवेंचर आ जाता है। नई-नई चीज़ें वह अपनाकर देखता रहता है। ऐसे में बुरे लोगों के साथ उठना-बैठना उसे सिगरेट, अलकोहल वग़ैरा की तरफ़ भी ढकेल सकता है। इनमें से कुछ आदतें इस उम्र में इतनी पुख़्ता हो जाती हैं कि उनको पूरा करने के लिए वह किसी भी हद तक जाने के लिए तैयार रहता है। ऐसी आदतें उन्हें माँ-बाप पर ज़ुल्म करने पर मजबूर कर सकती हैं, क्योंकि अपनी उन आदतों को पूरा करने के लिए उन्हें पैसों की ज़रूरत होती है और यह ज़रूरत सिर्फ़ माँ-बाप ही पूरी कर सकते हैं। इसके अलावा उनको यह अन्देशा या डर हो सकता है कि माँ-बाप उन हरकतों से इन्हें रोकेंगे। इसलिए उनका लाशुऊर उनको माँ-बाप की बन्दिशों से आज़ाद होने पर मजबूर करता रहता है। इन निहायत ख़राब आदतों के अलावा, हद से ज़्यादा फ़ुज़ूलख़र्ची का मिज़ाज, ग़ैर-मुतवाज़िन (असन्तुलित) पार्टी कल्चर, नामुनासिब फ़ैशन, जिंसी बेराह-रवी (यौन स्वच्छन्दता) जैसी आदतें भी इस उम्र में जड़ पकड़ सकती हैं जो मार-पीट की तरफ़ माइल कर सकती हैं।

5. कुछ बच्चों में ज़ुल्म-ज़्यादती का सबब कोई सीरियस नफ़सियाती बीमारी भी हो सकती है। साइकोसिस (Psychosis) बहुत-सी नफ़सियाती बीमारियों की अलामत है। साइकोसिस में मरीज़ ग़ैर-हक़ीक़ी वाक़ियात या सीन को देखने या महसूस करने लगता है। यह सिकिज़्ज़ोफ़्रेनिया (Schizophrenia), बाइपोलर डिसआर्डर (BPD), एडीएचडी (ADHD), डिप्रेशन जैसी नफ़सियाती बीमारियों की अलामत हो सकती है। कोकीन, शराब और कुछ दवाइयों का ग़ैर-मुहतात इस्तेमाल का नतीजा भी हो सकता है। ड्रग्ज़ और नशा पैदा करनेवाली चीज़ों की कुछ क़िस्में भी ऐसे रुझान पैदा करती हैं और ब्रेन ट्यूमर वग़ैरा जैसी दिमाग़ी बीमारी भी इसका कारण बन सकती हैं। जिस्मानी बीमारियाँ भी इसका सबब बन सकती हैं।

इस रुझान की रोकथाम और इलाज

ज़रूरत इस बात की है कि हम अपने रवैयों के साथ-साथ अपने बच्चों के रवैयों पर भी नज़र रखें। हर माँ यह समझती है कि उसका बच्चा ऐसी हरकत नहीं कर सकता। वह बहुत-सी मामूली ग़लतियों को नज़रन्दाज़ कर देती है। लेकिन जब मसला फँस जाता है तो यह उसके लिए बहुत बड़ा सदमा होता है। इस वक़्त आसपास का माहौल कुछ ऐसा है कि कोई भी बच्चा इस रास्ते पर आगे बढ़ सकता है। इसलिए हर माँ-बाप की ज़िम्मेदारी है कि वे इस सिलसिले में बेदार रहें। अपने बच्चों के रवैयों पर नज़र रखें और फ़ौरन उनके सुधार व तरबियत पर तवज्जोह दें।

1. अपने बच्चों को घर में ख़ुशगवार और सेहतमन्द माहौल दें। शौहर-बीवी एक-दूसरे की इज़्ज़त करें और मुहब्बत से पेश आएँ। एक-दूसरे से गहरी मुहब्बत रखनेवाले मियाँ-बीवी के बच्चों को घर में सेहतमन्द और ख़ुशगवार फ़ितरी माहौल मिलता है। शौहर-बीवी की एक-दूसरे से गहरी मुहब्बत, उन दोनों ही की नहीं, बच्चों की भी बुनियादी ज़रूरत है। बीवी की यह ज़िम्मेदारी है कि वह अपने शौहर की इज़्ज़त करे और उसकी ज़रूरतों का ख़याल रखे। इसी तरह शौहर की भी ज़िम्मेदारी है कि वह अपनी बीवी का ख़याल रखे और उसे इज़्ज़त भी दे। इसी तरह घर में अगर बच्चों के दादा-दादी हों तो उनको भी सबकी तरफ़ से भरपूर एहतिराम, इज़्ज़त और प्यार मिले। ऐसे घर में, जहाँ माहौल पर प्यार, मुहब्बत, एतिमाद और एहतिराम की हुकूमत हो, कभी माँ-बाप के साथ बद-तमीज़ी या बद-सुलूकी नहीं हो सकती।

2. घर में तो आपने बच्चे को बहुत ही मुहब्बत-भरा माहौल दिया है और उसकी हर ज़रूरत पूरी करते हैं। वह आपका फ़रमाँबरदार बच्चा है। मगर क्या आपने कभी यह मालूम करने की ज़रूरत महसूस की है कि स्कूल में या मुहल्ले में उसको कैसा माहौल मिल रहा है? हो सकता है वह पढ़ाई में बहुत शानदार मुज़ाहरा न करता हो जिसकी वजह से वह हमेशा अपने टीचर के क़हर का निशाना बनता हो। हो सकता है किसी वजह से वह

दोस्तों में हमेशा मज़ाक़ का विषय बना रहता हो। इन सब हालात की वजह से मुमकिन है स्कूल का माहौल उसके लिए बहुत ज़्यादा तकलीफ़देह हो। मुमकिन है कि जहाँ वह फ़ुटबॉल खेलने जाता हो वहाँ पर रोज़ उसे शिकस्त होती हो और नाकामी के इस एहसास से वह अन्दर-ही-अन्दर टूट रहा हो। यह और इस तरह की दसियों वजहें हो सकती हैं जो आपके निहायत अख़लाक़वाले, मुहज़्ज़ब और शरीफ़ बच्चे को ग़ैर-महसूस तरीक़े से हिंसक रवैये की तरफ़ धकेल रही हों। घर की अच्छी तरबियत की वजह से वह काफ़ी दिनों तक अन्दर-ही-अन्दर पनप रहे उस लावे को कंट्रोल में रखता है, लेकिन एक दिन आता है जब यह लावा उसको शिकस्त देकर बाहर निकल आता है।

माँ-बाप को चाहिए कि वे कभी-कभी स्कूल जाएँ, प्रिंसपल और टीचर्स से बात करें और घर में भी अपने बच्चे से उसके स्कूल और उसके दोस्तों के बारे में बात करें, उसका हौसला बढ़ाएँ। सबसे बढ़कर यह कि अपने जिगर के टुकड़े को इज़्ज़त दें। माँ-बाप से बद-सुलूकी की अहम वजह यही होती है कि बच्चे को इज़्ज़त नहीं मिलती। अगर आप उसको इज़्ज़त देंगे, उसकी बातें सुनेंगे और उसके मसलों में दिलचस्पी लेंगे तो वक़्त पर उसके छोटे-छोटे मसलों का हल ढूँढ़ लेंगे। बाहर अगर कोई तकलीफ़ भी उसको पहुँच रही है तो आपके साथ होनेवाली बेतकल्लुफ़ बातचीत और आपका रवैया उसको ख़त्म कर देगा। जो माँ-बाप बच्चे के दोस्त बनकर रहते हैं और जिनके सामने अपने दिल की बात कहने में बच्चे को कोई हिचकिचाहट नहीं होती, वही बच्चे की ज़्यादा बेहतर तरबियत कर सकते हैं।

3. कम्प्यूटर, मोबाइल, लैपटॉप और सोशल मीडिया के इस्तेमाल पर ख़ास नज़र रखें। और कोशिश करें कि उनका इस्तेमाल मुनासिब हदों ही में हो और सेहतमन्द मक़सद के लिए हो। बच्चे क्या कार्टून वग़ैरा देख रहे हैं, उनसे माँ-बाप को वाक़िफ़ रहना चाहिए और जहाँ वे महसूस करें कि बच्चे ग़लत चीज़ें देख रहे हैं तो उनकी मुनासिब रोकथाम होनी चाहिए। मौजूदा दौर में अगर माँ सोशल मीडिया और कार्टूनों वग़ैरा के बारे में ज़रूरी जानकारी नहीं रखती और बच्चे उनमें मसरूफ़ हैं तो ऐसा घर बच्चों के

बिगाड़ के लिए बहुत साज़गार माहौल देता है।

4. बच्चों को शुरू से इस्लामी आदाब सिखाएँ। माँ-बाप का मक़ाम व मर्तबा समझाएँ। माँ-बाप से और दूसरे बड़ों के साथ रहने और बातचीत करने के आदाब की तरबियत दें। क़ुरआन, इस्लामी लिट्रेचर और अच्छी चीज़ पढ़ने का शौक़ उनमें पैदा करें। उन्हें दीनी हल्कों और तंज़ीमों से जोड़ें। दीनी तालीम व तरबियत माँ-बाप की बुनियादी ज़िम्मेदारी है। आज इस ज़िम्मेदारी की अहमियत पहले से कहीं ज़्यादा बढ़ गई है। पुरानी नस्लों को यह फ़ायदा हासिल था कि माँ-बाप की तरफ़ से ग़फ़लत भी हो तो मुस्लिम समाज बच्चों को अपनी तहज़ीबी क़द्रें और आदाब व तौर-तरीक़े सिखा देता था। आज समाज का रोल बहुत कमज़ोर हो गया है और शैतानी तहज़ीब की अलम्बरदार ताक़तों का रोल मीडिया, इंटरनेट वग़ैरा के ज़रिए बहुत ताक़तवर हो गया है। अब हमारे बच्चों को वह ताक़तवर तहज़ीबी क़िला मिला हुआ नहीं है जो हमारी नस्लों को मिला हुआ था। मस्जिद घर से दूर है। सारे रिश्तेदार दूसरे शहर या दूर-दराज़ इलाक़े में रहते हैं। पड़ोस के ख़ानदान से सिर्फ़ इतवार को अलैक-सलैक हो जाती है। लेकिन बॉलीवुड और डिज़्नीलैंड के किरदार घर में बसेरा किए बैठे हैं और सुबह-शाम उनसे मुडभेड़ होती रहती है। इन हालात में बच्चों की दीनी तरबियत के तक़ाज़े पहले से कहीं ज़्यादा ज़रूरी भी हो गए हैं और मुश्किल भी।

5. माँ-बाप इसपर भी नज़र रखें कि बच्चा किन लोगों के साथ अपना वक़्त गुज़ार रहा है और उसे नेक सुहबत हासिल करने में मदद करें। इसके लिए उसके दोस्तों से मिलें। समझदार माँ-बाप बच्चे के दोस्तों के दोस्त बन जाते हैं। उन्हें घर पर बुलाने और उनसे मिलने का एहतिमाम करते हैं। इससे इस बात को यक़ीनी बनाने में मदद मिलती है कि बच्चे को अच्छे लोगों का साथ मिल रहा है। ग़लत सुहबत की अलामतें बच्चे की चाल-ढाल, कपड़ों की पसन्द और उसकी ज़बान और लब व लहज़ा वग़ैरा के ज़रिए फ़ौरन ज़ाहिर होना शुरू हो जाती हैं। अगर उन अलामतों का वक़्त पर नोटिस न लिया जाए तो बाद में ऐसी ख़राब सुहबतों से बच्चे को आज़ाद कराना मुश्किल और उसके बाद नामुमकिन भी हो सकता है।

6. अगर बच्चे के अन्दर माँ-बाप से बद-सुलूकी की कोई अलामत महसूस हो, चाहे यह अलामत बिलकुल शुरुआती क़िस्म की क्यों न हो तो फ़ौरन उसपर ध्यान दीजिए। सबसे पहले इस मसले की जड़ और उसकी वजहों को समझने की कोशिश करनी चाहिए। जो वजहें मुमकिन हो सकती हैं उसपर पिछले पेजों में रौशनी डाली गई है। वजह को समझकर बच्चे से ठण्डे माहौल में, सब्र और ज़ब्त के साथ बात करनी चाहिए। बात करते हुए आपका अन्दाज़ ग़ैर-जज़बाती, लेकिन मज़बूत होना चाहिए। बच्चे पर यह बात अच्छी तरह वाजेह होनी चाहिए कि आप उससे मुहब्बत करती हैं लेकिन उसका यह रवैया क़बूल नहीं कर सकतीं।

अगर मसला आपके ज़रिए से क़ाबू में नहीं आ रहा है तो फ़ौरन किसी माहिर काउंसलर की मदद लेने में देर नहीं करनी चाहिए। माहिर काउंसलर बच्चे के ज़ेहन को पढ़कर उसको भी बदलने की कोशिश करेगी और आपको भी उस मसले के हल के लिए असरदार राहें सुझाएगी।

बच्चों पर तलाक़ के असरात और उनकी हिफ़ाज़त

तलाक़ का सबसे ज़्यादा नुक़सानदेह और देर तक रहनेवाला असर बच्चों पर पड़ता है। इससे उनकी ज़िन्दगी में बहुत बड़ी महरूमी पैदा हो जाती है। अल्लाह ने इनसानी ज़िन्दगी का सिस्टम ही कुछ ऐसा बनाया है कि बच्चों को माँ-बाप दोनों की ज़रूरत होती है। बच्चों की परवरिश में दोनों का अपना-अपना रोल होता है। माँ का प्यार बाप या कोई और नहीं दे सकता और इसी तरह बाप का शफ़ीक़ साया माँ नहीं दे सकती। बच्चों को न सिर्फ़ माँ और बाप दोनों की ज़रूरत होती है, बल्कि ऐसे माँ-बाप की ज़रूरत होती है जो एक-दूसरे से गहरी मुहब्बत करते हों। उनकी आपस में मुहब्बत का असर बच्चों पर भी पड़ता है। इसलिए बच्चों की परवरिश के लिए मिसाली और फ़ितरी माहौल यह होता है कि एक-दूसरे से टूटकर चाहनेवाले माँ-बाप उनके साथ रहें और मिलकर उनसे भी मुहब्बत करें। उन्हें माँ-बाप में से हर एक की मुहब्बत की ज़रूरत होती है और उस ख़ूबसूरत टीम या जोड़े की एक-दूसरे की मुहब्बत की ज़रूरत भी होती है जो दोनों मिलकर बनाते हैं। इसी फ़ितरी माहौल में बच्चों की शख़्सियतें सेहतमन्द तरीक़े या अन्दाज़ से परवान चढ़ती हैं। जो माँ-बाप छोटी-छोटी बातों पर लड़ते-झगड़ते हैं या मामूली अना के मसलों को लेकर एक-दूसरे से जुदा होते हैं, वे सबसे ज़्यादा मासूम बच्चों पर ज़ुल्म ढाते हैं। उनके बचपन के ख़ुशगवार और पुरमुसर्रत दौर को ज़हरीला कर देते हैं। और ज़िन्दगी के बिलकुल शुरुआत ही में उनकी ज़िन्दगी का मज़ा किरकिरा कर देते हैं।

तलाक़ का फ़ौरी असर यह होता है कि बच्चों के अन्दर अपनी माँ या बाप को खोने का शदीद एहसास पैदा होता है। वे शदीद तनाव का शिकार

हो जाते हैं। वे अपनी तालीम पर तवज्जोह नहीं दे पाते। बहुत-से बच्चों का तालीमी ग्राफ़ उसके बाद तेज़ी से गिरना शुरू होता है और कभी तो बहाल भी नहीं हो पाता। बहुत-से बच्चे माँ-बाप के दरमियान दूरी के लिए ख़ुद को ज़िम्मेदार समझने लगते हैं। जुर्म का यह एहसास उनके अन्दर ग़लत रुझानात पैदा करता है। वे रात को घबराकर उठ बैठते हैं। बहुत-से बच्चों का मूड बदल जाता है। वे तन्हाई में रहना पसन्द करते हैं। समाज से ख़ुद का ताल्लुक़ तोड़ लेते हैं। कुछ बच्चे शदीद ग़म का शिकार हो जाते हैं। ज़िन्दगी में मज़ा लेना छोड़ देते हैं। नाउम्मीदी, मायूसी और ग़लत और मुख़ालिफ़ सोच के शिकार हो जाते हैं। उनका दुनिया को देखने का ज़ाविया ही टेढ़ा हो जाता है।

इन फ़ौरी असरात का नोटिस नहीं लिया गया तो ये मासूम बच्चे के मिज़ाज और नफ़सियात पर गहरे असरात बनाने शुरू कर देते हैं। ऐसे बच्चों का ग़ुस्से पर क़ाबू नहीं रहता। सारी दुनिया से वे नफ़रत करने लगते हैं। मामूली बातों पर मार-पीट पर उतर आते हैं। इन्तिहाई सूरतों में ऐसे बच्चे समाज दुश्मन हिंसक प्रिय लोगों के हाथों में चले जाते हैं। कुछ बच्चों के लाशुऊर पर माँ-बाप के झगड़ों और जुदाई का यह असर होता है कि वे इनसानी ताल्लुक़ात में मुहब्बत और एतिमाद की क़द्रों पर भरोसा करना छोड़ देते हैं। न वे किसी से मुहब्बत कर पाते हैं और न किसी की मुहब्बत की क़द्र या उसपर एतिमाद कर पाते हैं। ऐसे बच्चे ख़ुद भी भविष्य में ख़ुशगवार शादीशुदा ज़िन्दगी के लायक़ नहीं रहते। अमेरिका में किए गए सर्वे के अनुसार तलाक़याफ़्ता माँ-बाप की बेटियों में तलाक़ की शरह (दर) दूसरी औरतों के मुक़ाबले में 60 प्रतिशत ज़्यादा होती है। ऐसे बच्चे ड्रग्स वग़ैरा के ज़्यादा आसानी से शिकार होते हैं। कुछ बच्चों में मुस्तक़िल नफ़सियाती बीमारियाँ जैसे डिप्रेशन या बी॰पी॰डी॰ (Bipolar Disorder) वग़ैरा पैदा हो जाते हैं। मुस्तक़िल डिप्रेशन उनके अन्दर ब्लड प्रेशर और ज़ियाबीटिस वग़ैरा जैसी जिस्मानी बीमारियों की वजह बन सकता है। उन बच्चों की पढ़ाई पर बहुत ज़्यादा असर तो बहुत आम है। वे तालीम पर ध्यान नहीं दे पाते। ज़िन्दगी की उमंग और कुछ कर गुज़रने का हौसला न होने की वजह से वे

पढ़ाई और कैरियर में भी पीछे हटना शुरू करते हैं, और उसका असर उनके भविष्य पर पड़ता है।

इस तरह तलाक़ देने और लेने से पहले शौहर और बीवी को उन सब असरात का अन्दाज़ा करना चाहिए। सुलह करानेवालों और काउंसलर की ज़िम्मेदारी है कि वह शौहर और बीवी को इन सब बातों से आगाह करे और उनको एहसास दिलाए कि वे कितना बड़ा फ़ैसला करने जा रहे हैं और उसके कितने गहरे असरात उनके बच्चों पर पड़ सकते हैं। तलाक़ का असर पूरे समाज पर पड़ता है। इसलिए समाज को भी इसकी फ़िक्र करनी चाहिए और यह पूरे समाज की ज़िम्मेदारी है कि वह शौहर और बीवी के भेदभाव को ख़त्म करके दोबारा ख़ुशगवार ज़िन्दगी शुरू करने में उनकी मदद करे। तलाक़ को तो आख़िरी सूरत में अपनाना चाहिए जब सारी कोशिशें नाकाम हो जाएँ।

लेकिन यह भी हक़ीक़त है कि ऊपर जो नुक़सान बताए गए हैं वह सिर्फ़ तलाक़याफ़्ता बच्चों को पेश नहीं आते, बल्कि उन माँ-बाप के बच्चों को भी उनका सामना करना पड़ता है जिनके दरमियान हमेशा सख़्त तनाव, गाली-गलोज और मार-पीट की सूरतेहाल रहती है। माँ-बाप के दरमियान तकलीफ़देह ताल्लुक़ात (Abusive Relationship) बच्चों के हक़ में तलाक़ से ज़्यादा नुक़सानदेह होते हैं। तलाक़ के बाद उसके असरात से बचाने के लिए कुछ-न-कुछ तदबीरें की जा सकती हैं लेकिन अगर बच्चों की सारी उम्र माँ-बाप के दरमियान शदीद क़िस्म की नाचाक़ी और झगड़ों को देखते हुए गुज़र जाए तो उसका इलाज बहुत मुश्किल होता है। इसी लिए इस्लाम ने तलाक़ का ऑपशन रखा है कि अगर ताल्लुक़ात की बेहतरी का कोई इमकान नहीं है तो अपनी और अपने बच्चों की ज़िन्दगियों को दोज़ख़ बनाने से बेहतर है कि दोनों अलग हो जाएँ।

बहरहाल वजह जो भी हो, अगर तलाक़ हो ही जाए तो अब माँ-बाप की और पूरे ख़ानदान की बल्कि पूरे समाज की यह ज़िम्मेदारी है कि वे ख़ुद को भी और अपने बच्चों को भी उसके नुक़सानदेह असरात से बचाने की फ़िक्र करें। मग़रिबी मुल्कों में इसके लिए तरबियतयाफ़्ता कउंसलरों और

नफ़सियात के माहिरों की मदद ली जाती है। इसका इन्तिज़ाम हमारे मुल्क और हमारे समाज में भी होना चाहिए। वे मौजूद न हों तो ख़ानदान के बुज़ुर्गों और समाज के ज़िम्मेदार लोगों की यह ज़िम्मेदारी है कि वे पूरे शुऊर और ज़िम्मेदारी के साथ उनकी मदद करें और उन्हें सही मश्वरे दें।

इस्लाम ज़िन्दगी गुज़ारने का एक पूरा ज़ाबिता है। हर मामले की तरह इस मामले में भी इस्लामी शरीअत ने बहुत वाज़ेह अहकाम दिए हैं। ये अहकाम हमारे ख़ालिक़ व मालिक ने हमारे मिज़ाज और नफ़सियात को सामने रखकर हमारे ही फ़ायदे के लिए दिए हैं। जो लोग काउंसलिंग का या तलाक़ लेनेवाले जोड़ों को मश्वरा देने का काम करें उन्हें इस मामले में इस्लामी अहकाम से भी वाक़िफ़ होना चाहिए और नए नफ़सियात के उसूलों और तकनीकों से भी।

अलग-अलग उम्र के बच्चों पर तलाक़ के असरात

हर उम्र के बच्चों के शुऊर और जज़बात का लेवल अलग-अलग होता है और हर उम्र की नफ़सियात भी अलग-अलग होती है। इसलिए उनके साथ मामला करते हुए उनकी उम्र का लिहाज़ करना भी ज़रूरी है। अगर घर में अलग-अलग उम्र के कई बच्चे हों तो उन सबसे उनकी उम्र के लिहाज़ से अलग-अलग रवैया अपनाना होगा। और माँ-बाप का रवैया ऐसा होना चाहिए जो उन सब बच्चों की ज़रूरत के मुताबिक़ हो।

पाँच साल से कम उम्र के बच्चे तलाक़ जैसे पेचीदा मामले को समझ ही नहीं पाते। अलबत्ता माँ-बाप लड़ते-झगड़ते हों या तलाक़ के बाद माँ या बाप बहुत ग़मज़दा और हर दम रोते या चीख़-पुकार करते रहें तो बच्चे का लाशुऊर उसका असर क़बूल करता है। ऐसे बच्चों के माँ-बाप को कोशिश करनी चाहिए कि वे हर मुमकिन हद तक बच्चे को मुत्मइन और नॉर्मल नज़र आएँ। इस उम्र के बच्चे का इनहिसार बहुत ज़्यादा अपने माँ-बाप पर होता है। ख़ास तौर पर माँ पर तो वह अपनी ज़िन्दगी की हर ज़रूरत के लिए निर्भर होता है। अगर माँ दूर हो जाए तो उसका असर बच्चे के लाशुऊर पर बहुत गहरा हो सकता है। वह समझता है कि बाप ने उसे छोड़ दिया। इसका

हल यही है कि उसके रूटीन को कम-से-कम डिस्टर्ब किया जाए। और तलाक़ के बाद भी बाप उससे बराबर मिलता रहे। उसको बाप के गले लगने, उसको प्यार करने के मौक़े मामूल के मुताबिक़ मिलते रहें। अगर उन बच्चों के मिज़ाज में अचानक बदलाव आ जाए, उनका डेवलप्मेंट रुक जाए या पीछे हो जाए (मिसाल के तौर पर वे फिर से अंगूठा चूसना शुरू कर दें या ख़ुद से बाथरूम जाना बन्द कर दें) रात को बार-बार उठने लगें या अचानक चिड़चिड़े हो जाएँ तो ये गहरे नफ़सियाती असर की निशानियाँ हो सकती हैं। ऐसी सूरत में किसी नफ़सियात के माहिर डॉक्टर की मदद लेनी चाहिए।

छह से आठ साल के बच्चे सोचना और अपने जज़बात का इज़हार करना शुरू कर देते हैं। ऐसे बच्चों को आसान तरीक़े से लेकिन साफ़-साफ़ बताइए कि क्या हो रहा है। माँ या बाप एक-दूसरे पर इलज़ाम लगाए बग़ैर सिर्फ़ इस बात की वज़ाहत कर दें कि अब वे दोनों एक-दूसरे से अलग हो रहे हैं, लेकिन बच्चे से अलग नहीं हो रहे। उसको उनकी मुहब्बत पहले की तरह मिलती रहेगी। इसके बाद ज़्यादा-से-ज़्यादा उसकी सुनें और उसके जज़बात को समझने की कोशिश करें।

नौ साल से ग्यारह साल के बच्चे चीज़ों को समझने लगते हैं। वे समझ जाते हैं कि माँ-बाप के बीच बहुत ज़्यादा तनाव है। माँ या बाप में से किसी एक को वे क़ुसूरवार ठहराना शुरू कर देते हैं। लेकिन उनका लाशुऊर फ़ैसला करने के लिए मालूमात आपके रवैयों ही से हासिल करता है। इसलिए अगर माँ-बाप उनकी ख़ुद-एतिमादी और इज़्ज़ते-नफ़्स को चोट लगने से बचाना चाहते हैं तो उन्हें एक-दूसरे की बुराई करने से बचना चाहिए। ये बच्चे तलाक़ के बाद लगातार माँ-बाप के दोबारा मिलाप के ख़ाब देखते हैं। ख़ुद को क़ुसूरवार भी समझ सकते हैं। उन्हें यह समझाने की ज़रूरत है कि इसमें तुम्हारा कोई क़ुसूर नहीं है और अब यह बदलाव हमेशा रहेगा। माँ-बाप दोबारा नहीं मिल सकते।

बारह साल की उम्र के बाद बच्चे के अन्दर आज़ादाना सोचने की सलाहियत शुरू हो जाती है। ऐसे बच्चे सवाल करते हैं। माँ-बाप के रवैयों पर तन्क़ीद (आलोचना) भी कर सकते हैं। दोनों को या किसी एक को

क़ुसूरवार ठहराते हैं और इसका इज़हार भी कर सकते हैं। इस उम्र से घर के बाहर ताल्लुक़ात पैदा होने शुरू हो जाते हैं और बच्चे दोस्तों के हल्क़ों में रहना ज़्यादा पसन्द करते हैं। एक असर यह भी हो सकता है कि वह घर में रहना कम कर दें और बाहर सुकून और मुहब्बत तलाश करना शुरू कर दें। वे यह ज़ाहिर करते हैं कि मुझे न तुम्हारी ज़रूरत है और न तुम्हारे मसलों से कोई सरोकार। लेकिन अन्दरूनी तौर पर वे भी बहुत ज़्यादा टूट-फूट का शिकार होते हैं। ऐसे बच्चों से खुले माहौल में और प्यार के साथ, उनके जज़बात का ख़याल रखते हुए और उनकी बद-तमीज़ियों को गवारा करते हुए बात करना और उनके एतिमाद को जीतना ज़रूरी होता है।

चौदह साल से ज़्यादा की उम्र यानी टीन एज नफ़सियाती लिहाज़ से सबसे मुश्किल उम्र होती है। आम हालात में भी इस उम्र के बच्चों की तरबियत सबसे मुश्किल काम है। तलाक़ के असर के मामले में भी इस उम्र के बच्चों का मसला सबसे ज़्यादा शदीद और वाज़ेह होता है। वे अपने भविष्य को लेकर परेशान हो जाते हैं। डिप्रेशन और तनाव का शिकार हो जाते हैं। माँ या बाप जो उससे दूर हो गया, उसके बारे में सोचते हैं कि अब उसको उनसे मुहब्बत नहीं रही। घर से निकलते हैं तो यह डर उनको सताता है कि वापस आने पर घर उनसे छिन न जाए। माँ-बाप के सिलसिले में या किसी एक के सिलसिले में इन्तिहाई शदीद मुख़ालिफ़ और ग़लत तसव्वुरात पैदा होने लगते हैं।

इस नफ़सियाती दबाव के नतीजे में उनके अन्दर जारहियत (आक्रामकता) बढ़ सकती है। ड्रग्स या नशे की आदत लग सकती है। वे घर से भाग सकते हैं। अगर उनके स्कूल की कारकर्दगी (Performance) बिगड़नी शुरू हो गई हो, रोज़ाना की सरगर्मियों में उनकी दिलचस्पी कम हो रही हो, वे ख़ामोश-ख़ामोश रहने लगे हों या ख़ुद को नुक़सान पहुँचानेवाले काम करने लगे हों तो फ़ौरन नफ़सियात के माहिर की मदद लेनी चाहिए।

बुरे असर से बचाने की तदबीरें

तलाक़ से पहले या उसके बाद बच्चों के सिलसिले में माँ-बाप को किन

बातों का ख़याल रखना चाहिए, इसके सिलसिले में कुछ मश्वरे नीचे दिए जा रहे हैं। इन मश्वरों पर अमल हो तो इसका इमकान है कि बच्चों पर तलाक़ के बुरे असर कम-से-कम हों और वे भी दूसरे बच्चों की तरह नॉर्मल ज़िन्दगी गुज़ार सकें। तलाक़ लेनेवाले माँ-बाप को इन बातों की ज़रूरी तरबियत दी जानी चाहिए—

(1) बच्चों को तलाक़ के बारे में वक़्त से पहले बताएँ। यह नफ़सियात का बुनियादी उसूल है कि अचानक पहुँचनेवाले सदमे का नफ़सियाती नुक़सान ज़्यादा होता है। किसी दुर्घटना में अचानक मरनेवाले जवान आदमी के रिश्तेदारों को जो सदमा पहुँचता है, वह उससे कहीं ज़्यादा होता है जो एक कैंसर के मरीज़ की मौत से होता है। इसलिए बच्चों को पहले ही से बताया जाए कि अब उनके अम्मी-अब्बू एक-दूसरे से जुदा हो रहे हैं। यह बात माँ भी प्यार और मुहब्बत से बताए और बाप भी बताए। उनके ज़ेहन में यह बात भी बिठाई जाए कि इस जुदाई की वजह वह यानी बच्चा नहीं है और इसमें उसका कोई क़ुसूर नहीं है। माँ-बाप की यह भी कोशिश होनी चाहिए कि यह ख़बर देते हुए एक-दूसरे की बुराई न करें और न एक-दूसरे को इसका ज़िम्मेदार ठहराएँ। यह एक मुश्किल काम है। लेकिन बच्चों के भविष्य के लिए माँ-बाप को कम-से-कम यह मुश्किल ज़रूर बरदाश्त करनी चाहिए और उसकी तरबियत उनको दी जानी चाहिए।

(2) बच्चे की कस्टडी (Custody) को लेकर झगड़ों और मुक़दमेबाज़ियों से बचें। यह बच्चे के लिए सबसे ज़्यादा नुक़सान देनेवाली चीज़ होती है। वह अगर माँ-बाप के दरमियान झगड़े के लिए ख़ुद को ज़िम्मेदार समझने लगे तो यह एहसास उसकी शख़्सियत को बरबाद करके रख सकता है। बदक़िस्मती से आमतौर पर यही होता है कि तलाक़ के बाद माँ-बाप बच्चे की कस्टडी के लिए झगड़े शुरू कर देते हैं। और बच्चे को लेकर मारपीट, मुक़द्दमा और पुलिस, इन सबकी नौबत आ जाती है। बच्चा दोनों के दरमियान फ़ुटबॉल बना रहता है और इस दौरान ऐसी नफ़सियाती हालतों से गुज़रता है जो उसकी ख़ुद-एतिमादी, इज़्ज़ते-नफ़्स और ज़िन्दगी के जोश और उमंग को बुरी तरह मसलकर रख देते हैं। काश कि माँ-बाप समझें कि

ऐसा करके वे अपने बच्चे पर कितना बड़ा ज़ुल्म ढा रहे हैं जिसकी भरपाई मुमकिन नहीं है! यह इस्लाम की तालीम से दूरी का नतीजा है। इस्लाम ने इस सिलसिले में बहुत वाज़ेह तालीम दी है। बच्चे की कस्टडी या तरबियत के अहकाम फ़िक़्ह की हर किताब में मिल जाते हैं। शरीअत ने छोटे बच्चों यानी सात साल से कम उम्र के लड़कों या नाबालिग़ लड़कियों की कस्टडी या तरबियत के लिए औरतों को तरजीह दी है। यह माँ का हक़ है और माँ न हो तो उसके बाद नानी, फिर दादी, फिर बहन और फिर ख़ाला का हक़ है। बच्चे की देखभाल का ख़र्च उसके बाप के ज़िम्मे है। इन मामलों में कुछ फ़िक़्ही इख़्तिलाफ़ भी हैं। यहाँ फ़िक़्ही मसले बयान करना मक़सद नहीं है, बल्कि सिर्फ़ यह बताना मक़सद है कि इस सिलसिले में वाज़ेह अहकाम शरीअत ने दिए हैं। और एक मुसलमान के लिए इस मसले पर किसी झगड़े की न ज़रूरत है और न गुंजाइश। शरीअत के अहकाम की पाबन्दी की जाएगी तो ऐसे झगड़ों की नौबत ही नहीं आएगी, जो बच्चे पर बुरा असर डालते हैं।

(3) बच्चे को माँ-बाप दोनों के साथ वक़्त गुज़ारने का मौक़ा मिले। अगर बच्चा माँ के पास रह रहा हो तब भी उसे बाप के साथ भी वक़्त गुज़ारने का मौक़ा मिलना चाहिए। माँ को यह समझना चाहिए कि यह बच्चे का हक़ भी है और उसकी अहम नफ़सियाती ज़रूरत भी। बाप की शफ़क़त के साए से वह महरूम रहेगा तो उसकी शख़्सियत पर इसका असर पड़ेगा। तलाक़ से शौहर और बीवी का आपसी रिश्ता ख़त्म हुआ है, न बाप-बेटे का रिश्ता ख़त्म हुआ है और न माँ-बेटे का। बाप की ज़िन्दगी में अपने बेटे को यतीमी की ज़िन्दगी पर मजबूर करनेवाली माँ कोई अच्छी माँ नहीं हो सकती। बाप (या माँ) से मुलाक़ात और उसके साथ वक़्त-गुज़ारी के लिए बाक़ायदा शेड्यूल और उसूल तय किए जा सकते हैं। बाप को यह हक़ भी मिलना चाहिए कि वह बच्चे को तोहफ़े भी दे, उसे खिलाए-पिलाए, उसकी ख़ुशियों में शरीक हो। अगर बच्चा बाप से मिलने गया है तो माँ को हरगिज़ यह ज़ाहिर नहीं करना चाहिए कि इससे उसे दुख हुआ है। अगर माँ-बाप, एक-दूसरे से मिलने पर बच्चे से नाराज़ हो जाएँ या बच्चे को लगे कि यह

मुलाक़ात माँ या बाप को पसन्द नहीं है तो उसका असर भी बच्चे पर बहुत बुरा पड़ता है।

इस्लाम ने इसे ज़रूरी क़रार दिया है कि तलाक़ के बाद भी बच्चे को माँ और बाप दोनों के साथ वक़्त गुज़ारने का और उनकी मुहब्बतों और शफ़क़तों से फ़ायदा उठाने का मौक़ा मिलता रहे। कस्टडी या तरबियत माँ के ज़िम्मे और ख़र्चा बाप के ज़िम्मे करके इस्लाम ने इसका ऐसा ज़बरदस्त इन्तिज़ाम किया है कि बच्चे का ताल्लुक़ दोनों से हमेशा बरक़रार रहे।

(4) माँ-बाप एक-दूसरे की बुराई न करें और न एक-दूसरे की शख़्सियतों को बच्चे की नज़रों में ख़राब होने दें। यह बात सही है कि शौहर और बीवी की एक-दूसरे से जुदाई आमतौर पर शदीद झगड़े, लड़ाई और अना के टकराव के नतीजे में होती है। ऐसी सूरत में अकसर अक़्ल अंधी हो जाती है। दूसरी पार्टी की कोई ख़ूबी दिखाई नहीं देती और वह सरासर फ़ितना लगती है। इस माहौल में यह बहुत मुश्किल है कि एक-दूसरे की बुराई बयान करने से ख़ुद को रोका जाए। लेकिन यह भी बच्चे की बड़ी ज़रूरत है। पिछले शौहर की हैसियत औरत के लिए तो एक ऐसे नापसन्दीदा मर्द की है जिसके साथ उसका निबाह न हो सका। लेकिन उसके बच्चे के लिए वह बहरहाल उसका बाप है, जिसके असर वह हर हाल में क़बूल करेगा। अगर बाप की बहुत ख़राब तस्वीर बच्चे के लाशुऊर में बैठ जाए तो वह एक ख़राब इनसान के बेटे के तौर पर ही परवरिश पाएगा। इन ख़राबियों को, जिनका सही या ग़लत तौर पर लगातार ज़िक्र हो रहा हो, उसका लाशुऊर ख़ानदानी ख़राबियों के तौर पर क़बूल करेगा और बाप की पैरवी में यह सही या फ़र्ज़ी ख़राबियाँ उसकी शख़्सियत का हिस्सा बनेंगी। बाप से नफ़रत या उसके बारे में लाशुऊर में ग़लत तस्वीर किसी भी बच्चे की नफ़्सियात पर कोई अच्छा असर नहीं छोड़ती। यही वजह है कि हमको तारीख़ में ऐसी महान औरतों के क़िस्से भी मिलते हैं जिन्होंने ज़िन्दगी-भर अपने ज़ालिम, वहशी, लुटेरे, शराबी या आदी मुजरिम शौहर की ख़राबियों को अपने बच्चों से छिपाए रखा और कोशिश की कि इन ख़राबियों का कोई असर उनके बच्चों पर न पड़े। बच्चे अपने बाप के अच्छे पहलुओं को तो

जानें लेकिन ख़राब पहलू उनकी निगाह से ओझल ही रहें।

यही मामला शौहर का भी है। वह अगर अपनी तलाक़ दी हुई बीवी के लिए नफ़रत अपने बच्चों में पैदा करता है तो अस्ल में उनके अन्दर अपनी माँ से नफ़रत पैदा करता है, बावजूद यह कि ऐसी नफ़रत की बुनियादें सही हैं या ग़लत, माँ से नफ़रत ख़ुद एक बुराई और एक नफ़सियाती कमी है और बहुत-सी नफ़सियाती बीमारियों की वजह भी।

इसलिए माँ-बाप को यह समझाया जाए कि अब उनका रिश्ता ख़त्म हो गया है। वे एक-दूसरे के लिए अजनबी हैं। एक-दूसरे की बुराई से उन्हें कुछ हासिल नहीं होगा। अलबत्ता उनके बच्चों का बहुत कुछ छिन जाएगा।

(5) बच्चों को ज़्यादा-से-ज़्यादा तामीरी और नेक कामों में मसरूफ़ रखा जाए। उनको अच्छा माहौल दिया जाए। उनके जज़बात का ख़ास तौर पर ख़याल रखा जाए। यह ज़रूरत तमाम बच्चों की है। लेकिन चूँकि माँ-बाप की जुदाई के सदमे की वजह से तलाक़शुदा माँ-बाप के बच्चे ज़्यादा हस्सास और ज़्यादा नाज़ुक तबीअत के होते हैं इसलिए उनके सिलसिले में इन बातों का और ज़्यादा ख़याल रखने की ज़रूरत है।

काउंसलिंग

काउंसलिंग क्या, क्यों और कैसे?

इनसान एक जज़बाती मख़लूक़ है। जज़बात और एहसासात को महसूस करने की सलाहियत इनसान को दी गई अहम सलाहियतों में से एक है। इनसान की शख़्सियत के बनने में उसके जज़बात व एहसासात का बहुत अहम रोल होता है। जहाँ नेक और अच्छे जज़बात इनसान को ख़ुश व ख़ुर्रम और कामयाब बनाने में अहम रोल अदा करते हैं वहीं मुख़ालिफ़ और ग़लत जज़बात व एहसासात इनसान की ज़िन्दगी को जहन्नम बना देते हैं। कुछ मुख़ालिफ़ और ग़लत जज़बात हमारी ज़िन्दगी को ही नहीं, हमारे साथ रहनेवाले दूसरे लोगों की ज़िन्दगियों को भी जहन्नम बना देने की ताक़त रखते हैं।

ऐसे मुख़ालिफ़ जज़बात कई वजहों से पैदा होते हैं। कुछ वजहें वे भी होती हैं जिनका हमें पता भी नहीं होता। कभी-कभी हादिसे, नाख़ुशगवार क़िस्से, नाकामियाँ, बीमारियाँ, झगड़े वग़ैरा भी ऐसे मुख़ालिफ़ और ग़लत जज़बात पैदा कर देते हैं। ये जज़बात और एहसासात हमारे लिए मजबूरी बन जाते हैं। इनसे हमारी शख़्सियत को ग्रहण लग जाता है। ज़िन्दगी की ख़ुशियाँ माँद पड़ जाती हैं। आगे बढ़ने और मुक़ाबला करने की उमंग और जज़बा ठण्डा पड़ जाता है। हमारी सलाहियतों को ज़ंग लगने लगता है। ज़िन्दगी बोझ बन जाती है। दूसरे इनसानों से हमारे रिश्तों और ताल्लुक़ात में तलख़ियाँ पैदा होने लगती हैं। धीरे-धीरे हम अपने रवैयों से साथ रहनेवालों और अपने चाहनेवालों की ज़िन्दगियों का मज़ा भी फीका करने लगते हैं। बहुत-से नफ़सियाती मसले जिस्मानी कमज़ोरियों और बीमारियों का भी ज़रिआ बनते हैं। इन मसलों के नतीजे में हमारी ताक़त और बरदाश्त करने की क़ुव्वत भी कम हो जाती है। शुगर, ब्लड प्रेशर, दिल की बीमारियाँ

बल्कि कैंसर जैसी बीमारियों के भी बहुत-से केसों में नफ़सियाती वजहें होती हैं। इसलिए नफ़सियाती बीमारी एक तबाह करनेवाली बीमारी है और एक तरह का ख़ामोश क़ातिल (Silent Killer) है। इससे छुटकारा पाने की हर वक़्त और हर मुमकिन कोशिश करनी चाहिए।

पुराने ज़माने में दूसरे मामलात की तरह ऐसी नफ़सियाती बीमारियों का इलाज भी हमारी नानियों और दादियों के पास हुआ करता था। वे अपने पुराने देसी तरीक़ों से, घरेलू टोटकों और नुस्ख़ों से हमारी कमज़ोरियों का इलाज कर देती थीं और ख़ुशगवार और ख़ुशियों से भरी ज़िन्दगियों के राज़ सिर्फ़ बताती नहीं थीं, बल्कि उन्हें हमारी शख़्सियत का हिस्सा बना देती थीं। ज़माने की सख़्तियों से, यह रिवायती रोल कमज़ोर पड़ गया है। आधुनिक ज़िन्दगी की भाग-दौड़ और कश्मकश ने नफ़सियाती मसलों की पेचीदगी कई गुना बढ़ा दी और अब उनके हल का काम भी ज़िन्दगी की दूसरी बहुत-सी ज़रूरतों की तरह, फ़न के माहिर प्रोफ़ेशनल की मदद के बग़ैर मुमकिन नहीं रहा।

नफ़सियाती बीमारियाँ क्या हैं?

रिवायती समाजों में नफ़सियाती बीमारियों को लेकर एक तरह की शर्म का एहसास पाया जाता है और यह समझा जाता है कि नफ़सियाती डॉक्टर के पास जानेवाला हर आदमी पागल या पागल जैसा होता है। यह निहायत ग़लत सोच है और जहालत की पैदावार है। छोटे-मोटे नफ़सियाती मसले, जाड़े-बुख़ार की तरह हर इनसान की ज़िन्दगी में आते हैं। और जाड़े-बुख़ार ही की तरह हमको वक़्ती तौर पर कमज़ोर कर देते हैं। उनका फ़ौरन इलाज न किया जाए तो वह हमारी शख़्सियत का नासूर बनने लगते हैं। इसलिए उनपर फ़ौरन तवज्जोह देना चाहिए और उनके इलाज के लिए माहिर लोगों के पास जाने में कोई परेशानी महसूस नहीं करनी चाहिए।

नफ़सियाती मसलों की कई क़िस्में होती हैं। कुछ मसले वे हैं जिन्हें बाक़ायदा बीमारी (Disorder) के तौर पर तस्लीम किया गया है। तनाव (Stress), परेशानी (Anxiety), दो कुतबियत (BPD), स्कीज़ोफ़्रेनिया (Schizophrenia), ख़ौफ़ (Phobias), अलज़ाइमर, जुनून व दीवानगी, दौरे वग़ैरा

बीमारियाँ हैं। उनके इलाज के लिए अकसर दवाओं की भी ज़रूरत पड़ती है। लेकिन उनके अलावा मायूसी, ग़ुस्से में शिद्दत, ग़म, मूड में तब्दीली, बुरे ख़यालात व रुझानात, एतिमाद की कमी, जुर्म का एहसास, ख़याली अन्देशे, वहम, शक, चिड़चिड़ापन, ग़ैर-मुस्तक़िल मिज़ाजी, हसद व जलन, बोरियत, एहसासे-महरूमी, एहसासे-ज़िल्लत व तौहीन, नफ़रत, बेबसी, दिल शिकस्तगी, कोई भी काम करने में हिचकिचाहट, एहसासे-तंहाई, शर्म, बच्चों में तालीम से दिलचस्पी में कमी, सीखने की रफ़्तार का सुस्त पड़ जाना वग़ैरा दरजनों कैफ़ियतें हैं जो हमको नुक़सान पहुँचाती हैं। हर शख़्स को अपनी ज़िन्दगी में इन एहसासात का सामना करना पड़ता है। हर शख़्स की ज़िन्दगी में ऐसे क़िस्से पेश आते हैं जो इन एहसासों को जन्म देते हैं। अकसर ये एहसासात वक़्ती होते हैं और हम ख़ुद ही इनसे निमट लेते हैं या वक़्त के साथ इनकी शिद्दत ख़त्म हो जाती है। लेकिन कभी-कभी ये क़िस्से हमारे जज़बात पर गहरे असर डालते हैं। इन असरात का हम मुक़ाबला नहीं कर पाते और इनमें से कोई एहसास हमारी शख़्सियत का हिस्सा बनने लगता है। कई बार हमको क़िस्सा मालूम भी नहीं रहता। कई बार देखने में बहुत छोटा क़िस्सा होता है, लेकिन वह हमारी शख़्सियत को गहरा ज़ख़्म लगा देता है। ऐसी सूरत में किसी नफ़सियात के माहिर की मदद ज़रूरी हो जाती है। ख़ुलासे के तौर पर कहा जा सकता है कि नीचे दी गई सूरतों में किसी अच्छे काउंसलर की मदद लेनी चाहिए।

(1) सेहत की ख़राबी या बीमारी

बहुत-सी बीमारियों में आदमी न सिर्फ़ उस बीमारी से जिस्मानी तौर पर मुतास्सिर होता है, बल्कि नफ़सियाती तौर पर भी बहुत कमज़ोर हो जाता है। इन हालात में उसे नफ़सियाती मदद मिल जाए तो उस बीमारी को क़बूल करने और उससे लड़ने में उसे काफ़ी मदद मिल सकती है। अगर आदमी के अन्दर इरादे की ताक़त मज़बूत हो तो बीमारी से मुक़ाबला करने और स्वस्थ होने के इमकान बढ़ जाते हैं। बलड प्रेशर, शुगर, मुटापा वग़ैरा आम बीमारियों से लेकर कैंसर वग़ैरा जैसी जानलेवा बीमारियों तक, अगर कोई भी बीमारी किसी के सुकून को ख़त्म कर रही है तो उसे काउंसलिंग से फ़ायदा होता है।

(2) नफ़सियाती बीमारी

ग़ुस्सा, तनाव, परेशानी, वग़ैरा जैसे मसले भी काउंसलिंग के ज़रिए हल हो सकते हैं।

(3) बेहतरीन ताल्लुक़ात के लिए

शादीशुदा ज़िन्दगी में बेहतरीन ताल्लुक़ात की बहुत अहमियत होती है। अगर किसी वजह से इस रिश्ते में दराड़ बढ़ गई हो तो काउंसलिंग की मदद से उसको दूर किया जा सकता है। मियाँ-बीवी के रिश्तों के अलावा माँ-बाप और बच्चों के दरमियान या किसी भी और इनसानी रिश्ते में भी काउंसलिंग की मदद से बेहतरी लाई जा सकती है।

(4) लत (Addiction)

जब किसी आदमी को हम किसी आदत में मुब्तला पाते हैं जो जिस्मानी, नफ़सियाती या अख़लाक़ी नुक़सान की वजह बन रही हो तो हमें यह जान लेना चाहिए कि वह आदमी किसी नफ़सियाती दबाव से भी उलझ रहा है। काउंसलिंग के ज़रिए मसले की जड़ तक पहुँचकर उसे हल किया जा सकता है। बहुत-सारी ख़राब आदतें जैसे शराब पीना, सिगरेट पीना, खाने-पीने और सोने-जागने की ख़राब आदतें वग़ैरा इनसान को सख़्त नुक़सान पहुँचाती हैं। अब कम्प्यूटर गेम और सोशल मीडिया की लत वग़ैरा को भी बीमारी समझा जा रहा है। बल्कि नाख़ून कतरना, बैठे-बैठे ज़ोर-ज़ोर से पैर हिलाना, जिंसे-मुख़ालिफ़ (विपरीत लिंग) के फ़र्द को घूरना वग़ैरा जैसी आदतें भी गहरी नफ़सियाती बीमारी की तरफ़ इशारा करती हैं।

(5) किसी अपने को खोने का ग़म (Bereavement)

अपने किसी क़रीबी को खो देना एक बहुत बड़ा हादिसा होता है। मौत की वजह से या रिश्ते में दराड़ और तलाक़ वग़ैरा की वजह से अगर किसी का क़रीबी जुदा हो गया तो उसका गहरा नफ़सियाती असर पड़ता है। अगर वे उस हादिसे से बाहर न निकलें तो उसका असर उनकी ज़िन्दगी के हर हिस्से में देखने को मिलता है। यह असर बच्चों पर बहुत गहरा होता है।

(6) सताने का अमल (Bullying)

घरेलू हिंसा का असर न सिर्फ़ जिस्मानी होता है, बल्कि नफ़सियाती भी होता है। बच्चों में भी इस क़िस्म के क़िस्से बहुत आम हो रहे हैं। स्कूल और घर में वे ज़ुल्म का निशाना बनते हैं और अपना मसला किसी से भी बताया नहीं करते। अगर यहाँ पर काउंसलर से मदद लें तो उन मसलों पर कंट्रोल किया जा सकता है। औरतों पर किसी भी क़िस्म और किसी भी तरह की जिंसी हरासानी बहुत गहरा असर डालती है। बहुत-सी औरतें इस मसले को भी किसी के सामने बयान नहीं कर पातीं।

इनके अलावा आदमी तिजारती या पेशावाराना ज़िन्दगी में किसी बड़े नुक़सान या नाकामी से दोचार हो जाए, उससे कोई जुर्म, किसी पर ज़ुल्म या नाइनसाफ़ी या गुनाह हो जाए, कोई इलज़ाम लगे या बदनामी हो जाए, किसी क़रीबी शख़्स के ज़रिए एतिमाद ज़ख़्मी हो जाए, कोई हादिसा हो जाए या किसी बड़े हादिसे को वह अपनी आँखों से देखे, इस तरह की दसियों सूरतें हैं जो आदमी को वक़्ती तौर पर शदीद नफ़सियाती मसले से दोचार कर सकती हैं। इन मसलों के हल के लिए फ़ौरी काउंसलर से मिलना चाहिए, वरना ये नासूर बनते हैं और हमारी शख़्सियत को लगातार ज़ख़्मी कर सकते हैं।

काउंसलिंग क्या है?

ज़िक्र किए गए मसलों के हल के लिए जब आप नफ़सियात के माहिर या इस तरह के मसले के हल के किसी तरीक़े के माहिर से मिलते हैं तो आपका साबिक़ा इलाज के मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से पेश आता है।

(1) साईकोथेरेपी

साईकोथेरेपी (मनोचिकित्सक, Psychiatrist) ज़्यादातर उन मसलों में इस्तेमाल होती है जिन्हें मेडिकल साइंस बीमारी समझती है। साईक्याट्रिस्ट (मनोचिकित्सक) जो एक डॉक्टर होता है, आमतौर पर दवाओं के ज़रिए उनका इलाज करता है। यह समझा जाता है कि इन मसलों की वजह हमारे जिस्म में कीमियाई तवाज़ुन का न होना है। कोई कीमियाई माद्दा या हार्मोन

कम या ज़्यादा हो गया है जिसकी वजह से ये मसले पैदा हुए हैं। दवाओं की मदद से इस बैलेंस को दोबारा क़ायम करने की कोशिश की जाती है। आमतौर पर इलाज का यह तरीक़ा ज़्यादा सीरियस मसले में उस वक़्त इख़्तियार किया जाता है जब दूसरे तरीक़े काम के न हों। इस तरह का इलाज एक माहिर मेडिकल प्रोफ़ेशनल यानी साइक्याट्रिस्ट ही कर सकता है। साइक्याट्री में इस्तेमाल होनेवाली दवाओं को माहिर डॉक्टर के मश्वरे के बग़ैर हरगिज़ इस्तेमाल नहीं करना चाहिए।

(2) काउंसलिंग

दूसरा तरीक़ा काउंसलिंग है। काउंसलिंग में ज़्यादातर टाक थेरेपी इख़्तियार की जाती है यानी बातों के ज़रिए इलाज। काउंसलिंग के अमल में कौंसलर क्लाइंट (यानी वह आदमी जो नफ़सियाती मसले के हल के लिए उससे मिला है) एक ख़ास रिश्ता क़ायम करते हैं। काउंसलर उसकी बात सुनकर अपने ख़ास सवालों और गुफ़्तगू के ख़ास तरीक़े के ज़रिए से उसके मसले की गहराई में जाता है और उस मसले की वजहों को समझता है और उसकी रौशनी में क्लाइंट से ऐसी बातें करता है, उसपर ऐसे तरीक़े आज़माता है और उसे ऐसे मश्वरे देता है जिनके ज़रिए से क्लाइंट जज़बाती तौर पर मज़बूत हो सके। हर इनसान के अन्दर बेहतर और ख़ुशहाल ज़िन्दगी के लिए ज़रूरी बहुत-से ज़रिए अल्लाह ने पैदा कर दिए हैं। इस ज़रिओं के इस्तेमाल न करने की वजह से हम परेशानियों का शिकार हो जाते हैं। काउंसलर का काम उन ज़रिओं की पहचान करना और उन्हें अमल में लाने में क्लाइंट की मदद करना होता है। काउंसलर अपनी बातों और कुछ और ख़ास तरीक़ों से आपकी छिपी हुई ताक़तों को बेदार करता है। ग़लत और नुक़सानदेह चीज़ों से आपकी तवज्जोह हटाकर फ़ायदेमन्द और सकारात्मक बातों पर फ़ोकस करने की लियाक़त पैदा करता है।

(3) कोचिंग

एक तीसरा तरीक़ा वह है जिसे कोचिंग कहा जाता है। कोचिंग में नतीजों (Outcomes) पर तवज्जोह दी जाती है। आदमी किसी माहिर कोच की निगरानी व रहनुमाई में अपने लिए लक्ष्य तय करता है। लाइफ़ कोचिंग

के अमल में ये लक्ष्य ज़िन्दगी को बेहतर बनाने के बारे में होते हैं। उनका ताल्लुक़ मिजाज़ में किसी तब्दीली के बारे में हो सकता है, जज़बाती सेहत को बेहतर बनाने के बारे में हो सकता है, आदतों पर क़ाबू पाने के बारे में हो सकता है। बीवी से, बच्चों से या किसी और इनसान से ताल्लुक़ को बेहतर बनाने के बारे में हो सकता है। यानी कि ज़िन्दगी को बेहतर बनाने के बारे में कोई भी लक्ष्य हो सकता है। क्लाइंट, कोच की मदद से उन लक्ष्यों को तैयार करता है और उसी की मदद से उन्हें हासिल करने की मंसूबाबन्द कोशिश कर सकता है। मिसाल के तौर पर सिगरेट पीने की आदत छोड़ने का लक्ष्य, ग़ुस्से पर कंट्रोल करने का लक्ष्य, ख़ुद-एतिमादी के साथ स्टेज पर प्रदर्शन करने का लक्ष्य, शौहर और बीवी के साथ लड़ाई-झगड़ों को ख़त्म करने का लक्ष्य वग़ैरा। काउंसलिंग में ज़्यादातर तवज्जोह माज़ी (अतीत) के ज़ख़्मों को भरने पर होती है। जबकि कोचिंग में भविष्य को बेहतर बनाने पर। कोचिंग में अस्ल में क्लाइंट ख़ुद अपनी तामीर व तरक़्क़ी पर तवज्जोह करता है और कोच सिर्फ़ उसकी मदद व रहनुमाई करता है।

काउंसलिंग कैसे की जाती है?

जब आप पहली बार किसी काउंसलर के पास जाते हैं तो पहली मुलाक़ात में काउंसलर आपको और आपके मसले को समझने की कोशिश करता है। आमतौर पर पहली मुलाक़ात में एक आध घंटे की बातचीत होती है। सबसे पहले यह पूछा जाता है कि आप किस मसले की वजह से उसके पास आए हैं। यह सवाल आपको मौक़ा देता है कि आप तफ़सील से अपना मसला बयान करें और अपने दिल की बातें रखें। काउंसलर इस मुलाक़ात में आपकी ज़ाती ज़िन्दगी और आपकी पर्सनल हिस्ट्री के बारे में सवाल कर सकता है। आपकी आदतों, मिज़ाज और ज़िन्दगी के तरीक़ों को समझने की कोशिश कर सकता है। कभी-कभी मसले को समझने के लिए ही एक से ज़्यादा सेशन चाहिए होते हैं।

दूसरे मरहले में आमतौर से टेस्ट कराए जाते हैं। बहुत-से काउंसलर पहले साईकोमेट्रिक टेस्ट कराते हैं, जिससे आपकी शख़्सियत और मिज़ाज की ख़ासियतों को समझने में मदद मिलती है। उसके बाद आपके मसले और

काउंसलर के अप्रोच के मुताबिक़ दूसरे टेस्ट भी हो सकते हैं। साइक्याट्रिस्ट है तो मेडिकल टेस्ट भी करा सकता है। दूसरे लोग दूसरे नफ़सियाती टेस्ट कराते हैं। टेस्ट कराने से पहले आमतौर पर काउंसलर उसके मक़सद वग़ैरा के बारे में आपको ज़रूरी मालूमात भी देता है।

इसके बाद का मरहला इलाज का होता है। साइक्याट्रिस्ट दवाओं का इस्तेमाल करता है, जबकि दूसरे काउंसलर बातचीत और दूसरे नफ़सियाती तरीक़े इस्तेमाल करके इलाज करते हैं। अकसर इलाज का यह अमल इन्फ़िरादी मुलाक़ातों के अन्दर होता है जिसमें आप काउंसलर के साथ तन्हा बैठते हैं, लेकिन कभी-कभी ग्रुप थेरेपी की ज़रूरत पेश आती है, ख़ास तौर पर उन मसलों में जिनका ताल्लुक़ दूसरे लोगों से समाजी रब्त, कम्यूनिकेशन वग़ैरा से है। ऐसी सूरत में ग्रुप थेरेपी के किसी सेशन में आने के लिए कहा जा सकता है। शौहर-बीवी के ताल्लुक़ात के मसलों के बारे में काउंसलर वन टू वन काउंसलिंग भी करते हैं और दोनों को साथ बिठाकर भी बात करते हैं। जैसे-जैसे इलाज आगे बढ़ता है, आपके अन्दर हो रहे बदलाव को समझने के लिए मज़ीद टेस्ट कराए जा सकते हैं।

आजकल अकसर काउंसलर वाज़ेह तौर पर इलाज के लक्ष्यों को तय करते हैं। मिसाल के तौर पर यह कि दस सेशन के बाद आपकी तम्बाकू की आदत छूट जानी चाहिए या आपको रात को सुकून की नींद आनी चाहिए वग़ैरा। उन लक्ष्यों को तय करने में मरीज़ को सरगर्म हिस्सा लेना चाहिए। इसी तरह जो सवाल पूछे जाएँ, चाहे वे ज़बानी गुफ़्तगू में हों या टेस्ट के दौरान, उनके सही-सही और बिलकुल दुरुस्त (Accurate) जवाब देने की कोशिश करनी चाहिए। खुलकर बात करना चाहिए। आपकी बातों ही से आपके मसले को पहचानने में मदद मिलती है। इसलिए आप अपने काउंसलर पर जितना एतिमाद करेंगे और जितनी खुलकर बात करेंगे, आपके मसले का हल उतना ही आसान होगा। प्रोफ़ेश्नल काउंसलर आपके राज़ों की हिफ़ाज़त करते हैं और ग़ैर-ज़रूरी, हस्सास ज़ाती मालूमात ख़ुद भी हासिल करने की कोशिश नहीं करते। वही मालूमात चाहते हैं जो आपके मसले की पहचान करने या उसके इलाज के लिए ज़रूरी हों।

अपने जज़बात और रवैये को बदलना एक मुश्किल काम है। आपको उसके लिए कमिटमेंट का मुज़ाहरा करना होगा। पाबन्दी से सेशन करना, काउंसलर से बात करते हुए सही-सही और दुरुस्त मालूमात देना और उसके मश्वरों पर अमल करने की हर मुमकिन कोशिश करना, किसी बात पर अमल न हो सके तो उसका इक़रार करना और उसको अमल में लाने के लिए उसकी मदद माँगना वग़ैरा वे ज़रूरी शर्तें हैं जिन्हें मरीज़ को पूरा करना होता है।

यह भी ज़रूरी है कि आप इलाज के पूरे अमल से अच्छी तरह वाक़िफ़ हों। इसके लिए आपको ख़ुद भी सवालात करने चाहिएँ और इलाज के तरीक़े, दौरानिया, चाहे जानेवाले नतीजे, इलाज के कामयाबी के इमकान, इलाज का तरीक़ा व अप्रोच वग़ैरा पर खुलकर सवाल करना चाहिए।

आमने-सामने (Face to face) काउंसलिंग

काउंसलिंग का असरदार तरीक़ा यही है कि आप काउंसलर से वक़्त लेकर उसके ऑफ़िस में जाकर मुलाक़ात करें। क्योंकि वहाँ आपको एक साज़गार माहौल मिलता है। काउंसलर के ऑफ़िस का माहौल ही इस तरह डिज़ाइन किया जाता है कि यहाँ आपको एतिमाद का एहसास होने लगता है। काउंसलर को भी आमने-सामने मुलाक़ात में आपकी बॉडी लैंगवेज, आपके चेहरे के हाव-भाव, आँखों की हरकतों वग़ैरा के ज़रिए आपके हक़ीक़ी जज़बात और उनके हवाले से आपके मसले को समझने में मदद मिलती है।

टेलीकाउंसलिंग (Telecounselling)

यह तरीक़ा उन लोगों के लिए है जो मसरूफ़ रहते हैं या सफ़र नहीं कर सकते या किसी ऐसे काउंसलर की मदद लेना चाहते हैं जो बहुत दूर रहता है। ऐसे लोगों के लिए कुछ काउंसलर यह मौक़ा देते हैं कि वे वक़्त लेकर उनसे बात करें। कुछ काउंसलर शुरुआती और आख़िरी कुछ सेशन, फ़ोन पर लेते हैं और दरमियानी सेशनों के लिए आमने-सामने काउंसलिंग की हिदायत देते हैं। कुछ हल्के-फुल्के मसले सिर्फ़ फ़ोन पर गुफ़्तगू के ज़रिए भी हल हो सकते हैं।

ऑनलाइन (Online) सेशन

अब कुछ काउंसलर टेक्नॉलजी का इस्तेमाल करके ऑनलाइन काउंसलिंग के भी मौक़े दे रहे हैं। इसके लिए आमतौर पर टेलीफ़ोन की तरह ही ऑनलाइन बातचीत होती है, कभी काउंसलर ज़रूरत महसूस करे तो वीडियो कान्फ्रेंसिंग के लिए भी कह सकता है। टेस्ट वग़ैरा भी ऑनलाइन लिए जाते हैं। बहरहाल सबसे फ़ायदेमन्द काउंसलिंग आमने-सामने की काउंसलिंग ही है। इसमें दुश्वारी हो तो अकसर सूरतों में काउंसलर के मश्वरे से इलाज का एक हिस्सा या पूरा इलाज ऑनलाइन या टेलीफ़ोन की मदद से भी पूरा किया जाता है।

नफ़सियाती मसलों के हल के मुख़्तलिफ़ अप्रोच और इस्लाम

थेरेपिस्ट, काउंसलर या कोच मसले के हल के लिए मुख़्तलिफ़ अप्रोच इख़्तियार करते हैं। ये अलग-अलग अप्रोच अलग-अलग फ़ल्सफ़ों और नज़रियात की बुनियाद पर वुजूद में आए हैं। इसलिए उनमें आपस में इख़्तिलाफ़ात भी हैं। साइक्याट्री (Psychiatry) जैसा कि बताया गया, मेडिकल साइंस की एक शाख़ है। उसकी फ़ल्सफ़ियाना बुनियाद यह नज़रिया है कि इनसानी जिस्म में नफ़सियाती मसलों के साथ-साथ तमाम बीमारियों की बुनियादी वजह जिस्म में कीमियाई माद्दों और हार्मोंज़ का बैलेंस से न होना है। चुनाँचे नफ़सियाती मसलों की पहचान के लिए भी वही तरीक़े किए जाते हैं जो दूसरे जिस्मानी मसलों के सिलसिले में मेडिकल साइंस में राइज हैं। ज़ाहिरी निशानियों के अलावा डॉक्टर ख़ून वग़ैरा के टेस्ट कराते हैं। एक्सरे, अलट्रासाउंड, सी॰टी॰ स्केन वग़ैरा कराए जाते हैं और बीमारी की पहचान के बाद दवाओं के ज़रिए से इलाज किया जाता है। दवाओं के ज़रिए समझा जाता है कि जो कीमियाई बैलेंस में कमी पैदा हुई है, उसको दुरुस्त किया जा सकता है और इस तरह बीमारी पर क़ाबू पाया जा सकता है।

साइकोएनालेसिस (Psychoanalysis) वह तरीक़ा है जिसकी बुनियाद सिगमंड फ़्राइड और जोज़फ़ ब्रेवर वग़ैरा के नज़रियात पर रखी गई है। इसमें यह समझा जाता है कि नफ़सियाती मसलों की जड़ ज़्यादातर बचपन के

तजरिबों और हादिसों में होती है जो लाशुऊरी कश्मकश (Unconscious Conflict) को जन्म देती है। डॉक्टर उस कश्मकश की पहचान करता है और उसका इलाज करता है। पहचान के लिए ज़्यादातर मरीज़ों से बात की जाती है और कभी-कभी लाइसेंसयाफ़्ता माहिर डॉक्टर उसपर कुछ टेस्ट करते हैं। ये नफ़सियाती टेस्ट अकसर सवालनामों की सूरत में होते हैं, जिनके जवाबों से मरीज़ के ज़ेहन का अन्दाज़ा लगाया जाता है। मरीज़ के ज़ेहन का अन्दाज़ा उसके .ख़ाबों (Dream Analysis) से भी किया जाता है। इसके बाद काउंसलर कई सेशन लेकर मरीज़ का इलाज करता है। आमतौर पर यह तरीक़ा काफ़ी परेशानी और सब्रवाला होता है और इलाज के लिए कई लम्बे सेशन चाहिए होते हैं।

सी॰बी॰टी॰ (Cognitive Behavior Therapy) की बुनियाद इस नज़रिये पर है कि इनसान के रवैये अस्ल में उसके .ख़यालात की पैदावार होते हैं। अगर ज़ेहन .ग़लत .ख़यालों को जगह देनेवाला हो तो उसी से .ग़लत रवैये पैदा होते हैं और .ख़यालात बदलकर ज़िन्दगी बदली जा सकती है। इस तरीक़े में काउंसलर हमारे .ख़यालात को जाँचता है और उन .ख़यालात को पहचानने की कोशिश करता है जो हमारे लिए नफ़सियाती मसले पैदा कर रहे हैं और फिर गुफ़्तगू के ज़रिए से उन .ख़यालात को बदलने की कोशिश करता है ताकि हमारी ज़िन्दगी बेहतर हो सके। इसके लिए इनफ़िरादी मुलाक़ात (One to One Session) का तरीक़ा भी अपनाया जाता है और कुछ मसलों में इजतिमाई निशस्तों (Group Therapy) का भी। इसमें बहुत ज़्यादा माज़ी (Past) के बारे में बातें नहीं की जातीं, बल्कि हाल (Present) में यानी आज हमारे ज़ेहन में क्या .ख़यालात चल रहे हैं उनपर फ़ोकस किया जाता है।

इन दिनों एन॰एल॰पी॰ का भी काफ़ी चर्चा है। एन॰एल॰पी॰ की बुनियाद कुछ फ़र्ज़ी बातों (Presupposition) पर है। इसमें .ज्यादतार इस बात की कोशिश की जाती है कि लाशुऊर की री-प्रोग्रामिंग की जाए। यानी हमारे लाशुऊर को इस तरह दोबारा डिज़ाइन किया जाए कि .ख़राब आदतों, रवैयों और जज़बात से छुटकारा मिले और अच्छी आदतें, .ख़यालात और जज़बात बनें ताकि अच्छे रवैये पैदा हों। लाशुऊर को .ख़राब चीज़ों से पाक करने और

उसमें अच्छी चीज़ों को शामिल करने की कुछ ख़ास तकनीक है जिसे एन॰एल॰पी॰ को करनेवाले अपनाते हैं। दूसरे तरीक़ों के मुक़ाबले में एन॰एल॰पी॰ से ज़्यादा तेज़ी से नतीजे हासिल होते हैं।

इनके अलावा कागनिटिव थेरेपी (Cognitive Therapy), बिहेवरल थेरेपी (Behavioral Therapy), ह्यूमनिस्टिक थेरेपी (Humanistic Therapy), होलिस्टिक थेरेपी (Holistic Therapy) और इस तरह के कई मॉडल और अप्रोच हैं जो दुनिया में राइज हैं।

इनसानी नफ़सियात एक निहायत पेचीदा चीज़ है। ऊपर लिखे गए तमाम तरीक़ों की बुनियाद कुछ थ्योरियों पर है। इसलिए इनमें आपस में शदीद टकराव भी है। एक-दूसरे पर शदीद तनक़ीदें भी हैं। और एक-दूसरे को ग़लत साइंस (Pseudoscience) बावर कराने की कोशिशें भी हैं। इनसे घबराना नहीं चाहिए। यह सब इनसानी इल्म के नाक़िस होने की दलील है। जो कुछ बातें इनसान के अब तक समझ में आई हैं, उसकी बुनियाद पर इलाज की कोशिश हमें करनी चाहिए और नतीजे को अल्लाह पर छोड़ना चाहिए और यह यक़ीन भी रखना चाहिए कि इनसान चाहे कितना ही तरक़्क़ी कर ले उसका इल्म नाक़िस और अधूरा ही रहेगा और हक़ीक़ी इल्म तो अल्लाह के पास ही है।

इसी तरह यह बात भी समझनी चाहिए कि दूसरे तमाम नए इल्म की तरह नफ़सियात से मुताल्लिक़ ये इल्म भी ग़ैर-इस्लामी और सेकुलर नज़रियात की पैदावार हैं। चाहे समाजियात व मआशियात हों या नफ़सियात व फ़ल्सफ़ा, बल्कि मेडिकल साइंस और कीमिया व तबइय्या ही क्यों न हों, इन सब इल्म की जो नई शक्लें इस वक़्त सारी दुनिया में राइज हैं उनकी बुनियाद में गहरे ग़ैर-इस्लामी और मुलहिदाना फ़ल्सफ़े मौजूद हैं। मुसलमान की हैसियत से हमारी ज़िम्मेदारी है कि हम आँखें खुली रखकर और क़ुरआन व सुन्नत की रौशनी को सामने रखकर, इन इल्म के अच्छे और क़ाबिले-क़बूल पहलुओं से फ़ायदा हासिल करें और ग़लत बातों से बचें। फिर यह बात भी सामने रहे कि नफ़सियाती मसलों के हल के सिलसिले में इस्लाम का अपना एक नज़रिया भी है। इस्लाम के अक़ीदों, तसव्वुरात, इबादतें और इस्लामी

रहन-सहन और अख़लाक़ साथ-ही-साथ आदाब इन सबका नफ़सियाती मसलों के हल में अपना एक किरदार और रोल है। ज़िक्र, दुआ, नमाज़, रोज़ा, तिलावत सुकून व इत्मीनान की बहुत ही असरदार तकनीकें भी हैं। हम नई तकनीकों से भी ज़रूर फ़ायदा हासिल करें, इस्लाम इससे मना नहीं करता, लेकिन इस्लाम की बुनियादी तालीमात को सामने रखकर और उसको अस्ल मानकर, उसी को कसौटी बनाकर दूसरे जाइज़ तरीक़ों से फ़ायदा हासिल करें। दुनिया के इल्म व फ़न के सिलसिले में यही मुनासिब इस्लामी रवैया है।

इस बात की भी ज़रूरत है कि इस्लाम की समझ और शुऊर रखनेवाले इन मैदान में आगे बढ़ें, ताकि इस्लाम के उसूलों की पाएदार बुनियादों पर इन इल्म व फ़नों में सुधार हो सके। अल-हम्दु लिल्लाह यह काम हो भी रहा है और आज दुनिया में पढ़े-लिखे मुसलमान साइक्लोजी, सी॰बी॰टी॰ एन॰एल॰पी॰ वग़ैरा फ़नों को भी इस्लाम की रौशनी में प्रैक्टिस करने और उनके इस्लामी मॉडल तैयार करने की कोशिश कर रहे हैं। अगर हमें अपने मसलों के हल के लिए ऐसे लोग मिलते हैं तो अल्लाह का शुक्र अदा करना चाहिए और अगर नहीं मिलते तो हमें अपने डॉक्टर की बातों और मश्वरों को क़ुरआन व सुन्नत की रौशनी में परखना चाहिए और वही बातें क़बूल करनी चाहिए जो हमारे उसूलों से मेल खाती हों।

फ़ैमली काउंसलिंग और झगड़ों के हल में औरत का रोल

हम सबके लिए जिस तरह अच्छी सेहत बहुत ज़रूरी है उसी तरह सेहतमन्द सोच और जज़बात भी ज़रूरी हैं। मनफ़ी (नकारात्मक) जज़बात और सोच से हमारी ज़िन्दगी पर गहरे असर होते हैं। हम ऐसे कई लोगों को जानते हैं जिनको अल्लाह ने सब कुछ दे रखा है, माल व दौलत, सेहत, इज़्ज़त, सब कुछ होते हुए भी उनकी ज़िन्दगियों में सुकून नहीं है। रात को नींद नहीं आती। हमेशा बेचैनी व परेशानी में पड़े रहते हैं। यह बहुत बड़ा अज़ाब है कि आदमी के पास सब कुछ हो लेकिन वह उन नेमतों का मज़ा न ले सके। इसलिए कहा जाता है कि अस्ल दौलत दिल की दौलत है। आदमी के अन्दर तवक्कुल (अल्लाह पर भरोसा) और बेनियाज़ी जैसी सिफ़ात हों तो वह मुश्किल वक़्तों में भी ख़ुश व ख़ुर्रम रहता है। जबकि मनफ़ी (नकारात्मक) जज़बात ज़िन्दगी को जहन्नम बना देते हैं। नकारात्मक जज़बात से न सिर्फ़ हमारी ज़िन्दगी ख़राब होती है, बल्कि हमारे साथ रहनेवाले दूसरे लोगों की ज़िन्दगियाँ भी मुश्किल में पड़ जाती हैं।

इन जज़बात पर अकसर इनसान को कंट्रोल नहीं रहता। इनका सरचश्मा इनसान का लाशुऊर होता है। लाशुऊर का बनना इनसान के तजरिबात व मुशाहदात के ज़रिए से होता है और नए तजरिबात व मुशाहदात के ज़रिए से उसमें बदलाव लाया जा सकता है। एक अच्छा काउंसलर वह होता है जो लाशुऊर को सकारात्मक तजरिबात से गुज़ारे और सूरतेहाल का दूसरा रुख़ दिखाकर 'दिल की दौलत' से मरीज़ को मालामाल कर दे।

पुराने ज़माने में घर के बड़े-बुज़ुर्ग और ख़ास तौर पर औरतें यह रोल अदा करती थीं। नानियाँ और दादियाँ न सिर्फ़ घरेलू टोटके से रोज़ाना की

आम जिस्मानी बीमारियों का इलाज कर देती थीं, बल्कि नफ़सियाती मसले भी हल कर दिया करती थीं। क़िस्से-कहानियों के ज़रिए, कहावतों के ज़रिए, ख़ुद अपने तजरिबात बयान करके वे ज़िन्दगी का ख़ुशगवार तसव्वुर पैदा करती थीं और हालात व मसाइल से मुक़ाबले के गुर सिखाती थीं।

इस रिवायती रोल की आज भी ज़रूरत है। प्रोफ़ेश्नल काउंसलर का मरहला तो उस वक़्त सामने आता है जब मसला ज़्यादा पेचीदा हो जाए। रोज़ाना के आम मसलों में आदमी जज़बाती सपोर्ट के लिए अपने चाहनेवालों और क़रीबी लोगों ही पर निर्भर होता है। बेटे के लिए उसकी बेहतरीन काउंसलर उसकी माँ होती है। बीवी, शौहर की दुख-सुख की साथी, उसकी अहमतरीन रफ़ीक़ और उसके लिए सबसे अहम जज़बाती सहारा होती है। बहनें भी अपने भाइयों के लिए बहुत अहमियत रखती हैं। कभी बेटियाँ और बहुएँ भी अपने बाप और ससुर के मसले हल कर देती हैं। इसी तरह सास और नानी, ये सब औरतें अपने अज़ीज़ों और रिश्तेदारों के मसले हल करने में अहम रोल अदा करती हैं।

अल्लाह तआला ने मर्द और औरत को सिर्फ़ हयातियाती (Biological) फ़र्क़ के साथ पैदा नहीं किया, बल्कि उनके दरमियान ज़बरदस्त नफ़सियाती और जज़बाती फ़र्क़ भी रखे हैं। औरत की नर्म व नाज़ुक शख़्सियत और उसके नाज़ुक जज़बात का अहम समाजी रोल भी है। जज़बाती सुकून और इलाज का जो काम औरत कर सकती है, वह मर्द नहीं कर सकता। उसके दो बोल, एक मुस्कुराहट और कभी कुछ आँसू गहरे जज़बाती ज़ख़्मों को कुछ लम्हों में भर देते हैं। लाशुऊर को बदलने में एक औरत बहुत अहम रोल अदा कर सकती है। वह अगर अच्छे और उम्मीद से भरे हुए मंज़र दिखाए तो उसे देखना आदमी के लिए बहुत आसान हो जाता है। यही वजह है कि प्रोफ़ेश्नल काउंसलिंग में भी औरतें ज़्यादा कामयाब होती हैं। एक क़रीबी रिश्तेदार औरत, जिससे मुहब्बत का ताल्लुक़ हो, वह बहुत-से ऐसे काम अंजाम दे सकती है जो प्रोफ़ेश्नल काउंसलर नहीं कर सकती।

काउंसलिंग की ज़रूरत कब पेश आती है?

काउंसलिंग की ज़रूरत आमतौर पर नफ़सियाती और जज़्बाती मसलों में पड़ती है। ये मसले कई तरह के होते हैं। कुछ मसले तो वे हैं जिन्हें बाक़ायदा बीमारी (Disorder) के तौर पर मान लिया गया है। तनाव (Stress), परेशानी (Anxiety), दो क़ुतबियत (BPD), सिज़ोफ़्रेनिया (Schizophrenia), ख़ौफ़ (Phobias), अलज़ाइमर, जुनून व दीवानगी और दौरे वग़ैरा बीमारियाँ हैं। इनके इलाज के लिए अकसर दवाओं की भी ज़रूरत पड़ती है। इन बीमारियों का इलाज सिर्फ़ घरेलू काउंसलिंग से मुमकिन नहीं है। लेकिन प्रोफ़ेशनल काउंसलर या डॉक्टर के मश्वरे से और उसकी निगरानी में उनके इलाज के लिए घर के लोगों को भी अहम रोल अदा करना पड़ता है। आमतौर पर ऐसी बीमारियों में डॉक्टर क़रीबी रिश्तेदारों से भी बात करते हैं और उनको भी बहुत-से मश्वरे देते हैं। इलाज और दवाएँ तो डॉक्टर देगा लेकिन उसके मश्वरे से घर पर लगातार देखभाल और मरीज़ को जज़्बाती सपोर्ट देने का काम घर की औरतों ही को करना पड़ता है। सबसे अहम रोल बीवी का होता है। उसके बाद बेटियाँ, बहुएँ और दूसरी रिश्तेदार औरतें भी अहम रोल अदा करती हैं। इन औरतों की यह ज़िम्मेदारी है कि वे डॉक्टर से तफ़सील से बात करें। अपने रोल को अच्छी तरह समझें। किस सूरतेहाल को कैसे निपटाना है और किन हालात में क्या करना है उसको अच्छी तरह समझकर ज़िहानत के साथ उसको अमल में लाएँ।

मसाइल की दूसरी क़िस्म वह है जो आम सेहतमन्द लोगों को पेश आती है। मायूसी, ग़ुस्से में तेज़ी, ग़म, मूड में बदलाव, ग़लत ख़यालात व रुझानात, एतिमाद की कमी, जुर्म का एहसास, बिना किसी वजह के अन्देशे, वहम, शक, चिड़चिड़ापन, ग़ैर-मुस्तक़िल मिज़ाजी, हसद व जलन, बोरियत, महरूमी का एहसास, ज़िल्लत व तौहीन का एहसास, नफ़रत, बेबसी, दिल टूटना, हैरानी-परेशानी, तन्हाई का एहसास, शर्म, बच्चों में पढ़ाई में दिलचस्पी में कमी, सीखने की रफ़्तार का सुस्त पड़ जाना वग़ैरा दरजनों मुख़्तलिफ़ कैफ़ियात हैं जिनमें काउंसलिंग और जज़्बाती सहारे की ज़रूरत पड़ती है। हर शख़्स की ज़िन्दगी में ऐसे क़िस्से पेश आते हैं जो इन एहसासात को जन्म

देते हैं। इन क़िस्सों में सेहत की ख़राबी या बीमारी सबसे अहम है। बीमारी में मरीज़ को अगर नफ़सियाती मदद मिल जाए तो इस बीमारी को क़बूल करने और उससे लड़ने में उसे काफ़ी मदद मिल सकती है। इसी तरह वह किसी क़रीबी की मौत या बीमारी, तिजारत या पेशावाराना ज़िन्दगी में किसी बड़े नुक़सान या नाकामी से दोचार हो जाए, उससे कोई जुर्म, किसी पर ज़ुल्म या नाइनसाफ़ी या गुनाह हो जाए, कोई इलज़ाम लगे या बदनामी हो जाए, किसी क़रीबी शख़्स के ज़रिए से एतिमाद टूट जाए, कोई हादिसा हो जाए या किसी बड़े हादिसे को वह अपनी आँखों से देखे, इस तरह की दसियों सूरतें हैं जो आदमी को वक़्ती तौर पर सख़्त नफ़सियाती मसलों से दोचार कर सकती हैं। लत या नशा, किसी के ज़रिए सताए जाने का मामला, मुक़द्दमे, झगड़े और सबसे बढ़कर मियाँ-बीवी और ख़ानदानी झगड़ों में आदमी को काउंसलिंग और जज़बाती सहारे की ज़रूरत होती है।

बच्चों की काउंसलिंग

औरत माँ के रूप में एक बेहतरीन काउंसलर होती है। अकसर कामयाब लोग अपनी कामयाबी का सेहरा अपनी माँ के ही सिर बाँधते हैं। माँ की गोद ही बच्चे का पहला स्कूल होता है। अगर माँ समझदार और सुलझी हुई शख़्सियत की मालिक हो तो वह अपने बच्चे की ज़िन्दगी ख़ुशियों और कामयाबियों से भर सकती है। माँ का छूना और उसकी मुस्कुराहट एक नन्हे-मुन्ने बच्चे के लिए बहुत अहम होती है। माँ को चाहिए कि वह अपना ज़्यादा-से-ज़्यादा वक़्त उस मासूम बच्चे के साथ गुज़ारे ताकि उसे महफ़ूज़ होने का एहसास भी हो और वह ख़ुशी भी महसूस करे। छोटे बच्चों के लिए माँ की नज़दीकी ही उनके जज़बाती सुकून के लिए काफ़ी होती है। बच्चा चाहे बड़ा हो जाए और स्कूल जाना भी शुरू कर दे, उसे आपका स्पर्श ज़रूर मिले। अपने बच्चे को अपने गले से ज़रूर लगाएँ। रिसर्च कहती है कि जब बच्चा अपनी माँ की बाहों में आता है तो उसकी तकलीफ़, ग़म, परेशानी सब ख़त्म हो जाती है।

स्कूल जानेवाले बच्चों के सिलसिले में ज़रूरी है कि उनके मसले सुने जाएँ। माँ का ख़ामोशी और तवज्जोह के साथ मसलों को सुनना ही बच्चे

को ग़ैर-मामूली जज़बाती सुकून और ताक़त देता है।

अगर किसी नौजवान कामयाब इनसान से उसकी रहनुमाई करनेवाली शख़्सियत के बारे में पूछें तो वह यह ज़रूर बताएगा कि वह आज ज़रूर जवान और कामयाब शख़्सियत है, लेकिन जब भी उसे ज़रूरत पड़ती है वह अपनी मेहरबान माँ से रहनुमाई हासिल करने में कोई हिचकिचाहट महसूस नहीं करता। वही माँ अपने बच्चों के लिए बेहतरीन रोल मॉडल का काम कर सकती है और उनकी हिम्मत बढ़ा सकती है। माँ अपने बच्चे का ज़ेहन पढ़ना अच्छी तरह जानती है। अपने बच्चे के दर्द और ख़ुशी का उसे अपने-आप पता चल जाता है।

सबसे अहम ज़रूरत यह है कि बच्चों के लाशुऊर की सही तरबियत की जाए। उनको अच्छा देखने, अच्छा सुनने और बेहतर तरीक़े से सोचने का आदी बनाया जाए। बच्चों की नफ़सियाती तरबियत पर तफ़सील से गुफ़्तगू आगे आ रही है। यहाँ सिर्फ़ यह बात कहनी थी कि माँ अगर अपने बच्चे के मसलों में दिलचस्पी ले, उसकी बातें तवज्जोह से सुने और उसकी रहनुमाई करे तो माँ से बेहतर उसके लिए कोई काउंसलर नहीं हो सकती।

मियाँ-बीवी के झगड़ों में काउंसलिंग

अल्लाह ने शादीशुदा ज़िन्दगी के झगड़ों का हल यह बताया है कि पहले मियाँ-बीवी आपस में अपने झगड़ों को ख़ुशदिली के साथ और एक-दूसरे को माफ़ करते हुए हल कर लें और ऐसा न हो सके तो किसी तीसरे की मदद लें, जिसे क़ुरआन का तहकीम का उसूल कहा जाता है।

घर की औरतों को यह गुर आना चाहिए कि वे अपने रिश्तेदारों की शादीशुदा ज़िन्दगी के झगड़ों को अच्छे तरीक़े से हल कर सकें। काउंसलिंग के इस काम के लिए ज़रूरी है कि हम इस्लाम और इस्लामी शरीअत से भी अच्छी तरह वाक़िफ़ हों और काउंसलिंग के नए तरीक़ों की भी मालूमात रखें। अकसर झगड़ों की वजह लाशुऊर और उसके नतीजे में बननेवाला ख़ाका होता है। शौहर और बीवी एक ही मसले को दो अलग तरीक़ों से देखते हैं। यह टकराव उनके बीच झगड़ों की वजह बनता है। इसी तरह कम्यूनिकेशन

की ख़राबी मतभेदों की वजह बनती है।

काउंसलिंग करनेवाली औरतें अगर यह सलाहियत पैदा करें कि वे मियाँ और बीवी से बात करके मसले की जड़ को उनके लाशुऊर में तलाश कर सकें तो बहुत-से मसले आसानी से हल हो सकते हैं।

परेशानियों और मसलों में काउंसलिंग

यह बात हम बार-बार बता रहे हैं कि हमारे अकसर जज़्बाती मसले हमारे लाशुऊर की वजह से होते हैं। लाशुऊर को बनानेवाला शुऊर होता है। हम कोई काम शुऊर के साथ बार-बार करते हैं तो वह लाशुऊर का हिस्सा बन जाता है। हम शुऊर के साथ बार-बार ग़ुस्सा करते हैं, यहाँ तक कि ग़ुस्से और चिड़चिड़ेपन पर हमारा कंट्रोल बाक़ी नहीं रहता। हम किसी मसले पर बहुत ज़्यादा सोचते हैं और उसे अपने लिए बहुत बड़ी रुकावट समझने लगते हैं, तो वह हक़ीक़त में एक रुकावट (Limiting Belief) बन जाता है। इन रुकावटों को हम पहचान लें और लाशुऊर को बदलें तो हम ख़ुद को बदल सकते हैं। लाशुऊर को बदलने के लिए शुऊरी कोशिश करनी पड़ती है। अल्लाह ने हमें वह दिमाग़ भी दिया है जो मुसबत (सकारात्मक) चीज़ों को देखता है और वह दिमाग़ भी दिया है जो मनफ़ी (नकारात्मक) चीज़ों को देखता है। वह दिमाग़ भी दिया है जो मसलों को देखता है और उनकी गम्भीरता को महसूस करता है और वह दिमाग़ भी दिया है जो हल पर ग़ौर करता है। यह हमपर निर्भर होता है कि हम किस दिमाग़ से ज़्यादा काम लेते हैं। बहुत-से लोग सिर्फ़ मसलों पर बात करते हैं। सास के मसले, बच्चों की नाफ़रमानियाँ, मियाँ की लापरवाही, ट्रैफ़िक का मसला, मौसम की सख़्ती, दुनिया की बद-अमनी, प्लम्बर का टाइम पर न आना, इलेक्ट्रीशियन का ज़्यादा फ़ीस चार्ज करना, बच्चों के स्कूल की ख़राबी, पड़ोसी का गन्दगी फैलाना, फ़लों में पहले जैसे मज़े का न होना, दूध में मिलावट, बिजली का बार-बार जाना, सेहत की ख़राबी, नीन्द का न आना वग़ैरा-वग़ैरा.....इनमें से कुछ मसले हमारे कंट्रोल के बाहर हैं, उनपर ग़ैर-ज़रूरी बहस से क्या फ़ायदा! कुछ मसले हमारे कंट्रोल में हैं, उनपर भी बजाए कंट्रोल करने के उनका ज़िक्र

करने और बहस करने से क्या फ़ायदा! सिर्फ़ मसलों को बार-बार बयान करना और उनसे नकारात्मक (निगेटिव) ताक़त लेना और अपनी तबीअत और मूड को ख़राब करना, एक नफ़सियात है। दिमाग़ के तंक़ीदी (Fault Finding) हिस्से से ज़्यादा काम लेने का नतीजा है। इसके मुक़ाबले में दूसरा तरीक़ा यह है कि हम नतीजे पर नज़र रखें। हम सोचें कि हम क्या चाहते हैं? और जो चाहते हैं उसको हासिल करने की फ़िक्र करें। घर की औरतों का काउंसलर की हैसियत से रोल यह है कि वे इस नतीजे पर मरकूज़ (केन्द्रित) सोच के लिए लोगों को तैयार करें। अगर आपके मियाँ हमेशा परेशान रहते हैं तो देखें कि उनकी परेशानी की वजह उनकी कौन-सी सोच है। उस सोच को मुसबत (सकारात्मक) और हल पर मरकूज़ (Solution Oriented) रुख़ दें। यही मसले का हल है। आप कुढ़ना, झुँजलाना, ग़म करना और तक़दीर का मातम करना छोड़ दें। जो चीज़ बदल सकते हैं उसे बदलने की कोशिश करें, जिसे बदलना मुमकिन न हो उसे क़बूल कर लें। और क़बूल करके यह देखें कि इन हालात में क्या कर सकते हैं। मसलों पर सोचना छोड़ दें। मसलों के हल के बारे में सोचें।

काउंसलिंग नहीं कोचिंग

घर की औरतों को काउंसलिंग से ज़्यादा कोचिंग का काम करना चाहिए। कोचिंग में नतीजों पर तवज्जोह लगाई जाती है। अपने बच्चों, मियाँ और दूसरे लोगों की मदद कीजिए कि वे अपने लिए लक्ष्य तय करें। ये लक्ष्य ज़िन्दगी को बेहतर बनाने के बारे में हों। इनका ताल्लुक़ मिज़ाज में किसी बदलाव के बारे में हो सकता है, जज़बाती सेहत को बेहतर बनाने के बारे में हो सकता है, आदतों पर क़ाबू पाने के बारे में हो सकता है। बीवी से, बच्चों से या किसी और इनसान से ताल्लुक़ात को बेहतर बनाने के बारे में हो सकता है। यानी कि ज़िन्दगी को बेहतर बनाने के बारे में कोई भी लक्ष्य हो सकता है। आप लक्ष्य को तय करने में मदद करें और फिर उन्हें हासिल करने की मंसूबाबन्द कोशिश में भी मदद करें। मिसाल के तौर पर सिगरेट पीने की आदत छोड़ने का लक्ष्य, ग़ुस्से पर कंट्रोल का लक्ष्य, ख़ुद-एतिमादी के साथ स्टेज पर परफ़ार्म करने का लक्ष्य, शौहर या बीवी के साथ लड़ाई-

झगड़ों को ख़त्म करने का लक्ष्य वग़ैरा। काउंसलिंग में ज़्यादातर तवज्जोह माज़ी (अतीत) के ज़ख़्मों को भरने पर होती है, जबकि कोचिंग में भविष्य को बेहतर बनाने पर।

इस तरह औरतें चाहें तो वे अपने रिश्तेदारों को अपनी समझदारी और सूझबूझ से ज़िन्दगी की मुश्किल जज़बाती उलझनों को हल करने में उनकी मदद कर सकती हैं और उनकी ज़िन्दगी को ख़ुशियों का घर बना सकती हैं।

नफ़सियाती बीमारियाँ और उनकी वजहें

इनसान एक जज़बाती मख़लूक़ (Emotional Creature) है। जहाँ सेहतमन्द ज़िन्दगी के लिए उसे सेहतमन्द जिस्म की ज़रूरत है वहीं सेहतमन्द जज़बात की भी ज़रूरत है। जिस तरह जिस्म का कोई हिस्सा (अंग) किसी कमी का शिकार हो जाए या जिस्म के कीमियाई हिस्से का बैलेंस बिगड़ जाए तो इनसान तरह-तरह की जिस्मानी बीमारियों का शिकार हो जाता है उसी तरह जज़बात के बैलेंस की ख़राबी इनसान को नफ़सियाती मसलों से दोचार करती है।

जाड़े-बुख़ार की तरह हलके-फुलके नफ़सियाती मसले हर इनसान को पेश आते हैं और जाड़े-बुख़ार ही की तरह इनसान के जिस्म की ताक़त ख़ुद ही उसपर क़ाबू पा लेती है। लेकिन जिस तरह जाड़े-बुख़ार पर ध्यान न दिया जाए तो कभी वह बढ़कर संगीन बीमारी भी पैदा करने की वजह बनते हैं उसी तरह छोटे-मोटे नफ़सियाती मसलों पर वक़्त के अन्दर ध्यान न दिया जाए तो वे बढ़कर संगीन बीमारी (Disorder) बन जाते हैं। कभी-कभी ऐसी बीमारियों की वजह कोई हादिसा या कोई बड़ी घटना भी होती है। कुछ बीमारियाँ ख़ानदानी या जिस्मानी मसलों की वजह से भी पैदा होती हैं। ऐसी बीमारियों पर फ़ौरन ध्यान देना और अच्छे डॉक्टर से बात करके उनका इलाज कराना ज़रूरी होता है।

अब हमारे मुल्क में नफ़सियाती बीमारियाँ तेज़ी से बढ़ रही हैं। पिछले साल डब्लू.एच.ओ. (World Health Organisation) ने अपनी रिपोर्ट में यह कहकर चौंका दिया कि दुनिया में सबसे ज़्यादा ज़ेहनी मरीज़ हिन्दुस्तान में हैं। मुल्क में तक़रीबन पन्द्रह करोड़ लोग ऐसी नफ़सियाती बीमारियों का

शिकार हैं जिनको इलाज की ज़रूरत है। हमारे मुल्क में ख़ुदकुशी की दर बढ़कर लाख में दस हो चुकी है और पढ़नेवाले नौउम्र लड़के-लड़कियों की ख़ुदकुशी में भी हमारा मुल्क दुनिया में पहले नम्बर पर है। जहाँ ये गिनतियाँ परेशान करनेवाली हैं वहीं इससे ज़्यादा परेशान करनेवाली यह हक़ीक़त है कि इन परेशानहाल लोगों के दुखों का इलाज करने में हमारा समाज नाकाम रहा है। लोगों को नफ़सियाती डॉक्टर से मिलने में शर्म महसूस होती है। समाज में राइज ग़लतफ़हमियों की वजह से नफ़सियाती डॉक्टर से मिलनेवाले को लोग नॉर्मल आदमी नहीं समझते। ख़ानदान के लोग जो दूसरी किसी छोटी-से-छोटी बीमारी के लिए भी अच्छे-से-अच्छे डॉक्टर से बात करते हैं, नफ़सियाती मसलों में डॉक्टर या माहिरे-नफ़सियात से मिलने से झिझकते हैं। डब्लू.एच.ओ. की रिपोर्ट में यह बात भी कही गई है कि हमारे मुल्क भारत में पन्द्रह करोड़ नफ़सियाती मरीज़ों में सिर्फ़ तीन करोड़ मरीज़ों को नफ़सियाती डॉक्टर या माहिरे-नफ़सियात की पेशावराना ख़िदमत हासिल हैं। बाक़ी अस्सी फ़ीसद यानी बारह करोड़ मरीज़ बग़ैर किसी इलाज के जज़बाती जहन्नम में रहने पर मजबूर हैं। एक सौ बीस करोड़ की आबादीवाले मुल्क में नफ़सियाती डॉक्टरों की तादाद सिर्फ़ 3827 है (लोकसभा में स्वास्थ्य मंत्री की तरफ़ से दी गई जानकारी)।

यहाँ हम कुछ नफ़सियाती बीमारियों के बारे में बता रहे हैं। हमारे क़रीबी लोगों में से किसी के अन्दर इस तरह की अलामतें नज़र आएँ तो नफ़सियाती डॉक्टरों से मिलने में हम न झिझकें। अल्लाह ने बीमारी भी पैदा की है और उसकी दवा भी। अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल.) ने फ़रमाया, "अल्लाह ने कोई ऐसी बीमारी नहीं उतारी जिसकी शिफ़ा (दवा) न उतारी हो।" चुनाँचे हमारी ज़िम्मेदारी है कि हम बीमारियों का इलाज और दवा तलाश करने की कोशिश करें। यह बात जहाँ जिस्मानी बीमारियों के लिए सही है वहीं नफ़सियाती बीमारियों के लिए भी सही है। नफ़सियाती बीमारी भी जिस्मानी बीमारी की तरह एक आज़माइश है। इसमें न शरमाने की ज़रूरत है और न इसे छिपाने की, बल्कि फ़ौरन तवज्जोह देकर इलाज की फ़िक्र करनी चाहिए।

(1) आसाबी नशो-नुमा से मुताल्लिक़ बीमारियाँ (Neurodevelopmental Disorders)

ये वे बीमारियाँ हैं जिनका ताल्लुक़ ज़्यादातर बच्चों से होता है। अल्लाह बच्चेदानी में और फिर पैदाइश के बाद बालिग़ होने तक बच्चों का जिस्म और उनके दिमाग़ की परवरिश करता है। कुछ बच्चों में अल्लाह की मरज़ी से परवान चढ़ने का यह अमल अधूरा रह जाता है। इसकी वजह से बच्चे पैदाइशी कमियों के साथ पैदा होते हैं। कभी उनके दिल या जिस्म के किसी और अहम हिस्से में कमी रह जाती है तो कभी हाथ-पाँव में कोई कमी रह जाती है। इसी तरह कुछ बच्चों के दिमाग़ या आसाबी निज़ाम में कोई कमी रह जाती है। कुछ बच्चे पैदाइश के वक़्त तो सेहतमन्द रहते हैं लेकिन उम्र के साथ उनके दिमाग़ का बढ़ना फ़ितरी रफ़्तार से नहीं हो पाता। इस तरह के नशो-नुमा से सम्बन्धित कमियों के नतीजे में पैदा होनेवाली बीमारियाँ नीचे दी जा रही हैं–

■ ज़ेहन की कमी (Intellectual Disability)

यह बीमारी अठारह साल की उम्र तक किसी भी मरहले में पेश आ सकती है। इसके नतीजे में बच्चे की ज़ेहनी सलाहियत अपने हम-उम्र बच्चों से काफ़ी कम रह जाती है। आइ क्यू टेस्ट के ज़रिए ज़ेहनी सलाहियत का पता लगाया जाता है। ज़हीन बच्चों का आई क्यू बहुत अच्छा होता है। कम ज़हीन बच्चों का कम होता है। लेकिन जब एक ख़ास लेवल से कम हो जाता है तो उसे बीमारी मानी जाती है। ऐसे बच्चे मामूल की सेहतमन्द ज़िन्दगी भी आज़ादाना नहीं गुज़ार सकते। और रोज़ाना के आम मामलों में भी उनका ज़ेहन सही फ़ैसले करने और मामलों को समझने से क़ासिर (असमर्थ) होता है।

■ मुवासलाती बीमारियाँ (Communication Disorders)

इसके नतीजे में अलफ़ाज़, ज़बान और बातचीत की सलाहियत पर असर पड़ता है। ज़बान से मुताल्लिक़ बीमारियों में बच्चा ज़बान के सही इस्तेमाल से मजबूर होता है। उम्र की मुनासबत से अलफ़ाज़ के मुनासिब ज़खीरों पर क़ुदरत से महरूम होता है। आवाज़ से मुताल्लिक़ बीमारियों में

वह अलफ़ाज़ को सही तौर पर सुनकर पहचान नहीं पाता। रवानी से मुताल्लिक़ बीमारियों में उसकी ज़बान की रफ़्तार और दिमाग़ में आनेवाले अलफ़ाज़ की रफ़्तार में यकसानियत नहीं रहती। वह अटक-अटककर बोलता है या इतना तेज़ बोलता है कि बात किसी को समझ नहीं आती।

■ ऑटिज़्म (Autism)

यह बच्चों में पाई जानेवाली आम ज़ेहनी बीमारी है जो एक साल से दो-तीन साल की उम्र में महसूस की जा सकती है और वक़्त पर नोटिस न लिया जाए तो ज़िन्दगी-भर के लिए यह बीमारी लग सकती है। इस बीमारी में बच्चे की समाजी सलाहियत, बातचीत और रवैया आम बच्चों से अलग होता है। इस बीमारी के शिकार बच्चे दूसरे बच्चों के साथ घुलना-मिलना और खेलना पसन्द नहीं करते। बहुत ज़्यादा तंहाई-पसन्द होते हैं। आँख नहीं मिलाते। अपने और दूसरों के जज़बात नहीं समझते। अकसर बच्चे उम्र की मुनासबत से बोलने की सलाहियत से महरूम होते हैं। जब देर से बोलना शुरू करते हैं तो आवाज़ रोबोट की तरह मशीनी होती है। कुछ काम शुरू करते हैं तो वही करते रहते हैं। हाथ-पाँव लगातार हिलाते रहते हैं। आवाज़, रौशनी या छूने के मामले में बहुत ज़्यादा हस्सास होते हैं। इस तरह की अलामतें पाई जाएँ तो यह सीरियस नफ़सियाती बीमारी यानी ऑटिज़्म की अलामत हो सकती है। इसका फ़ौरन नोटिस लेना ज़रूरी है।

■ ए॰डी॰एच॰डी॰ (Attention Deficit Hyperactivity Disorder)

यह एक ऐसी बीमारी है जिसमें मरीज़ अपना काम तवज्जोह के साथ नहीं कर पाता, यहाँ तक कि वह कुछ वक़्त के लिए एक जगह बैठ भी नहीं सकता या फिर ग़ैर-ज़रूरी सरगर्मी करता रहता है। यह बीमारी बच्चों में ज़्यादा पाई जाती है, लेकिन कभी-कभी बड़ों में भी पाई जाती है।

(2) दो क़ुतबियत (Bipolar) और उससे मुताल्लिक़ बीमारियाँ

यह बीमारी शिद्दते-जज़बात के चक्करों की तरह होती है। इसमें मरीज़ का मूड और उसकी ताक़त का लेवल दो हदों के दरमियान चक्कर लगाता रहता है। सनक (Mania, जुनून) का दौर चलता है तो मरीज़ बहुत सरगर्म

हो जाता है। उसकी ख़ुद-एतिमादी अपने उरूज पर होती है। ताक़त भरपूर होती है, जिसकी वजह से वह हद से ज़्यादा सरगर्म (Hyper) हो जाता है। कभी-कभी यह हद से ज़्यादा ताक़त ख़तरनाक और नुक़सान देनेवाले कामों, मिसाल के तौर पर जुर्म, जुवा, या शॉपिंग की सनक जैसी अलामतों की सूरत में भी ज़ाहिर होने लगती है। और जब ग़म का दौर आता है तो मरीज़ बिलकुल उदास (Depressed) हो जाता है। ग़म, एहसासे-जुर्म, थकान, बोरियत और चिड़चिड़ेपन जैसे मनफ़ी (नकारात्मक) एहसास उसके अन्दर से सारी ज़िन्दगी निकाल देते हैं। किसी काम में उसकी दिलचस्पी नहीं रहती। नींद नहीं आती और ख़ुदकुशी के ख़यालात आने लगते हैं। मरीज़ कई-कई दिन अपनी इसी हालत में पड़ा रहता है। इस तरह ये दौरे कुछ घन्टों से लेकर कई-कई दिनों तक जारी रहते हैं।

(3) बेचैनी (Anxiety) और उसके मुताल्लिक़ बीमारियाँ

हद से ज़्यादा या लगातार किसी बात का डर, फिर उसकी वजह से लगातार अन्देशा व तशवीश और बेचैनी व इज़्तिराब की कैफ़ियत भी एक बीमारी है। ख़ौफ़ अस्ल में किसी ख़तरे के जवाब में जज़बाती रद्दे-अमल का नाम है। ख़तरा हक़ीक़ी भी हो सकता है और ग़लत ख़याल भी। यह बीमारी अलग-अलग सूरतों में ज़ाहिर होती है। समाजी बेचैनी (Social Anxiety) में मुब्तला शख़्स पूरे समाज के सिलसिले में यह डर रखता है कि समाज उसका दुश्मन है। उसपर नज़र रखी जा रही है, या उसको नुक़सान पहुँचाने की कोशिश की जा रही है और कोई उसका हमदर्द नहीं है। इस ख़ौफ़ के नतीजे में समाजी ताल्लुक़ात उसके लिए मुश्किल हो जाते हैं। कुछ ख़ास डर (Phobias) पैदा हो जाते हैं, मिसाल के तौर पर झींगर या छिपकली का डर, ऊँचाई का डर, बारिश या बिजली का डर, पानी का डर, गाड़ी चलाने से डरना वग़ैरा। कुछ लोगों को अपनी किसी महबूब शख़्सियत से जुदा हो जाने या उसे खो देने का डर (Separation Anxiety) पैदा होता है। चुनाँचे उससे कुछ लम्हों के लिए भी दूरी हद से ज़्यादा बेचैनी और तशवीश पैदा कर देती है। वह नज़रों से ओझल हो तो तरह-तरह के अन्देशे पैदा होने लगते हैं। बेचैनी की बीमारी कुछ मरीज़ों में वहशत के दौरों की वजह बनती है। कभी

अचानक और बग़ैर किसी मालूम वजह के ऐसे दौरे आ जाते हैं और फिर मरीज़ हमेशा ऐसे दौरे के ख़ौफ़ में ज़िन्दगी गुज़ारने लगता है।

(4) सदमा (Trauma) या तनाव (Stress) से मुताल्लिक़ बीमारियाँ

किसी हादिसे या बड़े क़िस्से के बाद पैदा होनेवाला शदीद तनाव भी कभी नफ़सियाती बीमारी की शक्ल इख़्तियार कर लेता है। ऐसी बीमारी आमतौर पर किसी क़ुदरती आफ़त, जंग, हादिसे या किसी क़रीबी अज़ीज़ की मौत वग़ैरा के बाद पैदा होती है। हादिसे की याद अचानक शदीद तनाव या वहशत का दौरा पैदा कर दे, या आदमी अच्छे जज़बात को महसूस करने की सलाहियत खो बैठे, या बार-बार उसकी आँखों के सामने उस घटना का मंज़र ऐसे घूमने लगे मानो वह घटना फिर पेश आ रही है और इन कैफ़ियतों से घटना के कई-कई दिन बाद भी नजात न मिले तो ये बीमारी की निशानियाँ हो सकती हैं। इस तरह की बीमारी नई सूरतेहाल के साथ एडजेस्ट होते हुए भी पेश आ सकती है। इसे एडजेस्टमेंट डिसऑर्डर कहते हैं। तलाक़, नई जॉब, नए शहर में रिहाइश, बच्चों में नया स्कूल वग़ैरा जैसी सूरतेहाल इस तरह का मसला पैदा कर सकती है।

(5) लाताल्लुक़ी से मुताल्लिक़ बीमारियाँ (Dissociative Disorders)

इन बीमारियों में आदमी अपने शुऊर के कुछ हिस्सों (मसलन याद्दाश्त या पहचान) से लाताल्लुक़ हो जाता है। भूलने (Amnesia) की बीमारी में किसी नफ़सियाती सदमे के बाद आदमी याद्दाश्त के कुछ हिस्से से लाताल्लुक़ (Dissociate) हो जाता है, यानी याद्दाश्त के उस हिस्से से उसका ताल्लुक़ बाक़ी नहीं रहता और वह उसे इस्तेमाल नहीं कर पाता। भूलने का अमल, आम भूल-चूक से अलग और बहुत ज़्यादा शदीद होता है। आदमी अपनी ज़िन्दगी के कुछ हिस्से को पूरी तरह भूल कर जाता है। मिसाल के तौर पर यह हिस्सा अगर किसी ख़ास ज़माने से मुताल्लिक़ हो तो उस ज़माने की कोई घटना उसे याद नहीं रहती। उस ज़माने में जिन लोगों से ताल्लुक़ क़ायम हुआ है उनके नाम और चेहरे याद नहीं रहते। पहचान से मुताल्लिक़ लाताल्लुक़ी

की बीमारी (Dissociative Identity Disorder) में आदमी के अन्दर एक वक़्त में दो शख़्सियतें या शनाख़तें आ जाती हैं। वह किसी और शख़्सियत का चोला पहन लेता है और उसकी ज़बान, उसके तजरिबे, उसकी याद्दाश्त और उसके माहौल के हवाले से रहने और बात करने लगता है। सिज़ोफ्रेनिया (Schizophrenia) नामी बीमारी में मरीज़ को कुछ अंजान आवाज़ें सुनाई देती हैं या उसकी अपनी शख़्सियत के कई रूप रहते हैं। या यह भी कहा जा सकता है कि इस बीमारी में मुब्तला शख़्स हक़ीक़त को क़बूल नहीं करता और उसके साथ कुछ ग़ैर-ज़रूरी फ़र्ज़ी या ग़ैर-मुताल्लिक़ क़िस्से जुड़ जाते हैं। इस नफ़सियाती बीमारी में मुब्तला शख़्स कुछ ऐसे हादिसे बयान करता है जिनपर एक आम आदमी यक़ीन नहीं करता, मिसाल के तौर पर वह ज़िक्र करता है कि उसके घर में क़त्ल हुआ है। वहाँ जाकर देखने से पता चलता है कि ऐसी कोई घटना हुई ही नहीं है। अख़बार में पढ़ा हुआ या फ़िल्म में देखी हुई कोई घटना उसे अपनी घटना लगती है।

(6) ख़ुराक से मुताल्लिक़ बीमारियाँ (Eating Disorders)

इन दिनों ख़ुराक से मुताल्लिक़ बीमारियाँ बहुत ज़्यादा बढ़ गई हैं। कुछ लोग (ख़ास तौर पर नौजवान लड़कियाँ और औरतें) अपने वज़्न और जिस्मानी बनावट को लेकर बहुत ज़्यादा हस्सास होते हैं। इस हस्सासियत (Anorexia Nervosa) की वजह से वे खाना-पीना छोड़ देते हैं और आख़िर में नफ़सियाती कैफ़ियत का शिकार हो जाते हैं कि खाने से उनको बेज़ारगी और घिन हो जाती है। इसके नतीजे में वे कुपोषण (Malnutrition) का शिकार हो जाते हैं। इसकी इन्तिहाई शक्ल में मरीज़ खाना बिलकुल छोड़ देता है। उसे ज़बरदस्ती खाना खिलाना पड़ता है। कुछ मरीज़ सलाद का एक आध टुकड़ा खा लेते हैं। इसके अलावा कुछ नफ़सियाती बीमारियों में आदमी को पेट भरने का एहसास नहीं रहता। पसन्दीदा खाने मिल जाएँ तो वह बहुत ज़्यादा खाने के नतीजे में बीमार हो जाता है। कुछ बीमारियों जैसे Bulimia Nervosa में मरीज़ बहुत ज़्यादा खाने के बाद उल्टी करके या दवाओं के ज़रिए से खाई हुई ग़िज़ा निकालते हैं। पिका (Pica) नामी बीमारी में मरीज़ को ऐसी चीज़ें खाने की शदीद ख़ाहिश होती है जो आमतौर पर

खाई नहीं जातीं और अकसर नुक़सानदेह होती हैं। (मिसाल के तौर पर मिट्टी, चाक पीस, पेंट, साबुन वग़ैरा।)

(7) नींद से मुताल्लिक़ बीमारियाँ (Sleep Disorders)

नींद से मुताल्लिक़ बीमारियों में सबसे ज़्यादा आम नींद न आने की बीमारी (Insomnia) है। यूँ तो सेहतमन्द लोगों को भी कभी तनाव की हालत में या किसी और वजह से नींद उचाट हो जाती है, लेकिन अगर यह कैफ़ियत बहुत ज़्यादा होने लगे और शदीद तनाव के साथ कई-कई घंटों तक नींद उचाट हो जाए और उसके नतीजे में नींद नाकाफ़ी हो और रोज़ाना के कामों में ख़लल होने लगे तो यह एक नफ़सियाती बीमारी है और इसका वक़्त पर इलाज ज़रूरी है। नींद न आना बीमारी भी है और दूसरी बहुत सारी नफ़सियाती और जिस्मानी बीमारियों की वजह भी। इसलिए यह ज़रूरी है कि इस बीमारी का फ़ौरन नोटिस लिया जाए और वक़्त पर उसका इलाज कराया जाए।

इसके मुक़ाबले में दूसरी इन्तिहा नींद का बहुत ज़्यादा आना है जिसमें आदमी बैठे-बैठे और काम करते-करते कहीं भी सो जाता है या रात को सो जाता है तो सुबह बहुत देर तक सोता रहता है और जब जागता है तब भी फ़्रेश नहीं रहता। आठ-दस घंटे की नींद पूरी करने के बाद भी उसकी आँखों में ख़ुमार और जिस्म में थकन बाक़ी रहती है।

कुछ बीमारियाँ जैसे पैरासोमनिया (Parasomnia) में लोग अजीब हरकतें करने लगते हैं। मिसाल के तौर पर नींद की हालत में उठकर चलने लगना और कहीं भी निकल जाना (Sleep walking) जो कभी-कभी बहुत ख़तरनाक हो सकता है। ऐसे लोग दूसरी-तीसरी मंज़िल से चलते हुए ज़मीन पर आ गिरते हैं, सड़क पर निकलकर गाड़ियों से टकरा जाते हैं, सफ़र करते हुए चलती ट्रेन से बाहर निकल आते हैं। इसके अलावा नींद में बातें करने लगना (Sleep talking) या नींद में शदीद ख़ौफ़ या दहशत महसूस करके चीखते-चिल्लाते हुए उठ बैठना (Sleep Terror) या नींद की हालत में खाने-पीने लगना (Sleep Eating), ये सब भी नींद की बीमारियाँ हैं जिनके इलाज के लिए नफ़सियात के माहिर से बात करना ज़रूरी है।

(8) लत या नशा (Addiction)

किसी चीज़ की लत या नशा एक सीरियस नफ़सियाती बीमारी है। इसके नतीजे में आदमी के दिमाग़ की अन्दरूनी बनावट में नुक़सानदेह बदलाव पैदा हो जाते हैं और मरीज़ मामूल की सेहतमन्द ज़िन्दगी गुज़ार नहीं पाता। लत के मुताल्लिक़ बीमारियों में सबसे ज़्यादा आम तो शराब का नशा है। इस वक़्त ख़ास तौर पर नौजवान तरह-तरह की चीज़ों के ग़लत इस्तेमाल (Substance Abuse) की लत के भी शिकार हो रहे हैं। नशीली (Narcotics) चीज़ों की अलग-अलग क़िस्मों के अलावा, तम्बाकू और उसके अलग-अलग प्रोडक्ट, कुछ दवाएँ और कुछ इस्तेमाल की चीज़ों का ग़लत इस्तेमाल भी लत की शक्ल इख़्तियार कर जाता है। एलेक्ट्रानिक कम्यूनिकेशन की चीज़ें (कम्प्यूटर, टैब, मोबाइल, गेम्स वग़ैरा) का बहुत ज़्यादा इस्तेमाल (Gadgets Addiction) भी लत बन सकता है और पोर्नोग्राफ़ी में तो लत बन जाने की अच्छी ख़ासी सलाहियत मौजूद है। कुछ नामुनासिब जिंसी रवैये भी लत बन जाते हैं।

आमतौर पर इस क़िस्म की ग़लत आदतों को लोग नफ़सियाती बीमारी नहीं समझते। इसे सिर्फ़ अख़लाकी ख़राबी समझते है और दूसरी अख़लाक़ी ख़राबियों की तरह इनको भी सिर्फ़ तंबीह और नसीहत के ज़रिए से दूर करना चाहते हैं। इस क़िस्म की ग़लत आदतों की शुरुआत अख़लाक़ी बिगाड़ ही से होती है इसलिए शुरू ही में तंबीह व तरबियत के ज़रिए से उनकी रोकथाम की जानी चाहिए। लेकिन अगर ये पुख़्ता होकर लत बन जाएँ तो फिर रोकना और नसीहत करना काफ़ी नहीं होता, नफ़सियाती इलाज ज़रूरी हो जाता है।

(9) आसाबी इदराकी बीमारियाँ (Neurocognitive Disorders)

अगर कोई सेहतमन्द बालिग़ आदमी अचानक शदीद कंफ़्यूज़न महसूस करने लगे, उसकी अक़्ल व समझ की सलाहियत मुतास्सिर हो जाए, कुछ आम बातें समझ में न आएँ, रास्ते समझ में न आएँ, जाने-पहचाने लोगों को भी पहचानना मुश्किल हो जाए, बात करने के लिए अलफ़ाज़ न मिलें तो यह

भी सीरियस नफ़सियाती बीमारी की अलामत हो सकती है। यह अल-ज़ाइमीर और पार्केंसन जैसी बीमारियों की, किसी सीरियस इंफ़ेक्शन की या किसी और बीमारी की अलामत हो सकती है।

(10) शख़्सियत के मुताल्लिक़ बीमारियाँ (Personality Disorders)

ये वे बीमारियाँ हैं जिनमें मरीज़ बज़ाहिर किसी बीमारी या परेशानी में मुब्तला नहीं होता लेकिन उसकी शख़्सियत में कुछ ऐसी सीरियस कमी रह जाती है जिसकी वजह से मामूल की ज़िन्दगी उसके लिए मुश्किल हो जाती है या उसका रवैया उसके साथ रहनेवालों के लिए परेशान करनेवाला बन जाता है। समाज दुश्मनी (Antisocial Personality Disorder) लोगों को मुजरिमोंवाले कामों की तरफ़ माइल करती है। ऐसा आदमी न तो दूसरों के जज़बात समझ सकता है और न अपनी किसी ग़लती पर उसे कभी कोई अफ़सोस होता है।

कुछ बीमारियाँ में जैसे Borderline Personality Disorder में आदमी के जज़बात और दूसरे इनसानों से ताल्लुक़ात कमज़ोर (Unstable) हो जाते हैं। न मुहब्बत में जमाव रहता है न नफ़रत में। कुछ बीमारियाँ जैसे Dependence Disorder में लोग किसी दूसरे आदमी या लोगों पर हद से ज़्यादा निर्भर हो जाते हैं। हद से ज़्यादा मायूसी, हद से ज़्यादा ग़लत ख़यालात व रुझानात, बेएतिमादी वग़ैरा जैसे रुझानात भी नफ़सियाती बीमारियाँ हैं। आम सेहतमन्द लोगों में भी ये ख़ासियतें पाई जा सकती हैं, लेकिन जब ये ख़ासियतें एक ख़ास हद से बढ़ जाती हैं और उसके नतीजे में या तो मरीज़ की ज़िन्दगी अजीरन हो जाती है और वह मामूल की ज़िन्दगी गुज़ारने के लायक़ नहीं रहता या उसके साथ रहनेवालों की ज़िन्दगी अजीरन हो जाती है तो उसे बीमारी समझा जाता है और ऐसी सूरत में नफ़सियात के माहिर से मिलना ज़रूरी हो जाता है।

नफ़सियाती बीमारियों की वजहें

नफ़सियाती बीमारी की कोई एक वजह नहीं होती, बल्कि कई हयातियाती, जिस्मानी (Biological), नफ़सियाती और माहौलियाती वजहें

होती हैं। हर नफ़सियाती बीमारी की वजहें अलग होती हैं। हयातियाती वजहों में सबसे अहम जीनियाती वजहें हैं। यानी कुछ नफ़सियाती बीमारियाँ जीन के ज़रिए ख़ानदानी तौर पर भी एक-दूसरे में आ सकती हैं। किसी के ख़ानदान में अगर कोई नफ़सियाती तौर पर बीमार हो तो उस शख़्स को भी यह बीमारी होने के इमकानात ज़्यादा होते हैं। बीमारी फैलानेवाले कुछ बैक्टीरिया (Pathogens) भी नफ़सियाती बीमारियों की वजह बनते हैं। जिस्म को ख़ास तौर से सिर को लगनेवाली मार भी कुछ बीमारियाँ पैदा कर सकती हैं। हम्ल के दौरान पेश आनेवाले मसले आइंन्दा जनीन (शिशु) के लिए दूसरी बीमारियों की तरह नफ़सियाती बीमारियों की भी वजह बनते हैं। अलकोहल, नशीली चीज़ें और कुछ दवाओं और कीमियाई चीज़ों का ग़लत या ज़्यादा इस्तेमाल भी ऐसे मसले पैदा कर सकता है। माहौलियाती मसलों में भी कभी-कभार ग़ैर-मुतवाज़िन ग़िज़ा की वजह से या ऐसे माहौल में रहने से जिसमें मनफ़ी (नकारात्मक) रुझानात ज़्यादा पाए जाते हों, इस क़िस्म की बीमारी पैदा होती है। कुछ ज़हरीली चीज़ों का खाने-पीने में शामिल हो जाना, सदमे, हादिसे, नाकामियाँ, ग़रीबी, जंग, झगड़े, तनाव-भरी ज़िन्दगी वग़ैरा जैसे मामले भी नफ़सियाती मसलों की वजह बनते हैं।

एन॰एल॰पी॰ के माहिरों के नज़दीक इन नफ़सियाती मसलों की अस्ल वजह हमारा लाशुऊर होता है। हमारी ज़िन्दगी के क़िस्से व हादिसे हमारे लाशुऊर में महफ़ूज़ होते जाते हैं। उनके नतीजे में दुनिया और दुनिया के हालात के देखने का हमारा अपना ज़ाविया बनता है। लाशुऊर में महफ़ूज़ कुछ तस्वीरें हमारे लिए मसले पैदा करती रहती हैं। यही अकसर नफ़सियाती मसले की जड़ है। हमने ज़िन्दगी में कोई हादिसा देखा है तो कुछ दिनों बाद हम उसे भूल जाते हैं। शुऊरी तौर पर न वह हादिसा याद रहता है और न उसकी तफ़सीलात। लेकिन लाशुऊर में महफ़ूज़ उसकी तस्वीर हमको नफ़सियाती उलझनों और बीमारियों में गिरफ़्तार कर सकती है। एन॰एल॰पी॰ तकनीकों के ज़रिए से लाशुऊर की दोबारा प्रोग्रामिंग की जाती है। और ऐसे मसले पैदा करनेवाली तस्वीरों और यादों से लाशुऊर को साफ़ किया जाता है जिसके नतीजे में बीमारी से आदमी को नजात मिलती है।

कैरियर काउंसलिंग

नौउम्री (Adolescence) के दौर में एक अहम चैलेंज अपने कैरियर को चुनने के सिलसिले में सामने आता है। स्कूल में तो मज़मूनों (Subjects) वग़ैरा के बारे में फ़ैसला स्कूल ही करता है लेकिन कॉलेज में जाने से पहले लड़के या लड़की को ख़ुद फ़ैसला करना पड़ता है कि वह किन मज़मूनों (Subjects) में अपनी पढ़ाई जारी रखे और आख़िर में अपनी अमली ज़िन्दगी के लिए क्या पेशा इख़्तियार करे। बढ़ते हुए कम्पटीशन की वजह से अब यह फ़ैसला स्कूली तालीम के आख़िरी मरहले यानी सातवीं या आठवीं क्लास में करना पड़ता है, ताकि मुताल्लिक़ कोर्स में दाख़िले के लिए ज़रूरी तैयारी की जा सके। माँ-बाप और टीचर्ज़ इस फ़ैसले में बच्चे की मदद करते हैं लेकिन अस्ल में यह फ़ैसला बच्चों को ख़ुद ही करना पड़ता है। और उनको यह फ़ैसला उस वक़्त करना होता है जब उन्हें कैरियर के अलग-अलग चुनाव (Choices) और पेशों के बारे में ज़्यादा मालूमात नहीं होती हैं। यह फ़ैसला तालिबे-इल्म (Student) की ज़िन्दगी में बहुत अहमियत रखता है। उसी पर उसका भविष्य निर्भर होता है। एक सही कैरियर का चुनाव तालिबे-इल्म के लिए तरक़्क़ी के दरवाज़े खोल देता है तो एक ग़लत चुनाव अच्छे ख़ासे ज़हीन तालिबे-इल्म की ज़िन्दगी बरबाद करके रख सकता है। पहले कैरियर के चुनाव महदूद थे। ज़हीन स्टूडेन्ट मेडिकल और इंजीनियरिंग को तरजीह देते थे। इसमें दाख़िला न मिले तो आर्ट्स या साइंस की तालीम हासिल करके टीचिंग या अकाउंट्स क्लर्क वग़ैरा के पेशों से लोग जुड़ जाते थे। अब ऐसा नहीं है। अब कैरियर के बेशुमार मौक़े मौजूद हैं और हर मैदान में तरक़्क़ी और आला दरजे के मौक़े हासिल हैं। इसलिए यह बहुत ज़रूरी हो गया है कि स्टूडेन्ट की सही रहनुमाई की जाए और सही कैरियर के चुनाव में उसकी मदद की जाए।

कैरियर काउंसलिंग की अहमियत

कैरियर काउंसलिंग के ज़रिए से स्कूली बच्चों की सही रहनुमाई की जाती है और कॉलेज की तालीम के सिलसिले में मुनासिब सब्जेक्ट के चुनाव में उनकी मदद की जाती है। बच्चे अपने बचपन में जिन तजरिबों से गुज़रते हैं, उनकी बुनियाद पर वक़्ती जज़बात की बुनियाद पर उनकी पसन्द और नापसन्द तय हो जाती है। बहुत-से लड़के मशीनों और गाड़ियों से मुतास्सिर होते हैं तो वे कहने लगते हैं कि इंजीनियर बनेंगे। किसी को फ़ायर इंजन में काम करनेवाले लोगों की बहादुरी और एडवेंचर मुतास्सिर करता है तो वे फ़ायर फ़ाइटर बनना चाहते हैं। किसी ने जंगली जानवरों के बारे में फ़िल्में या कार्टून देख रखे हैं तो वे माहिरे-हयातियात (Zoologist) बनना चाहता है। किसी बच्चे के घर पर अपने ख़ानदान के किसी आदमी का गहरा असर होता है और वह उसका पेशा अपनाना चाहता है। हर बच्चा ऐसे बयानों के ज़रिए से अपनी पसन्द का इज़हार करता है लेकिन इन बयानों के पीछे कोई सोची-समझी और गहरी ख़ाहिश या आरज़ू नहीं होती, बल्कि ख़ास मुशाहदात और तास्सुरात की बुनियाद पर पैदा होनेवाली वक़्ती चीज़ होती है। इन बयानों से बच्चे के हक़ीक़ी शौक़ या सलाहियत का अन्दाज़ा नहीं लगाया जा सकता। बहुत-से बच्चे अपने माँ-बाप के दबाव में कैरियर का चुनाव करते हैं। माँ-बाप अपनी अधूरी ख़ाहिशों को बच्चों के ज़रिए से पूरा करना चाहते हैं। या फिर ऐसे पेशों से बच्चों को जोड़ना चाहते हैं जिनमें ज़्यादा माली फ़ायदे हैं या जिनसे समाज ने ज़्यादा इज़्ज़त जोड़ रखी है। ये सब कैरियर के चुनाव के निहायत ग़लत तरीक़े हैं। अकसर नौजवानों के नाकाम कैरियर में ऐसे ग़लत तरीक़ों से किए जानेवाले चुनाव का बड़ा रोल होता है।

कैरियर गाइडेंस कैसे मददगार साबित होता है?

कैरियर काउंसलर के पास कुछ साइंटिफ़िक तरीक़े होते हैं जिनके ज़रिए से वह बच्चे की अन्दरूनी परेशानियों और उलझनों (Conflicts and Confusions) को दूर करता है और वे सारी मालूमात देता है जिसकी रौशनी में बच्चा ख़ुद इस क़ाबिल हो जाता है कि वह सही और ग़लत के दरमियान

फ़र्क़ करे और अपने लिए कोई मज़बूत फ़ैसला कर सके। जब हम कोई काम दिल से पसन्द करते हैं तो फिर वह कितना ही मुश्किल काम हो या उसको पूरा करने में कितनी ही रुकावटें आएँ, वे कर गुज़रते हैं। यही बात काउंसलर बच्चों के दिमाग़ में बिठाता है। काउंसलर अपने सवालात और अपने साइंसी तरीक़े के ज़रिए से बच्चे के लाशुऊर को समझने की कोशिश करता है और उसकी हक़ीक़ी ख़ाहिश और हक़ीक़ी मक़सद तक पहुँचने में उसकी मदद करता है।

कैरियर के चुनाव में नीचे दी गई बातें असरन्दाज़ होती हैं। एक अच्छा काउंसलर इन सब बातों के बारे में ज़रूरी मालूमात इकट्ठी करता है और उसको बुनियाद बनाकर कैरियर से मुताल्लिक़ मुनासिब फ़ैसले तक पहुँचने में स्टूडेन्ट की मदद करता है।

हक़ीक़ी दिलचस्पी (Core Interest)

स्टूडेन्ट की अस्ल दिलचस्पी वह है जो उम्र की शुरुआत से उसके ज़ेहन पर हावी है और जिसके ताल्लुक़ से यह इमकान है कि बाक़ी ज़िन्दगी में भी वही उसकी दिलचस्पी का मैदान रहेगा। बच्चे जो कुछ बोलते हैं, उससे उनकी हक़ीक़ी दिलचस्पी का इज़हार नहीं हो पाता है। आज सुबह उन्होंने टीवी पर किसी को ख़लाई (Space) मिशन पर जाते देखा तो कहने लगेंगे कि उनको ख़लाबाज़ (Astronaut) बनना है। लेकिन यह उनका हक़ीक़ी इंट्रेस्ट नहीं है। यह वक़्ती असर की वजह से है, कल ख़त्म हो जाएगा। क्रिकेट का वर्ल्ड कप चल रहा हो तो हर बच्चा क्रिकेटर बनना चाहेगा। वर्ल्ड कप ख़त्म होते ही यह शौक़ ख़त्म हो जाएगा। इसलिए बच्चों की हक़ीक़ी और पाएदार इंट्रेस्ट मालूम करने के लिए यह काफ़ी नहीं है कि आप उनसे पूछ लें और उनके जवाब को उनका इंट्रेस्ट मान लें, इसके लिए गहरे साइंसी तजज़िये (Analysis) की ज़रूरत होती है।

ख़ानदानी असरात (Family Influence)

बच्चों के लाशुऊर को बनाने में उनके ख़ानदानी हालात का बहुत अहम रोल होता है। अपने बाप और दूसरे क़रीबी लोगों को जो कुछ वे करते हुए

बचपन से देखते हैं, उससे उस काम का शौक़ और उसकी बुनियादी सलाहियत, उनका लाशुऊर बचपन से ही पैदा करना शुरू कर देता है। इसलिए अच्छे ताजिरों के बच्चे अच्छे ताजिर होते हैं। जिन .ख़ानदानों में इल्मी ज़ौक़ पाया जाता है वहाँ बच्चों में बचपन से ही पढ़ने-लिखने का शौक़ पैदा हो जाता है। इसलिए काउंसलर .ख़ानदानी हालात भी मालूम करता है।

लियाक़त (Aptitude)

किसी काम को अंजाम देने की क़ुदरती सलाहियत को लियाक़त कहते हैं। बचपन के तजरिबों, ज़ेहन की फ़ितरी बनावट और दूसरी बातों की वजह से बच्चे के अन्दर शुरू ही से .ख़ास लियाक़तें पैदा हो जाती हैं। किसी बच्चे का ज़ेहन मशीनी होता है तो किसी का तख़लीक़ी, कोई .ख़ुशमिज़ाज और मिलनसार होता है तो कोई संजीदा और गहरा मुफ़क्किर होता है। इन फ़ितरी लियाक़तों का लिहाज़ करते हुए काउंसलर मुनासिब कैरियर का चुनाव करने में मदद करता है।

शख़्सियत (Personality)

बच्चे की शख़्सियत और उसकी शख़्सी .ख़ासियतें भी कैरियर के चुनाव में अहमियत रखती है। कुछ पेशों में .ख़ास जिस्मानी सलाहियतें भी ज़रूरी होती हैं। इनके अलावा मिज़ाज, रहन-सहन से मुताल्लिक़ .ख़ासियतें, ज़िहानत का लेवल, जज़बात वग़ैरा ये सब बातें कैरियर पर असरन्दाज़ होती हैं।

कैरियर काउंसलिंग का तरीक़ा

काउंसलिंग का तरीक़ा यह है कि काउंसलर स्टूडेन्ट से अकेले में बात करता है और ग्रुप सेशन में उसे शरीक कराता है। आमतौर पर एक अच्छे काउंसलिंग सेशन में बच्चों को अलग-अलग कैरियर चुनाव (Career Choices) और उनकी .ख़ासियतें और तफ़सीलात से वाक़िफ़ कराया जाता है। ग्रुप सेशन में बच्चों को बहुत सारे सवालनामे और वर्कशीट दी जाती हैं। बच्चे जो जवाबात लिखते हैं उनके ज़रिए से उनकी सलाहियत, दिलचस्पी, लियाक़त और रुझान का पता चलता है। कुछ टेस्टों से उनकी ज़िहानत, जज़बाती ज़िहानत, मिज़ाज और रुझान का भी अन्दाज़ा होता है। इन

सबकी बुनियाद पर काउंसलर बच्चे की रिपोर्ट तैयार करता है। उस रिपोर्ट से अन्दाज़ा होता है कि किन शोबों (विभागों) में बच्चा ज़्यादा कामयाब हो सकता है। बहुत-से काउंसलर इसके बाद बच्चे से अकेले मुलाक़ात (One to One Session) करते हैं। कुछ काउंसलर इस मुलाक़ात में या उसके हिस्से में माँ-बाप को भी शामिल करते हैं और मुनासिब कैरियर के चुनाव में उनकी मदद करते हैं।

कैरियर काउंसलिंग और नफ़सियाती मामले और मसले

एक अच्छा काउंसलिंग सेशन वह होता है जिसमें सिर्फ़ कैरियर के बारे में मालूमात न दी जाएँ, बल्कि मुनासिब कैरियर के चुनाव, उस कैरियर से मुताल्लिक़ मक़सद (Goals) का तय करना और उन मक़सदों को हासिल करने के लिए बच्चे को शुऊरी और नफ़सियाती तौर पर तैयार किया जाए। इसके लिए अच्छे कैरियर कोच का चुनाव करना चाहिए।

एक अच्छा कैरियर कोच सबसे पहले बच्चे को ख़ुद को समझने में मदद करता है। ख़ुद को समझने से मुराद अपनी शख़्सियत की ख़ूबियों और कमियों को समझना, अपनी लियाक़तों को समझना, अपनी कमज़ोरियों को समझना, वग़ैरा सब कुछ है।

इनसानों के लाशुऊर में कुछ अक़ीदे (Limiting Beliefs) हमारी कमज़ोरी बन जाते हैं। मिसाल के तौर पर हमारे समाज में यह बात मशहूर है कि गणित (Maths) लड़कियों के बस की बात नहीं है, या लड़कियाँ ऐसे पेशे अपना नहीं सकतीं जो मेहनतवाले होते हैं। या लड़के आर्ट्स और क्राफ़्ट या काउंसलिंग के शोबे में नहीं आ सकते, या खाना पकाना सिर्फ़ औरतों का काम है या सिविल सर्विस में मुसलमानों के साथ हमेशा नाइनसाफ़ी होती है, इसलिए वहाँ जाना मुमकिन नहीं है या किसी यूनिवर्सिटी में दाख़िले के लिए कान्वेंट के माहौल का अंग्रेज़ी लब व लहजा और ऊँचे तबक़े का ख़ानदानी बैकग्राउंड ज़रूरी है, वग़ैरा। ऐसे अक़ीदे हमारे पैरों की बेड़ियाँ बन जाते हैं। कभी-कभी ख़ुद हमको पता नहीं होता लेकिन हमारे लाशुऊर में ऐसा कोई अक़ीदा बसेरा किए हुए होता है और हम बग़ैर किसी वजह से किसी कैरियर

के सिलसिले में हिचकिचाहट, बेएतिमादी या तज़बज़ुब (Confusion) के शिकार हो जाते हैं। अगर कोई लड़का इन अक़ीदों से पीछा छुड़ाए तो हो सकता है एक अच्छा आर्टिस्ट बने या किसी फ़ाइव स्टार होटल में मशहूर बावर्ची बन जाए या किसी अन्तर्राष्ट्रीय यूनिवर्सिटी में दाख़िला ले ले। एक अच्छा कोच ऐसे अक़ीदों (Limiting Beliefs) से पीछा छुड़ाने में भी बच्चों की मदद करता है।

एक अच्छा कोच नामुनासिब रवैयों को भी बदलने में मदद करता है। बच्चे के अन्दर मेहनत की आदत नहीं है, पढ़ाई के सिलसिले में तरग़ीब (Motivation) की कमी है, एतिमाद (Confidence) की कमी है, एक तरफ़ ध्यान लगाने (Concentration) की कमी है, याद्दाश्त अच्छी नहीं है, लाउबालीपन और ग़ैर-ज़िम्मेदाराना रवैया है, तो ये सब रवैये अच्छी तालीम में रुकावट बनते हैं। अच्छा कोच इन रवैयों को पहचानता भी है और उनको बदलने में स्टूडेंट की मदद करता है।

इसी तरह एक अच्छा कोच उन अन्दरूनी ज़रिओं को अमल में लाने में स्टूडेन्ट की मदद करता है जिनसे स्टूडेन्ट नावाक़िफ़ होता है या उन्हें इस्तेमाल नहीं कर पाता। बहुत-से स्टूडेन्ट ग़ैर-मामूली तजज़ियाती सलाहियत (Analytical Abilities) के मालिक होते हैं लेकिन चूँकि स्कूल में ज़ोर हाफ़िज़े पर था और चीज़ों को याद रखना उनके लिए मुश्किल था इसलिए स्कूल में वे कम-अक़्ल और औसत दरजे के स्टूडेन्ट के तौर पर मशहूर हो गए, इस शोहरत की वजह से उनका एतिमाद ज़ख़्मी हो गया। अच्छे कोच की मदद से वे अपनी इस अस्ल ताक़त को ढूँढ़ निकालते हैं और तेज़ी से कामयाबी की ऊँचाइयों तक पहुँच जाते हैं।

इन सबकी मदद से एक अच्छा कोच स्टूडेन्ट को अपना पर्सनल गोल सेट करने में मदद करता है और फिर उसी गोल को हासिल करने में उसकी रहनुमाई और मदद करता है।

कोशिश कीजिए कि जदीद (आधुनिक) नफ़सियात और एन॰एल॰पी॰ वग़ैरा जैसी तकनीकों से वाक़िफ़ ख़ुशमिज़ाज, ज़हीन, बेहतर सोच रखनेवाला कोच आपके बच्चे को हासिल हो।

में ग्रेजुएशन में वे ऐसा कोर्स चुनते हैं जिसमें गणितशास्त्र की ज़रूरत होती है। अब तो मआशियात जैसे मज़मून में भी गणितशास्त्र की ज़रूरत पेश आती है। क़ानून, बिज़नेस एडमिनिस्ट्रेशन, कॉमर्स वग़ैरा जैसे मैदानों में अगरचे गणितशास्त्र के पसेमंज़र के बग़ैर भी दाख़िला मिल जाता है लेकिन क़दम-क़दम पर परेशानियों का सामना करना पड़ता है। माँ-बाप के लिए यह ज़रूरी है कि वे इस बात का ख़याल रखें कि बच्चे भविष्य के लिए अपने रास्ते खुले रखें।

बच्चा किसी ख़ास विषय में क्यों दिलचस्पी ले रहा है, यह जानने की कोशिश कीजिए। अकसर ऐसा होता है कि किसी ख़ास विषय में बच्चा कमज़ोर होता है लेकिन वह उस विषय से मुताल्लिक़ पेशे में दिलचस्पी लेता है। यह जानने की कोशिश कीजिए कि कहीं वह अपने किसी दोस्त वग़ैरा के कहने पर तो ऐसा नहीं कर रहा है। नौजवान बच्चे अकसर अपने दोस्तों से बहुत मुतास्सिर होते हैं। अगर वह किसी ऐसी ही वक़्ती वजहों की बुनियाद पर अपनी दिलचस्पी ज़ाहिर कर रहा है तो उसको समझाइए कि कैरियर में लियाक़त की क्या अहमियत होती है।

काउंसलर से रहनुमाई ज़रूर हासिल कीजिए लेकिन उनपर पूरी तरह से निर्भर न रहें। काउंसलर से भी पूरा फ़ायदा उसी वक़्त मुमकिन है जब माँ-बाप और बच्चे भी बेदार व चौकस हों और ज़रूरी मालूमात और तैयारी के साथ उससे मिलें।

कैरियर काउंसलिंग के दौरान बच्चे का रोल

बच्चा जब काउंसलिंग के लिए जाए तो खुले दिल और ज़ेहन से जाए और काउंसलिंग पर उसका पूरी तरह ध्यान हो ताकि वह हर शुब्हे को दूर कर सके। बच्चे को अपने मआशी व समाजी हालत का भी अच्छी तरह शुऊर हो। काउंसलर से वह यह पूछने के लिए भी तैयार हो कि उसके पसन्दीदा कोर्स का भविष्य क्या है और आनेवाले दस-बीस सालों में उसकी अहमियत बढ़ेगी या घटेगी। बच्चे के पसन्दीदा कैरियर में मौक़ों के अलावा रिस्क क्या हैं, यह भी वह मालूम करे।

बेहतर है कि माँ-बाप काउंसलर के पास जाने से पहले बच्चे से तफ़सीली बात करें। काउंसलिंग के अमल के बारे में उसको बताएँ। लियाक़त और दिलचस्पी में जो फ़र्क़ है, उससे उसे बाख़बर करें। काउंसलर से पूछने के लिए सवालों की सूची तैयार करें। काउंसलर के पास जाने से पहले कैरियर के अलग-अलग विकल्पों के बारे में ज़रूरी मालूमात बच्चा हासिल कर ले ताकि वह ज़्यादा शुऊरी तौर पर और बालिग़-नज़री के साथ काउंसलर से बात कर सके और उसकी काउंसलिंग से फ़ायदा उठा सके।

★★★